भारत –अमरीका सम्बन्ध – नव अवबोधन

(1990 से वर्तमान तक)

Indo – American Relations-New Perceptions

(1990 to Present day)

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि के

लिए प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

निर्देशक :

डा0 राजेन्द्र कुमार

रीडर राजनीति विभाग

दयानन्द वैदिक महाविद्यालय, उरई

प्रस्तुति

इफ्तिख़ार हसन

(एम0ए0, नेट)
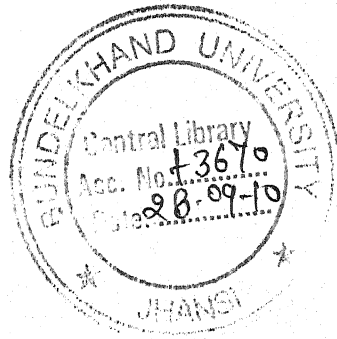
वरिष्ठ प्रवक्ता राजनीति विज्ञान

वी. जी. पी. जी. कालेज

दिबियापुर–औरैया।

शोध केन्द्र :– राजनीति विज्ञान विभाग

दयानन्द वैदिक महाविद्यालय, उरई 285 001(उ0प्र0)
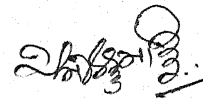
प्रमाण –पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि इफ्तिख़ार हसन पुत्र श्री अब्दुल गफूर ने बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी के राजनीति शास्त्र विषय में ''डॉक्टर ऑफ फिलासफी'' उपाधि हेतु '' भारत – अमरीका सम्बन्ध नव अवबोधन (1990 से आज तक) विषय पर मेरे निर्देशन में शोध कार्य किया है। इनका ये कार्य बुन्देल खण्ड विश्वविद्यालय की पर नियमावली के अर्न्तगत निर्धारित अवधि (200 दिन) के अनुसार सम्पादित हुआ है। वे बुन्देल खण्ड विश्वविद्यालय की शोध परीक्षा की नियमावली के सभी उपबन्धों की पूर्ति करते है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध उनका पूर्णतया मौलिक प्रयास है। इस शोध प्रबन्ध का कोई अंश अथवा पूर्ण शोध प्रबन्ध किसी अन्य विश्वविद्यालय की शोध उपाधि के विचारार्थ प्रस्तुत नही किया गया है।

स्थान : उरई

दिनांक :

डॉ0 राजेन्द्र कुमार
शोध निदेशक
राजनीतिशास्त्र विभाग
डी0वी0 कॉलेज उरई

प्राक्कथन

भारत और अमेरिका विश्व के दो विशाल प्रजातान्त्रिक देश है। दोनो देश उपनिवेशवादी ताकतों से लम्बे संघर्ष के बाद स्वतन्त्र हुए। दोनों देशों को मानवीय स्वतन्त्रता, विश्व शान्ति, मानवीय अधिकारों व अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था के पोषक के रूप में देखा जाता है। इन बुनियोदी समानताओं के बावजूद उनके बीच समय – समय पर ऐसे अनेक तनाव बिन्दु उभरे जिस कारण उनमें पूर्व में घनिष्ठ मैत्रीं सम्बन्धों की स्थापना का मार्ग कभी प्रशस्त नही हो पाया दोंनो के सम्बन्ध काफी उतार चढाव के रहे है। पकिस्तान को समय – समय पर दी गयी शस्त्र सहायता, भारत की यूरेनियम सप्लाई रोकना बांगला देख मुक्ति अभियान के दौरान अमरीका द्वारा पाकिस्तान का पक्ष लेना हिन्द महासागर को शान्ति क्षेत्र बनाने, परमाणु अप्रसार संघ, कम्पूचिया व अफगान संकट, काश्मीर समस्या, ईराक संकट आदि ऐस अनेक मसलें है जिनके कारण दोनों देशों के सम्बन्ध कटुता की ओर अग्रसर हुए। यद्यपि दोनों देशों का नेतृत्व प्रारम्भ से ही सम्बन्ध सुधार की दिशा में प्रयत्नशील रहें है, किन्तु उन्हे इसमें आंशिक सहायता मिली।

शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद विश्व वातावरण में आये परिवर्तन ने दोनों देशों को अपने द्विपक्षीय सम्बन्धो को पुनः मूल्यांकन करने का अवसर दिया है। अमरीका ने भारत द्वारा किये गये आर्थिक उदारीकरण उपायों का गर्भजोशी से स्वागत किया है। क्योकि इससे अमरीकी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को इकतरफा बहुप्रतीक्षित लाभ होगा। इस विशाल बाजार का व देश के प्राकृतिक संसाधनों का खुला दोहन कर सकेगी।

भारत अमरीका सम्बन्ध राजनीति विज्ञान के अध्ययनकर्ता के लिए न केवल एक महत्वपूर्ण विषय है। बल्कि वह एक रोचक विषय भी है। यह तो असामान राष्ट्रो के बीच का सम्बन्ध है। जिनमें से एक महाशक्ति है और दूसरा विकासशील राष्ट्र है जो 21 वीं शताब्दी में एक महाशक्ति के रूप उभर सकता है। भारत दक्षिण एशिया की प्रमुख शक्ति है और दक्षिण एशिया ऐसा क्षेत्र है। जिसके दांये–बायें दो विस्फोटक शील एशियाई क्षेत्र है जिनमें अमेरिका अपने सामरिक हितों को देखता है। अतएव अमेरिका का दक्षिण एशिया में रूचि लेना और भारत के साथ सम्बन्ध बनाये रहना स्वाभाविक ही है। सोवियत संघ के विघटन के बाद मध्य एशिया भी अमेरिका के आकर्षण का केन्द्र बनने लगा है। मध्य एशियाई राष्ट्रों

के साथ भारत के सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण है यह एक ऐसा तथ्य है जो शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद अमेरिका द्वारा भारत के साथ सम्बन्ध सुधारने की प्रक्रिया को तर्कसंगत बनाता है।

भारत – अमेरिका सम्बन्धों की प्रकृति असमान सम्बन्धों की है। सम्बन्धों के इस समीकरण में अमेरिका एक वैश्विक शक्ति अथवा महाशक्ति है और भारत एक क्षेत्रीय शक्ति अथवा मध्यम श्रेणी की शक्ति है। दोनों राष्ट्रों को अपनी स्थिति का एहसास है और वे अपनी शक्ति से भली भांति परिचित है और उन्हे अपनी सीमाओ का भी भान है। महाशक्ति के रूप में अपनी विशिष्ट स्थिति को समझते हुए अमरीका भारत के साथ अपने सम्बन्धों को प्रगाढ़ बनाने के लिए तत्पर है।

स्वतन्त्रता, शान्ति एवं लोकतंत्र की इस शोषक मुहिम में ब्लैकविल भारत को अपना कनिष्ठ सहयोगी बनाना चाहते हैं। वे कहते है कि "अमरीका की प्रभुत्व को चुनौती देने वाला नजदीक भविष्य में एशिया में उत्पन्न नहीं होगा। " अर्थ यह हुआ कि वे भारत को अमरीका के लिए चुनौती के रूप में नहीं देखते हैं। भारत की स्थिति अमरीका के नीचे ही है फिर भी ब्लैकविल की दृष्टि में भारत तथा अमेरिका स्वाभाविक रूप से सहयोगी हैं।"

वर्तमान समस्याओं के परिपेक्ष्य में भारत एवं अमरीका के सम्बन्धों में प्रगाढ़ता की अतीव आवश्यकता है। जहां एक ओर आंतकवाद पूरे विश्व को व्यथित किए हैं। भारत अपने अविश्वसनीय साथियों से घिरा हुआ है। भारत के लिए अमरीका तथा अमरीका के लिए भारत की मित्रता की आवश्यकता है। प्रस्तुत शोध इन्हीं सम्बन्धों की समस्याओं एवं आवश्यकताओं को दृष्टि में रखकर प्रस्तुत किया गया है।

विश्व लोकतान्त्रिक परम्पराओं मानवाधिकारों के संरक्षण में भारत अमरीका सम्बन्ध एक मील का पत्थर साबित हो सकते हैं। यह अध्ययन दोनों में सामरिक, राजनीतिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में सहयोग की महत्वपूर्ण भूमिका का आधार प्रस्तुत करता है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को सात अध्यायों में विभक्त किया गया है उपरोक्त सात अध्यायों में भारत अमरीका सम्बन्धों के प्रमुख आयामों – राजनीतिक, सामरिक, आर्थिक, प्रावधिक, वैज्ञानिक, औद्योगिक, कूटनीतिज्ञ और सांस्कृतिक का विवेचन किया गया है राज्यरूप निदर्शन (नेशन स्टेट पैराडाइम) को विश्लेषणात्मक आधार भूत ढांचे के रूप में प्रयोग किया गया है।
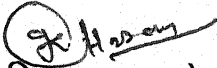
यह शोध पाक परवरदिगार की परम कृपा, सूफी परम्परा के महान संत हजरत जिन्दा शाह मदार पाक के शुभ आशीर्वाद तथा प्रारम्भ से अन्त तक के लिए मैं अपने श्रद्वेय परिवेक्षक डा0 राजेन्द्र कुमार, रीडर, राजनीति विज्ञान विभाग डी0 वी0 कालेज उरई का ऋणी हूँ जिन्होने न केवल इस शोध विषय वरन मेरे समग्र व्यक्तित्व को विकसित होने में सदैव सहायता की है। उन्हीं की प्रेरणा एवं प्रयासों से इस शोध कार्य को सम्पूर्ण करने में सफल हो सका हूँ। अतः मैं उनका हृदय से आभारी एवं ऋणी हूँ। मैं श्रद्वेया डा0 जय श्री पुरवार विभागाध्यक्षा एवं रीडर, राजनीति विज्ञान डी0 वी0 सी0 उरई का विशेष आभारी हूँ जिन्होंने सदैव मेरे ज्ञानार्जन में शुभाशीष दिया। मैं अपने गुरूओं सर्वश्री डा0 रिपूसूदन सिंह व डा0 आदित्य सक्सेना का भी आभारी हूँ।

मैं अपनी पूजनीया स्व0 माँ एवं आदरणीय पिता का आभारी हूँ जिनके सद प्रयासों एवं आशीर्वाद से मैं शोध कार्य के योग्य बन सका। मैं अपनी धर्मपत्नी श्रीमती रोशनआरा एवं अपनी दोनों पुत्रिओं सालेहा एवं सादिया का भी आभारी हूँ जिन्होने समय–समय पर शोधकार्य को पूरा करने में सहयोग दिया।

इस शोध कार्य को करना नितान्त असम्भव होता यदि मुझे जवाहर लाल नेहरू विश्व विद्यालय नई दिल्ली, भारतीय विदेश मंत्रालय, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, अमेरिकन सेन्टर लाइब्रेरी, सप्रू हाउस व केन्द्रीय लाइब्रेरी नई दिल्ली द्वारा मेरे शोध कार्य के कदम–कदम पर सहायता एवं आंकडे उपलब्ध नहीं करवाये जाते। मैं उपरोक्त संस्थाओं के सभी महानुभावों के प्रति अपनी पूर्ण निष्ठा के साथ आभार प्रकट करता हूँ।

मैं प्रकाशन कार्य में सहयोग के लिए यू0 एम0 सी0 ए0 के डाएरेक्टर श्री सुनील शर्मा का आभारी हूँ जिन्होंने इस शोध कार्य को पाण्डुलिपि का रूप दिया।

निवेदक

(इफ्तिखार हसन)

(एम0 ए0, नेट)
वरिष्ठ प्रवक्ता राजनीति विज्ञान
वी.जी.पी.जी. कालेज
दिबियापुर–औरैया।

भारत – अमरीका सम्बन्ध–नव अवबोधन

(1990 से वर्तमान तक)

–: अनुक्रम :–

भूमिका

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में एक अध्ययन

भारत और अमेरिका विश्व के दो विशाल लोकतान्त्रिक देश है । दोनों देशों को मानवीय स्वतन्त्रता, विश्व शान्ति, मानवीय अधिकारों व अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था के पोषक के रुप में देखा जाता है। इन बुनियादी समानताओं के बाबजूद उनके बीच समय समय पर ऐसे अनेक तनाव बिन्दु उभरे जिस कारण उनमें पूर्व में घनिष्ठ मैत्री सम्बन्धों की स्थापना का मार्ग कभी प्रशस्त नहीं हो पाया । दोनों के पारस्परिक सम्बन्ध काफी उतार चढाव के रहें है।

भारत अमेरिका सम्बन्धों को दो मौलिक परन्तु विरोधी प्रेरणा श्रोंतों की गत्यात्मक अन्तःक्रिया के सन्दर्भ में समझना चाहिये। एक ओर तो भारत की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में सशक्त अभिकर्ता के रूप में उदित होने की सतत् महत्वाकांक्षा है। जबकि उसके लायक सामर्थ्य उसमें नहीं है और अमेरिका का अपनी सुरक्षा और शक्ति प्रसार के लिये दूसरे राष्ट्रों का उपयोग करने का लक्ष्य रहा है। भारत अमेरिकी पारस्परिक सम्बन्धों को समझने की कुन्जी इसी में मिलेगी, न कि उस व्यक्तिगत सहानुभूति या आक्रोश में जो भारत के प्रति अमेरिकी नेता विशेष के हृदय में अथवा किसी राजदूत के व्यक्तित्व में।

भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का अध्ययन एक ऐसा दुःखद एवं सुखद प्रसंग है जिसे कि परम्परागत मुहावरे में अभिव्यक्ति करना कठिन है। दोनों देशों के बीच सम्बन्धों का रेखाचित्र मित्रता की चाह कटुता, तनाव, अलगाव, और अविश्वास के दायरे में निरन्तर चढ़ता उतरता रहा है। सहजता और मित्रता के क्षण तो वर्षा ऋतु में बादलों से घिरे आकाश में यदा कदा दृष्यमान प्रकाश की किरण की तरह क्षणिक ही रहे हैं। सहज सम्बन्ध बनाने की चाह के आधार भावनाओं और मनोकामनाओं तक ही सीमित रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय महत्व के प्रसंगों पर विचार और व्यवहार में मतभेद ही उजागर हुआ है। स्वेज नहर और कांगो विवाद के मसलों के अतिरिक्त समान दृष्टिकोण तथा सहयोग का सर्वथा अभाव देखा गया हैं। समय के साथ दोनों देशों में मतभेद के दायरे अधिक गहरे होते गये। इसी तथ्य की ओर संकेत करते हुये डा0 बलदेव राज नायर अपनी पुस्तक ''अमेरिका और भारत : संघर्ष की जड़ें'' में लिखते है कि अमरीकी विदेश नीति संसार के प्रत्येक देश को प्रभावित करती है। इसके क्रियान्वयन में मित्रों और सहयोगी राष्ट्रों के सम्बन्ध में संयुक्त राज्य

अमेरिका काफी दृढ़ और शत्रुओं के साथ निर्मल तथा क्रूर रहा है। तटस्थ राष्ट्रों के प्रति उसका रवैया घृणास्पद और कठोर रहा है।

भारत को अक्सर इस विश्वव्यापी रणनीति का आक्रोश सहना पड़ा भारत में अमरीकी विदेश नीति का प्रबल विरोध हुआ है क्योंकि भारतीय अपने को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में एक शक्ति मानते है।''[2]

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में भारत का सन्दर्भ बिन्दु पाकिस्तान बाग्लादेश जैसे देश नही, अपितु बड़ी शक्तियां है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में भारत की महत्वाकांक्षा सामर्थ्य कर्त्ता बनने की अर्थात एक ऐसी स्वतन्त्र शक्ति की जो अप्रिय निर्णयों का प्रतिरोध कर सके, अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति संरचना का अंग बनने की तथा प्रमुख विश्व शक्तियां के साथ विश्व को प्रभावित करने वाले निर्णयों में पूरा भागीदार बनने की महत्वाकांक्षा रही है। जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका की सुनिश्चित नीति रही है विशेषतः द्वितीय विश्व युद्ध के बाद कि मित्र या विपक्षी कोई भी नया शक्ति केन्द्र न बनने पाये। उनका अस्तित्व ही अमेरिका के प्रभाव को घटा देगा और इस प्रकार अमेरिका के उन स्वार्थों और हितों को आघात लगेगा। जिनके साथ अमेरिका न अपनी अखण्डता एकातरफा समृद्धि और कल्याण जोड़ रखा है।[3]

शीतयुद्ध से पूर्व – भारत – अमेरिका सम्बन्ध

शीतयुद्ध से पूर्व भारत और अमेरिका में कोई विशेष सम्पर्क नहीं था क्योंकि ये दोनों देश बहुत दूर स्थित है। और फिर भारत में अंग्रेज शासक जान बूझकर भारत को दूसरे देशों के सम्पर्क में आने नहीं देना चाहते थें। अमेरिका स्वयं भी द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व पार्थक्यवादी नीति का अनुसरण करता आ रहा है। बहुत कम संख्या में अमरीकी यात्री भारत आते थे, क्योंकि एक तो अमेरिका को उस समय चीन और जापान को छोड़कर किसी एशियाई देश में रूचि नहीं थी, दूसरे भारत की गरीबी अशिक्षा अन्धविश्वास आदि को लेकर विचित्र कहानियां अमेरिका में प्रचलित थीं जैसे भारत सपेरों, जादूगारें और मदारियों का देश है आदि। यह सच है कि स्वतन्त्रता के पूर्व कुछ अमरीकी पत्रकार तथा लेखक भारत आये थे और स्वतन्त्रता आन्दोलन से जुड़े कुछ नेता लाला हरदयाल, सी एफ एण्ड्रूज तथा श्री मती सरोजनी नायडू, स्वामी विवेकानन्द आदि अमेरिका गये थे । अमेरिकी पत्रकारों तथा लेखकों ने भारत की गरीबी और पिछड़ेपन को चित्रित करने का प्रयास भी किया था। मिस मेयो द्वारा लिखित पुस्तक 'मदर इण्डिया' इसका प्रमाण है। तथापि सत्य यह है कि दोनों के सांस्कृतिक, सामाजिक सम्बन्ध नाम मात्र के थे। भारतीय विद्यार्थियों को भी अमेरिका में अध्ययन के लिये हतोत्साहित किया जाता था। संयुक्त राज्य अमेरिका के आप्रवास नियमों ने भारतीयों को नागरिक के रूप में अमेरिका में बसने पर प्रतिबन्ध लगा दिया था।

स्वामी विवेकानन्द और रामतीर्थ ने अमेरिका जाकर अपने भाषणों द्वारा भारतीय धर्म तथा संस्कृति के बारे में फैली अनेक भ्रान्तियों को दूर किया। 1893 में स्वामी विवेकानन्द अमेरिका गये। जहॉ शिकागो में उन्होने सर्वधर्म सम्मेलन में भाषण दिया। शिकागो सर्वधर्म सम्मेलन से पूर्व उनकी भेंट हावर्ड यूनीवर्सिटी के विख्यात प्रोफेसर जॉन हेनरी राइट से हुई। प्रो0 राइट ने स्वामी जी को सर्वधर्म सम्मेलन के सभापति के नाम एक परिचय पत्र दिया था। इस पत्र में डा0 जान हेनरी राइट ने यह लिखा था। ''यहॉ एक ऐसा व्यक्ति है जो अपने यहॉ के सारे विद्वान प्रोफेसरों की इकठ्ठी विद्वता से कहीं अधिक विद्वान है। विवेकानन्द का भाषण भारत की सार्वदेशिकता, सर्वधर्मसमभाव और विख्यात हृदयता से ओत प्रोत था जिसने वहाँ के हर श्रोता को मंत्र मुग्ध कर दिया।

प्रथम विश्व युद्ध के बाद भारत और अमेरिका एक दूसरे के सम्पर्क में आने लगे। भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन के कई नेता अमेरिका को लोकतन्त्र और स्वतन्त्रता का महान

समर्थक समझते थे। 1912 में लाला हरदयाल ने अमेरिका में गदरपार्टी की स्थापना कीं। 1917 में अमेरिका में निवास करने वाले कतिपय भारतीयों ने एक इण्डियन होमरुल लीग की स्थापना की। 1927 में कुछ भारतीयों ने इण्डिया लीग नामक एक दूसरी संस्था स्थापित की। 1943 में भारतीय स्वाधीनता राष्ट्रीय समिति की स्थापना वाशिंगटन में हुई थीं। 1929 में सी0 एफ0 एण्ड्रूज तथा श्री मती सरोजनी नायडू ने भारतीय समस्या के प्रति अमरीकी जनता से सहानुभूति प्राप्त करने के लिये अमेरिका का दौरा भी किया।

भारत अमेरिका को अब तक लोकतन्त्र और राष्ट्रीय आत्मनिर्णय के समर्थक राष्ट्र के रूप में देखता था, किन्तु 1927 के ब्रुसेल्स सम्मेलन में भारत का भ्रम टूट गया लैटिन अमेरिकी देशों से आये प्रतिनिधियों ने जवाहर लाल नेहरू को बताया कि लैटिन अमेरिका में संयुक्त राज्य अमेरिका साम्राज्य वादी नीति का ही सहारा लिये हुए है। भारत लौटने के बाद भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का दिये गये प्रतिवेदन में नेहरू ने लिखा "भविष्य की सबसे गम्भीर समस्या अमेरिकी साम्राज्यवाद होने जा रहा है, ब्रिटिश साम्राज्यवाद के दिन अब लद चुके है।"

भारत के कतिपय क्षेत्रों में यह धारणा प्रचलित है कि अमेरिका के राष्ट्रपति स्वर्गीय रूजवेल्ट ने भारत को स्वतंत्रता दिलाने में इंग्लैण्ड पर दवाव डालकर महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। अमेरिका की इस तथाकथित भूमिका को यदा कदा गौरवान्वित भी किया गया है। किन्तु वास्तव में देखा जाये तो यह धारणा निरे भ्रम पर आधारित है। भारत की आजादी की लड़ाई में अमेरिका प्रशासन ने कोई ऐसा रचनात्मक योगदान नहीं दिया जिसे भारतीय इतिहास में गौरवमय स्थान दिया जा सके।

स्वर्गीय राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने भारत को बहुत सीमित औपनिवेशक स्वराज देने की बात कहीं थी। सीमित दायरे में इसलिए कि अमेरिका नेताओं का मन्तव्य इने – गिने भारतीयों को प्रशासन का भागीदार बनाकर ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति अधिक वफादार बनाने से था। इसके अतिरिक्त उन्हे कोई सरोकार नहीं था। रूजवेल्ट ने यह भी कहा था कि "भगवान के लिए मुझे इस विवाद में मत ढकेलो। यह मेरा काम नही है।" लूई फिशर का तो यहां तक कहना था कि "स्वर्गीय राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने चर्चिल को जो पत्र लिखा था वह कभी प्रेषित ही नही किया गया।" इससे पूर्व भी अमरीकी सरकार ने भारतीय स्वाधीनता के प्रति कोई सहानुभूति दिखाई हो, इसका उल्लेख नहीं मिलता। बल्कि इसके विपरीत उनका यह दृष्टिकोण था कि इंग्लैण्ड के लोग इस पिछडे हुए भूभाग को सभ्य बनाने में लगे हुये है। गैर सरकारी क्षेत्र में

कतिपय बुद्धिजीवियों ने भारत की स्वतंत्रता के प्रति अवश्य दिलचस्पी दिखाई थी। लेकिन वहां के प्रशासन ने इस भू भाग की राजनीतिक उथल पुथल के प्रति सदा अनभिज्ञ रहना ही उचित समझा। 1942 में 'भारत छोड़ो आन्दोलन' को कुचलने के लिए ब्रिटिश सरकार ने अमरीकी फौजों का उपयोग किया। तब अमरीकी सरकार ने इसका विरोध नहीं किया। इससे भारतीय नेताओं को बड़ी निराशा हुई। 1945 में सैनफ्रांसिस्को सम्मेलन में जहां सोवियत विदेश मंत्री ने स्पष्ट रूप से भारत को स्वतंत्रता दिये जाने का समर्थन किया, वहां अमरीकन प्रतिनिधि ने कुछ भी नहीं कहा।

भारत में सन 1943 के महान अकाल की घटना भी अमरीकी बेरूखी का ज्वलन्त उदाहरण है। यह महान अकाल भारतीय इतिहास की एक प्रलयकारी घटना थी। जिसमें लगभग तीस लाख लोगो को खाद्यान्न के अभाव में अपने प्राण गंवाने पड़ें। लेकिन इन संकट की घड़ियों में अमरीकी प्रशासन ने भारत को किसी भी तरह की सहायता देना उचित नहीं समझा। अमरीकी प्रशासन के इस बेरूखी पूर्ण रवैये के पीछे कारण स्पष्ट था। वह अपने मित्र इग्लैण्ड को अप्रसन्न करना अथवा पशोपेश में नहीं डालना चाहता था। सन् 1946 में भारत को लगभग ऐसी ही स्थिति का पुनः सामना करना पड़ा संकट की इन घड़ियों में भी ट्रूमैन प्रशासन का रवैया सहयोग का न होकर वेपरवाही का था। भारतीय खाद्यान्न प्रतिनिधि मण्डल के अध्यक्ष रामास्वामी के बार–बार अनुनय विनय के उपरान्त भी अमेरिका की ओर से सहायता उपलब्ध नहीं हुई। सन् 1943–44 की दर्दनाक स्थिति का उल्लेख करते हुये मुदालियर का कहना था कि "जहॉ भारत में तीस लाख लोग भूख से मरे वहीं इटली, जर्मनी और पोलैण्ड के युद्ध बन्दियों को किसी तरह का अभाव नहीं रहा।"

चौथे दशक के प्रारम्भ में अमरीकी नीति के परिणाम स्वरूप भारत में अमेरिका के प्रति बहुत ही विकृत तस्वीर बनी जो बहुत कुछ बाद में भी विद्यमान रही। न्यूयार्क टाइम्स के संवाददाता ने अगस्त 1944 में अपने प्रतिवेदन में लिखा था कि "भारत के लोग अमरीकियों को धन का लोभी, अधार्मिक, अनैतिक तथा संसार के नेतृत्व देने में अयोग्य मानते हैं।" 4

भारत की एक बड़ी समस्या स्वाधीनता के बाद आर्थिक विकास की थी उसे बड़े पैमाने पर विदेशी पूँजी और तकनीक की जरूरत थी। जिस समय अमेरिका खुले हाथों से ध्वस्त यूरोप के आर्थिक पुर्ननिर्माण के लिये मार्शल योजना की प्रस्तावना कर रहा था, उस वक्त दारूण अकाल से जूझते भारत को किसी भी तरह की राहत पहुॅचाने के लिए वह कोई उत्साह

नही दिखा रहा था। 1951 में खाद्यान्न ऋण पाने के लिए जब भारतीय राजदूत श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित ने अमेरिका के सामने हाथ पसारे तो उन्हें बुरी तरह अपमानित–तिरस्कृत होना पड़ा।

यद्यपि अन्तरिम सरकार के गठन (1946) के तुरन्त पश्चात भारत प्रधानमंत्री नेहरू जी ने अपने रेडियो भाषण में सन्देश देते हुए यह आशा व्यक्त की थी कि अमेरिका अन्तर्राष्ट्रीय जगत में जिसे नियति ने प्रमुख स्थान दिया है। अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा। इतना ही नहीं नेहरू जी ने भारत की संविधान निर्मात्री सभा में अमरीकी लोकतन्त्र और शासन व्यवस्था की भूरि–भूरि प्रशंसा की थी।

भारत के साथ सहयोग और मैत्री की चाह अमरीकी क्षेत्र में भी आंशिक रूप से विद्यमान थी। साम्यवादी चीन के उद्भव के पश्चात भारत जैसे महादेश को मित्र बनाना अमेरिका के लिए महत्वपूर्ण था। सन् 1950 में न्यूयार्क टाइम्स ने ऐशिया में साम्यवादी ज्वार भाटे को प्रतिबन्धित करने में भारत को एकमात्र नियन्त्रक शक्ति के रूप में देखा था। पत्र मे लिखा था कि "एशिया के विद्यमान संघर्ष में नेहरू का समर्थन कई सैनिक डिवीजनों से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है।"

द्वितीय विश्व युद्ध के उपरान्त व शीत युद्ध के उद्भव के साथ भारत अमेरिका सम्बन्धों को सामान्य एवं मधुर बनाने की इच्छा दोनों ही देशों के नीति निर्माताओं के मन में होने के बाबजूद अनेक मुद्दों पर मतभेद उभरकर सामने आने लगा। एशिया की राजनीति में अमेरिका की घुसपैठ और कतिपय देशों के साथ सैनिक प्रतिबद्धताओं के परिणाम स्वरूप जो तस्वीर उजागर हुई वह भी बहुत उजली नहीं कही जा सकती।

कोरिया हो या स्वेज संकट, हिन्द चीन हो या बर्लिन में तनाव, 1950 से 1954–55 के बीच हर महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय घटनाक्रम में भारत और अमेरिका एक दूसरे के विरूद्ध खड़े दिखायी दिये। पंचशील समझौते पर हस्ताक्षर के बाद भारत स्वंय को चीन के मित्र हितैषी के रूप में पेशकर रहा था और स्टालिन की मृत्यु के बाद सोवियत संघ के साथ नेहरू सरकार के सम्बन्ध सहज और मधुर हुए अमेरिका के लिऐ ये बाते सहय नहीं थीं।

1954 में जब अमेरिका ने पाकिस्तान को बड़े पैमाने पर सैनिक सहायता दी और उसे अपने सैनिक संगठनों का सदस्य बनाया तो उसका पक्षपात स्पष्ट हो गया। दक्षिण एशियाई क्षेत्र में इस तरह का कृत्रिम सन्तुलन स्थापित करना भारत के प्रति शत्रुतापूर्ण कार्यवाही ही

समझी जा सकती थी। डलेस की मृत्यु के बाद कई जिम्मेदार भारतीयों के मन में इस तरह की भ्रान्ति उत्पन्न हुई की जब अमेरिका में डेमोक्रेटिक पार्टी सत्तारूढ़ होगी या भारत के ये स्नेही मित्र (अर्थात डेमोक्रेटिक पार्टी के सदस्य) प्रभावशाली बनेगें तो इस तनाव पूर्ण स्थिति में फेरबदल होगा। चेस्टर बोलस जैसे समझदार अमरीकी राजनयिक की भारत में राजदूत के रूप में नियुक्ति ने इस धारणा को पुष्ट किया। परन्तु बहुत शीघ्र यह बात सामने आ गई कि भारत अमेरिका सम्बन्धों में व्यक्ति इतने महत्वपूर्ण नहीं है जितने कि मुद्दे। [5] 1950 के दशक में अमेरिका ने भारत को बड़े पैमाने पर खाद्य मदद देना मंजूर किया। यह एक तरह से पाकिस्तान को दी जा रहीं अमरीकी सैनिक सहायता के मुआवजे के रूप में था।

यह भी सोचा जा सकता था कि इस अवधि में नेहरू जी का अन्तर्राष्ट्रीय प्रभाव चरमोत्कर्ष पर था और अमेरिका के लिऐ तीसरी दुनिया के इस प्रवक्ता की अवहेलना करना कठिन था। परन्तु यह सुखद अन्तराल बहुत लम्बा नहीं रहा।

अमरीकी सहायता निःसंकोच ग्रहण करने के बाद नेहरू जी अमरीकी नीतियों और आचरण का आँख मूँदकर समर्थन करने को तैयार नहीं थे। साथ ही साथ भारत में पंचवर्षीय योजनाओं की शिथिल प्रगति से अमेरिका यह सोचने को विवश हुआ कि भारत पेंदे में छेंद वाली एक ऐसी बाल्टी है। जिसमें चाहे कितनी भी अनुदान रूपी जलराशि डाली जाये, कुछ लाभ नहीं होगा।

उपर्युक्त पृष्ठभूमि में भारत–अमेरिका सम्बन्धों का ढ़ाँचा खड़ा करने का प्रयत्न किया गया। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद भारत–अमेरिका सम्बन्धों को सामान्य एवं मधुर बनाने की इच्छा दोनों ही देशों के नीति निर्माताओं के मन में होने के बाबजूद अनेक मुद्दों पर मतभेद उभर कर सामने आने लगा। ऐशिया की राजनीति में अमेरिका की घुसपैठ और कतिपय देशों के साथ सैनिक प्रतिबद्धताओं के परिणाम स्वरूप जो तस्वीर उजागर हुई वह भी बहुत उजली नहीं कही जा सकती इस तीसरी दुनिया के भुभाग में अमरीकी नीति अधिकांशतः गैर प्रजातन्त्रवादी, फासिस्ट, और सैनिक तानाषाही की समर्थक रहीं है पाकिस्तान, दक्षिण कोरिया, दक्षिण वियतनाम आदि देशो के साथ गठबन्धन ने प्रजातन्त्रीय देशों के मन में उसकी नीति के प्रति सन्देह ही व्यक्त किया। विशेषकर भारत में अमेरिका के प्रतिरोष और विरोध प्रकट हुआ। सैनिक सन्धियों और अस्त्र शस्त्रों की सहायता के कारण सामान्यजन में यह अवधारणा बनी कि अमेरिका जनतन्त्रीय मूल्यों के प्रति इतना कृत संकल्प नहीं जितना वह अपने राष्ट्रीय और

विश्वव्यापी हितों के प्रति है। ले देकर उसकी साम्राज्यवादी आकांक्षा और छवि ही अधिक प्रस्फुटित हुई है। आर्थिक क्षेत्र में अपार सहायता को भी भारत और तीसरी दुनिया के अन्य देशों में अमरीकी हितों के परिपोषण का साधन ही माना गया।

शीतयुद्ध से पूर्व भारत–अमरीकी सम्बन्धों के बारे में योगेश चन्द्र हालन ने लिखा था, "राष्ट्रपति चाहे डेमोकेटिक हो या रिपब्लिकन उसका मनोवैज्ञानिक ढाँचा अमेरिकी है। गलत धारणायें लिए हुए है। दस में नौ अमेरिकी संसार के मानचित्र में भारत को नहीं पहचान सकते। जान बूझकर अमेरिका भी भारत को रूस का सहयोगी मानता है। उसका यह विश्वास है कि भारत का आर्थिक ढांचा मुख्यतः समाजवादी है। व्यक्ति की स्वतंत्रता मुख्यतया आर्थिक क्षेत्र में बहुत कम है यही कारण है कि पिछले चालीस वर्षों में वैसा ही बना हुआ है।"

शीतयुद्ध के बाद भारत–अमेरिका सम्बन्ध

शीतयुद्ध के अन्त, सोवियत संघ के विखराव और खाड़ी युद्ध में संयुक्त राज्य अमेरिका के नेतृत्व में संयुक्त बल की विजय ने सम्पूर्ण विश्व को 'नई विश्व व्यवस्था' की ओर ढकेल दिया है। भारत और अमेरिकी सम्बन्धों में शीतयुद्ध के अन्त के साथ युगान्तकारी परिवर्तन परिलक्षित हो रहे हैं। शीतयुद्ध के अन्त के साथ अब दोनों देश एक–दूसरे से ईमानदारी से भूतकाल की संदेहपरक दृष्टि को त्यागकर खुलकर अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दो पर बातकर सकते हैं। अमेरिका का सामरिक, महत्व कम हुआ है। प्रथमबार, अमेरिका दक्षिण एशिया के राष्ट्रो से सीधे संवाद बनाने की स्थिति में है। आर्थिक रूप में, साम्यवादी व्यवस्था के असफल होने के साथ भारत सरकार के समान विश्व के अन्य देश भी बाजारोन्मुख आर्थिक सुधारों की ओर उन्मुख हुए है। जोकि अमेरिका की इच्छा हैं शीतयुद्ध के बाद जो नई विश्व व्यवस्था की तस्वीर उभरकर सामने आ रही है उसकी कतिपय विशेषताओं में भूमण्डलीकरण, उदारीकरण, बाजारोन्मुख अर्थव्यवस्था, सूचना प्रौद्योगिकी, एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्था की पुर्नरचना हो रही हैं। ऐसे में भारत अमेरिकी सम्बन्धों में उपरोक्त कतिपय नई विश्व व्यवस्था को विशेषताओं के प्रकाश में नये मुद्दे मानवीय, आर्थिक, सामाजिक, और पर्यावरणीय दृष्टि से महत्वपूर्ण है। ये मुख्यतया सतत विकास से जुड़े हुए हैं।

ऐसे मुद्दो में प्रमुख है : मानव अधिकार, विकास का अधिकार, विश्व व्यापार, पर्यावरण संरक्षण, उत्तर दक्षिण संवाद, निःशस्त्रीकरण, अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद, नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की माँग, गरीबी उन्मूलन, टिकाऊ विकास, ज्यादा विदेशी निवेश और प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण आदि। अमेरिकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन ने 25 मार्च, 2000 को इस्लामाबाद (पाकिस्तान) में इसी ओर संकेत करते हुए जो कुछ कहा वह प्रासंगिक है। "यह युग उन लोगों को पुरूस्कृत नहीं करता जो खून से सरहदों की लकीर दुबारा खींचने का फिजूल का प्रयास करते है। यह युग उनका है जो सरहदों से आगे देखकर वाणिज्य और व्यापार में साझीदार बनाना चाहते हैं।"

भारत–अमरीकी सम्बन्धों में 1990 के बाद निरन्तर नये समीकरणो की प्रति स्थापना हो रहीं हैं। नव– स्फूर्ति एवं नवविश्वास के वातावरण का सृजन हो रहा है। अनेक राजनैतिक,

आर्थिक सैन्य और अब आणविक समझौते से जहाँ हमें अपने राष्ट्रीय हितों को दृष्टि में रखकर सावधानी से कदम बढ़ाने है। वही अतीत के अनुभवों और भविष्य की रणनीति पर पर्याप्त पूर्वाभ्यास की आवश्यकता है।

"सितम्बर 1990 को राष्ट्रपति बुश ने यह घोषणा की थी कि "एक नई विश्व व्यवस्था उभर सकती है एक नये युग का उदय जो कि आतंक के खतरे से मुक्त हो। "28 जनवरी 1992 को उन्होनें फिर जोर देकर कहा कि "संयुक्त राज्य अमेरिका पश्चिम का नेता है जो कि अब विश्व का नेता बन गया है।"

1990 के पूर्व अमेरिका के बारे में जो आर्थिक आशंकाये उभर कर आ रहीं थी कि अमेरिका आर्थिक रूप से विपन्नता की ओर बढ रहा है। इससे अमेरिका के आर्थिक पतन की आशंका अमेरिकियो को चिन्तित करने लगी थी। इस कारण अमेरिका के नेतृत्व पर प्रश्नचिन्ह लगाया जाने लगा। 1990 के मध्य में राष्ट्रपति बुश ने कहा था कि "अमेरिका के नेतृत्व का कोई विकल्प नहीं है किसी को भी हमारे दृढ़ निश्चय और हमारे (नेतृत्व के) टिके रहने पर संदेह नहीं करना चाहिए"। 3 जनवरी 1991 में उन्होने फिर कहना चाहा था कि "विगत वर्षो में हमने शीतयुद्ध और लम्बे युग को समाप्त करने में बडी प्रगति की है। हमारे सामने और हमारी भावी पीढ़ियों के सामने एक नये विश्व की रचना करने का अवसर है।" एक ऐसा विश्व जिसमें कानून का शासन हो और जिसमें जंगल का कानून नहीं चलता हो जब हम सफल होगें – अवश्य सफल होगे तब हमारे सामने एक वास्तविक अवसर होगा एक नयी विश्व व्यवस्था (को स्थापित करने) का"[6]

अमेरिका के द्वारा नयी विश्व व्यवस्था के प्रमुख पॉच लक्षणों की पहचान की गयी है 1. राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं का वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण, 2. जनतंत्र की सर्व व्यापकता, 3. मानवीय अधिकारों का संरक्षण 4. नाभिकीय, रासायनिक एवं जैविक आयुधों के निर्माण एवं प्रसार पर प्रभावी नियन्त्रण, 5. संयुक्त राष्ट्र संघ की प्रभाव शीलता में बृद्धि।

द्विध्रुवीय विश्व व्यवस्था के अन्त और नयी विश्व व्यवस्था के अभ्युदय की सम्भावना को सभी देश अपनी विदेश नीतियों का बदलती परिस्थितियों की परिवेश के अनुसार पुर्नमूल्यांकन करने लगे इस कारक का भारत अमेरिकी सम्बन्धो पर प्रभाव पडना अवश्यंम्भावी हो गया।[7]

यह ध्यातव्य है कि आज की इस उदीयमान एक ध्रुवीय नई विश्व व्यवस्था में संयुक्त राज्य अमेरिका ही एक मात्र आर्थिक और सैनिक शक्ति है। वह विश्व का एक मात्र पुलिसमैन,

दादा या महानायक है। उसकी कोई बराबरी नहीं कर सकता, उसका कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं, उसे कोई ललकार या चुनौती नहीं दे सकता। उसके पास इतनी ताकत है कि वह किसी भी देश को आदेश दे सकता है और आदेश न मानने पर उसे दण्डित भी कर सकता है। उसके पास परमाणु अस्त्रो का ही विपुल भण्डार नहीं है, अपितु आर्थिक क्षमता भी अत्यधिक है। वह राष्ट्रों पर दबाब डालकर उन्हें अपनी नीतियाँ बदलने के लिये मजबूर करने की स्थिति में है। वह अनुचित व्यापार के बहाने राष्ट्रो के आयात पर मनमानी व एक तरफा रूकावटे ला सकता है संयुक्त राष्ट्र संघ ही नहीं, अन्तर्राष्ट्रीय और विश्व बैक जैसी वित्तीय संस्थाये उसकी मुट्ठी में है।[8]

पत्रकार सुरेन्द्र प्रताप सिंह लिखते है कि–''सोवियत संघ सहितवारसा सन्धि के देशो के पतन तथा कुवैत–इराक युद्ध में कुवैत की ओर से निर्णायक भूमिका निभाने के बाद अमेरिका ने उस विश्व संरचना को पूरी तरह से बदल डाला अमेरिका न केवल अपने को संसार का एक मात्र सूबेदार मान रहा है बल्कि सचमुच एक सूबेदार के रूप में उभरा भी है।''[9]

References:-

1. Ambassador Lalit man singh Speaks on, Indo-Us relations-India at the Cross roads 4-7-2006 , Page 3
2. T.V.kuttikrashnan, Unfriendly Friends: India & America , Page 113
3. T.V. kuttikrashnan, Unfriendly Friends: India & America, Page 113
4. Charles H. Heimsath, Diplomatic History of Modern India(Bombay 1971)
5. A.P Vekteshwaran, New Paradyms in Indio-U.S.A. ReLations, World Focus, 1991, Page 41
6. Jasjit singh, Towards A New International Order, Straregic Analysis, October, 1991, Page 771-85
7. A.P. Venkteshwaran, "Gulf Crisis & Geoge Bush The Hindu, 28 August 1990,
8. Dinman, 15 Nov 88, Page 23
9. Premshanker jha, Birth of New World Order, The Hindu-9 January 1997,

अध्याय प्रथम

भारत अमेरिका सम्बन्ध :– एतेहासिक सन्दर्भ

भारतीय गणतन्त्र की स्थापना एंव विदेश नीति के आधार सिद्धान्त–

15 अगस्त 1947 को भारत स्वतन्त्र हुआ तथा 26 जनवरी 1950 को भारतीय गणतन्त्र की स्थापना हुई। तब भारत ने स्वतन्त्र विदेश नीति असंलग्नता को अपनाने की घोषणा की। इसके बाद 1948 में पं0 नेहरू ने भारत का प्रधानमंन्त्री बनने के बाद अमेरिका की यात्रा की। यह यात्रा अमेरिका से आर्थिक मदद प्राप्त करने के लिए की गई थी। तब अमेरिका ने दक्षिणी एशिया के प्रति दो प्रकार के दृष्टिकोण अपनाये थे

1) अमेरिका–असंलग्नता की नीति को पंसन्द नही करता था।

2) पं0 जवाहर लाल नेहरु से अमेरिका नाराज था।

यह दृष्टिकोण इसलिए अपनाना था कि नेहरु ने रुस की पंचवर्शीय योजनाओं की तरह ही भारत के आर्थिक विकास की नींव रखी थी तथा अमेरिकन सत्ता प्रतिष्ठान को ऐसा लगता था कि भारत का पलड़ा रुस की ओर झुका हुआ है। अमेरिका भारत को आर्थिक मद्द तो देना चाहता था लेकिन वह दो उद्देश्यों की पूर्ति भी करना चाहता था। वह इस प्रका

1) भारत में रुसी प्रभाव को रोकना चाहता था।

2) भारत की विदेशनीति के निर्माण में अमेरिका दखल करना चाहता था।

यह ध्यातव्य है कि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद जो पूर्व और पश्चिम के मध्य में शीत युद्ध आरम्भ हुआ संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ उसके कर्णधार थे। न केवल उनकी नीतियों के बीच में सैद्धान्तिक स्तर का टकराव था बल्कि वे अपने अलग अलग खेमों का निर्माण कर रहे थे। वे यह भी प्रयास कर रहे थे कि कोई नया तीसरा खेमा न बन पाये।

1. भारतीय गणतन्त्र की स्थापना एवं विदेश नीति के आधार भूत सिद्धान्त–

विश्व शान्ति, गुटनिरपेक्षता ,निशस्त्रीकरण का सर्मथन साम्राज्यवाद उपनिवेशवाद व नस्लवाद का विरोध,,एफ्रो–एशियाई एकता का आव्हान और संयुक्त राष्ट्रसंघ के सिद्धान्तों में आस्था भारतीय विदेशनीति की नींव के पत्थर समझे जा सकते हैं।" [1] ऐसा नही था कि ये बाते नेहरू जी के व्यक्तिगत आदर्शवादी रूझान से प्रेरित थी और उनका कोई सम्बन्ध भारत के राष्ट्रीय हित से नही था। जैसा कि नेहरू जी अक्सर कहा करते थे। कि वर्तमान का आदर्शवाद भविष्य का यथार्थवाद होता है। ये सभी सिद्धान्त आपस में गुंथे हुए थे और अद्भुत

ढंग से दूरदर्शी थे। भारतीय विदेशनीति के प्रमुख सिद्धान्तों का विश्लेषण निम्नाकिंत बिन्दुओं के तहत किया जा सकता है:–

1) विश्व शान्ति (World peace)

विश्वशान्ति में नेहरू की आस्था सिर्फ इसलिए नही थी कि वह बुद्ध और अशोक के देश में जन्में थे या अहिंसक महात्मा गॉधी के पटु शिष्य थे। नेहरू में व्यक्तिगत साहस की कोई कमी नही थी । उनके जीवन के अनेक प्रकरण उन्हें दुस्साहिक ही बताते हैं। विश्व शान्ति के प्रति इनका आकर्शण उस व्यक्ति अनुभव से उपजा था। जिसमें उन्होने यूरोप के समृद्ध सम्पन्न देशों को युद्ध की आग में झुलसते और बर्बाद होते देखा था। जिस समय भारत आजाद हुआ, उस समय सारा विश्व द्वितीय महायुद्ध के ध्वंस का बोझ उठा रहा था। नेहरू जी इस बात को भली भांति समझते थे कि यदि विश्व शान्ति अक्षत नही रखी जा सकी तो अफ्रीका और एशिया के तमाम देशों को आजाद होने का मौका नही मिलेगा। भारत की स्वाधीनता को सार्थक बनाने तथा विकास की गति तेज रखने के लिए विश्व शान्ति अनिवार्य थी। इसीलिए नेहरूजी ने अपने विदेश नीति नियोजन में विश्व शान्ति को प्राथमिकता दी।

2 गुटनिरपेक्षता –

गुटनिरपेक्षता की अवधारणा विश्वशान्ति की स्थापना के लिए एक महत्वपूर्ण पहल थी। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अन्तराष्ट्रीय स्थिति बेहद तनाव पूर्ण और जोखिम भरी हो गई थी। नेहरू जी ने बेहद समझदारी के साथ नवोदित राष्ट्रों के सामने गुटनिरपेक्ष नीति अपनाने का सुझाव रखा। जाहिर है कि गुटनिरपेक्षता का अर्थ निश्क्रिय उदासीनता, तटस्थता या अवसरवादिता नही था। अपनी स्वाधीनता को मुखर कर स्वविवेक के अनुसार अपने राष्ट्रहित के अनुकूल विकल्प चुनना असली गुटनिरपेक्षता थी।

नेहरू जी ने यह बात आरम्भ से ही स्पष्ट कर दी कि उनका इरादा अपने देश को महाशक्तियों के दंगल से अलग बचाकर रखने का है और क्रमशः शान्ति के क्षेत्र का 1949 को अमेरिका जनता के समक्ष बोलते हुए नेहरू जी ने कहा था,'' जहॉ कहीं स्वतन्त्रता संकट में पड़ती है। न्याय को चुनौती दी जा सकती है। या आक्रमण होता है वहॉ हम तटस्थ नही रह सकते और न रहेंगे ।'' लोक सभा में दिसम्बर 1958 को बोलते हुए नेहरू जी ने कहा था,'' जब हम यहं कहते हैं कि ''हमारी नीति गुटनिरपेक्षता की है तो स्पष्ट रूप से हमारा अर्थ सैनिक गुटों से निरपेक्ष रहने का होता हैं। [2]

उन्होने यह भी स्पष्ट कर दिया था कि भारत की कोई भी महत्वाकांक्षा तीसरे खेमे के गठन और उसके मुखिया के रूप में उभरने की नही हैं। नेहरू जी यह बात अच्छी तरह समझते थे कि गुटनिरपेक्षता त्यागने का अर्थ किसी न किसी महाशक्ति का शिविरानुचर बनना ही हो सकता है और ऐसा करना कठिनाई से अर्जित आजादी को गवाँना होता है। नेहरू जी ने कभी यह समझने –समझाने की नादानी नही की कि गुटनिरपेक्षता का अर्थ निष्क्रिय रहना है। इसके अतिरिक्त गुटनिरपेक्षता के कारण भारत जैसा नवोदित राष्ट्र दोनों खेमों से आर्थिक सहायता ग्रहण कर सकता था । आरम्भ में भले ही तत्कालीन सोवियत शासक स्टालिन और अमेरिकी विदेश सचिव डलेस ने गुटनिरपेक्षता को उपहास का विषय समझा, किन्तु कोरिया और हिन्द चीन के अनुभव के बाद उनके द्वारा भारत की ईमानदारी पर प्रश्नचिन्ह लगाना आसान नही रहा। नेहरू जी ने गुट निरपेक्ष आन्दोलन बढ़ाने, कम्पूचिया, इण्डोनेशिया और युगोस्लोविया जैसे देशों से सम्बन्ध घनिष्ठ कर अफ्रो एशियाई भाईचारे और विश्व बन्धुत्व के भाव को पुश्ट किया। जब साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद के विरूद्ध मुहिम समझा गया। तब गुटनिरपेक्षता मन्त्र वेहद उपयोगी सिद्ध हुआ इसीलिए शिषर गुप्त जैसे विद्वानों ने टिप्पणी की है कि शायद गुटनिरपेक्षता को भारतीय विदेश नीति का एक प्रमुख सिद्धान्त कहने कि अपेक्षा इसे विदेश नीति के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अपनाई गई राजनीति कहना समीचीन है।

3 निशस्त्रीकरण –

जिस तरह गुटनिरपेक्षता विश्व शान्ति से जुड़ी हुई थी, उसी तरह निशस्त्रीकरण का मुद्दा गुटनिरपेक्षता से गुँथा हुआ था। जब तक शस्त्रास्त्रों की अंन्धी दौड़ जारी थी तब तक विश्वशान्ति को निरापद नही समझा जा सकता था। शस्त्रीकरण की प्रक्रिया अनिवार्यता युद्ध की मानसिकता को पुश्ट करती थी, जिसमें सैनिक संगठन, शत्रु की घेरावन्दी , जोर आजमाइश आदि से बचना कठिन था। परमाणु अस्त्रों के आविष्कार ने शस्त्रीकरण की समस्या के और भी खतरनाक आयाम उद्घाटित किये थे। कई लोगों का यह भी मानना है कि नेहरू जी के लिए विश्व शान्ति और निशस्त्रीकरण अलग–अलग मुद्दे नही थे। नेहरू जी ने हर उपलब्ध अन्तराष्ट्रीय मंच से निशस्त्रीकरण का संदेश प्रसारित किया। इसके खातिर वह अपने आत्मीय मित्रों से टकराने में भी कभी कतराये नही। गुटनिरपेक्ष देशों के बेलग्रेड शिखर सम्मेलन (1961) में सुकार्णो के साथ उनकी मुठभेड़ निशस्त्रीकरण बनाम नव – उपनिवेशवाद को लेकर ही हुई थी । कुछ अन्य विद्वानों का यह भी माना है कि संयुक्त राष्ट्रसंघ में नेहरू

जी की आस्था इसलिए गहरी थी ,क्यों कि वह समझते थे कि बिना व्यावहारिक सामूहिक सुरक्षा व्यस्था के सम्प्रभु राष्ट्र स्वेच्छा से शस्त्र त्याग नही करने वाले। नेहरू जी का निशस्त्रीकरण के प्रति आकर्षण से नही उपजा था। न्याय संगत विषय पर आत्मरक्षा के लिए शस्त्र प्रयोग से नेहरू जी को कोई हिचकिचाहट नही होती थी। गोवा, कश्मीर और चीन के प्रसंग इसका अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। [4]

4. साम्राज्यवाद , उपनिवेशवाद व रंगभेद का विरोध

विश्व शान्ति , गुटनिरपेक्षता व निशस्त्रीकरण की पक्षधरता के बाबजूद नेहरू द्वारा निर्धारित भारतीय विदेश नीति के सिद्धान्तों में साम्राज्यवाद , उपनिवेशवाद व नस्लवाद का कट्टर विरोध शामिल था। सतही दृष्टि से इसमें भले ही विरोध जान पड़े , लेकिन वास्तव में ऐसा नही था। नेहरू जी ने यह बात बहुत पहले स्पष्ट कर दी थी । कि विश्वशान्ति को सबसे बड़ा संकट साम्राज्य वाद , उपनिवेशवाद एंव नस्लवाद से है। नेहरू जी का ऐतिहासिक अध्ययन और राजनीतिक अनुभव उन्हें यह बात भी भली भाँति आत्मसात करवा चुका था कि नस्लवाद और उपनिवेशवाद बिना साम्रज्यवादी समर्थन के टिके नही रह सकते । भारतीय अनुभव के कारण नेहरू जी वास्तव में इस संघर्ष का शांतिपूर्ण परामर्श द्वारा समाधान चाहते थे परन्तु आवश्यकता पड़ने पर सशस्त्र जन – मुक्ति संग्राम को भारतीय समर्थन देने में उन्हें संकोच नही होता था।

5. एफ्रो – एशियाई एकता –

नेहरू जी ने यह बात बहुत पहले अच्छी तरह गाँठ बॉध ली थी कि संसार के सभी विपन्न और वंचित राष्ट्रो और समाजों के हित एक समान हैं। सम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद व नस्लवाद का विरोध हो या गुटनिरपेक्षवाद आन्दोलन के संचालन द्वारा विश्व शान्ति और निशस्त्रीकरण को आगे बढ़ाने का सवाल, इसके लिए अफ्रो– एशियाई एकता की पुष्टि परमावश्यक थी। इस प्रकार नेहरू दुबारा अफ्रो – ऐशिया भाई चारे कि बात उठाना कोरा भावावेश नही वल्कि एक तर्कसंगत कदम था।

6 संयुक्त राष्ट्रसंघ में आस्था –

इसी तरह संयुक्त राष्ट्रसंघ के प्रति नेहरू जी का आकर्शण किसी आदर्शवाद नादानी से प्रेरित नही था । वल्कि उर्पयुक्त अर्न्तसम्बन्धित सिद्धान्तो के व्यवहार में रूपान्तरण की सम्भावना के कारण उपजा था। नेहरू जी निहायत यर्थाथवादी ढ़ंग से जानते थे कि वोटों के कारण वो महाशक्तियों के बीच जिस की स्थिति पैदा हो जाने से संयुक्ट राष्ट्रसंघ में भारत जैसे गुटनिरपेक्ष देश कि रचनात्मक भूमिका निभाने का मौका मिल सकता है और सदस्य देशों कि जमात में अफ्रो– एशियाई देशों कि वृद्धि होने के साथ इस मंच का उपयोग विश्व शान्ति की स्थापना, निशस्त्रीकरण के प्रसार और सम्राजवाद, उपनिवेशवाद व नस्लवाद के विरूद्ध संघर्ष के लिए बखूबी किया जा सकता हैं।

भारतीय विदेश नीति : विभिन्न चरण–

2. नेहरूकाल में भारत अमेरिका सम्बन्ध (1947– 1964)

नेहरूकाल में भारत अमेरिका सम्बन्धों की नीव पड़ी। नेहरू का व्यक्तित्व और दर्शन अमेरिका नीति निर्माताओं कि समझ से परे रहा। अर्न्तराष्ट्रीय समस्याओं पर उनकी समझ व्हाइट हाउस और पेन्टागन से भिन्न थी अतः टूमैन, आइजन हावर, डलेश, कैनडी और जोन्सन के लिए वह पेचीदा व्यक्तित्व ही बने रहे। नेहरू जी के बारे में आइजन हावर ने लिखा भी था कि"पंडित नेहरू का व्यक्तित्व दुर्बोध और उपनिवेशवादी हैं।" नेहरू को उन्होने एक बुद्धि जीवी एंव कुलीन और आत्मश्लागी के रूप में देखा , भारत और एशिया कि उभरती अंकाक्षाओं के प्रतीक रूप में नही। द्वितीय महायुद्ध के बाद वस्तुतः दुनिया को इन दो लोकतान्त्रिक देशों के बीच एक दूसरे के मानस को समझने और तद्नुसार नये परिपेक्ष्य में एक दूसरे कि भूमिका को स्वीकार करने कि मनोवृत्ति का अभाव रहा। स्वतन्त्र भारत कि गुटनिरपेक्ष नीति प्रारम्भिक काल में अमेरिकी शासको की समझ से परे रही तो दूसरी और तीसरी दुनिया में अमेरिका कि महत्वकांक्षी भूमिका भारत के लिए स्वीकार करना कठिन था। नेहरू के जीवनी लेखक डा0 एस0 गोपाल ने 1949 में नेहरू द्वारा की गई अमेरिकी यात्रा के उपरान्त उनकी मनोव्यथा को व्यक्त करते हुए उन्हे उद्धृत किया है," उन्होने हर तरह मेरा स्वागत किया मगर वह मुझसे कृतज्ञता और सद्भाव से अधिक "कुछ" चाहते थे और यह (कुछ) मै उन्हें नही दे सकता था। यह "कुछ" ना पाकर अमेरिका को बड़ा क्षोभ हुआ। उसकी स्वार्थ पूर्ण सहानुभूति का जादू भारत से अपनी नीतियों की सोदे बाजी नही कर सकता था। "
नेहरू युग में भारत अमेरिकी मतभेद निम्न प्रश्नों (मुद्दों पर) उभरकर सामने आये :–

1. साम्यवाद एवं साम्यवादी गुट

साम्यवाद एवं साम्यवादी गुट के प्रति दोनो देशों के दृष्टिकोण भिन्न भिन्न थे। वस्तुतः युद्धोत्तर काल में अमेरिकी विदेश नीति का मूल आधार भी साम्यवाद के प्रसार को रोकना रहा हैं। साम्यवाद के प्रसार को रोकने के लिए युद्धोत्तर काल में उन्ही फॉसीवादी और तानाशाही शासकों का समर्थन किया जिनके विरूद्ध उन्होंने द्वितीय महायुद्ध में भाग लिया था। इस उद्धेश्य को प्राप्त करने के लिए अमेरिका ने अपने आपको विश्व का पहरेदार बना लिया और संन्धियों व नाटों जैसे सैनिक संगठनों के निर्माण के द्वारा साम्यवाद के प्रसार को रोकने का प्रयास किया। जो राष्ट्र समझौता या सैनिक संगठनों के माध्यम से अमेरिका से सम्बद्ध नही था उसे 'विरोधी' या 'शत्रु' या रूस का पिछलगू की संज्ञा दी गई। जोन फास्टर डलेस ने स्पष्ट कहा था कि "जो हमारे साथ नही वो हमारे विरूद्ध हैं।" दूसरी ओर, भारत ना तो स्वतंन्त्रता प्राप्ति के समय और ना उसके बाद साम्यवादी हाथी से भयभीत रहा। भारत के लिए साम्यवादी होना चिन्ता का इतना अधिक विषय नही था। जितना उसके लिए आर्थिक विकास का मुदद्। हैं। अपने आर्थिक विकास के लिए भारत को ना केवल दोनो गुटों से अधिक सहायता की आवश्यकता थी अपितु यन्त्रों व तकनीशियनों कि भी आवश्यकता रही अतः भारत दोनों महाशक्तियों से मैत्री चाहता था दोनों से अधिक सहायता चाहता था। भारत ने अपनी निर्गुट नीति के कारण साम्यवाद के विरूद्ध अमेरिका की भांति कभी कठोर दृष्टिकोण नही अपनाया यद्यपि भारत ने अनेक बार साम्यवाद की आलोचना की। परन्तु उसने इसे संसार की एक मात्र चुनौती पूर्ण समस्या नही माना। भारत में एक साम्यवादी दल है जिसे अन्य दलों के समान स्वतंन्त्रता प्राप्त हैं।

उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद –

द्वितीय विश्व युद्ध की विदेश नीति की एक प्रमुख विशेषता उपनिवेशवाद या साम्राज्यवाद एवं रंगभेद के कटु आलोचना करता रहा हैं। इसके विपरीत, अमेरिका उसकी सारी राजनीति , और हित ब्रिटेन , फ्रांस पुर्तगाल स्पेन, हालैण्ड जैसे पूर्व साम्राजवादी राष्ट्रों के साथ जुड़े हुए हैं। वस्तुतः लगभग सभी यूरोपीय साम्राजवादी राष्ट्र उसके मित्र थे और साम्यवाद के विरूद्ध उसके सहायक थे।

गुटनिरपेक्षता–

नेहरू के नेतृत्व में भारत ने गुट निरपेक्षता की नीति का वरण किया। भारत ने एशिया और अफ्रीका के राष्ट्रों को संगठित करने का प्रयत्न किया और वह गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों के नेतृत्व करने मे सफल हो गया। अमेरिका विदेश नीति निर्धारकों को भारत की भूमिका कुछ रूचिकर नही लगी और वह इसको शंका की दृष्टि से देखने लगे। अमेरिका को भारत एक जबरदस्त प्रतिरोधी के रूप में नजर आने लगा। जो अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अमेरिका से टक्कर लेने लगा था । और भविष्य की घटनाओं ने यह प्रमाणित कर दिया कि अमेरिका ने पकिस्तान को भारत से युद्ध के समय प्रयोग में लाने के लिये इन हथियारों को दिया था। इस सन्दर्भ में अमेरिका के भूर्तपूर्व राजदूत चेस्टर वोल्स का कहना था कि " पिछले 15 वर्षों मे यूरोप के बाहर अमेरिका द्वारा अधिकांश सैनिक सहायता नई सरकारो को इसी उद्‌देश्यों से दी गयी है कि वे अमेरिकन वैदेशिक नीति का समर्थन करे। " इतना ही नही , अमेरिका ने 1954 मे पाकिस्तान को सीटों तथा सैण्टो जैसे प्रादेशिक सैनिक संगठनो का सदस्य भी बना लिया।

तिब्बत के बारे में –

तिब्बत के सम्बन्ध में भारत ने चीन से जो सन्धि की उसे भी अमेरिका ने अनुचित समझा और भारत का साम्यवाद के प्रति समर्पण माना।

गोआ का प्रश्न –

1961 में गोआ के मामले पर भी दोनों देशों के सम्बन्धों में विकृति आयी भारत सरकार अपने इस क्षेत्र को पुर्तगाल की अधीनता से स्वतंत्र कराने के लिये अत्यधिक प्रयत्न शील रही। भारत के लिए गोआ को पुर्तगाली उपनिवेशवाद से मुक्त कराना उसके एकीकरण और राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से सर्वाधिक महत्व का प्रश्न था। भारत इसका समाधान मैत्रीपूर्ण वार्ता के द्वारा करना चाहता था किन्तु पुर्तगाल सरकार ने कोई सहयोग नही दिया इस विषय मे अमेरिका का दृष्टिकोण विचित्र रूप से भारत के विरूद्ध रहा। गोआ का स्वतंत्रता आन्दोलन अमेरिका में बड़ी आलोचना का विषय बना। इसका मुख्य कारण यही था कि पुर्तगाल नाटो का सदस्य था और अमेरिका अपने मित्र को नाराज नहीं करना चाहता था। अमेरिकी विदेश सचिव जान फास्टर डलेस ने तो गोआ को पुर्तगाल के एक प्रान्त की संज्ञा दी।" इससे भारतीय भावनाओं को अत्यन्त ठेस पहुँची।

भारत रंगभेद नीति का सर्वदा विरोधी रहा जब कि अमेरिका ने रंगभेद नीति का समर्थन किया।

भारत और अमेरिका के मध्य सहयोग के आधार –

नेहरू युग में कई सारे मसलों पर भारत और अमेरिका में मत भेद के बाबजूद कतिपय क्षेत्रों में पर्याप्त सहयोग का आधार मौजूद था। इस सम्बन्ध में नेहरू का स्पष्ट मत था कि " दोनों देश लोकतांत्रिक संस्थाओं और लोकतान्त्रिक जीवन पद्यति के प्रति समान विश्वास रखते है। और शान्ति एवं सुरक्षा एवं स्वतंत्रता की रक्षा कृत संकल्प है। ऐसी स्थिति में इन दोनों के बीच मैत्री और पारस्परिक सहयोग होना अत्यन्त स्वाभाविक है। अक्टूवर 1949 में प0 जवाहर लाल नेहरू ने अमेरिका की यात्रा की वहॉ उनका भावभीना स्वागत हुआ। 1951 में चेस्टर बोल्स अमेरिका राजदूत बनकर भारत आये और 1951 से 1954 तक दोनों देशो के पारस्परिक सम्बन्धों मे पर्याप्त सुधार हुआ अमेरिका ने भारत को आर्थिक सहायता देना शुरू किया और भारत की प्रथम पंचवर्शीय योजना की सफलता की कामना की। सन् 1956 मे स्वेज नहर संकट के समय अमेरिका द्वारा अपनायी गयी नीति का भारत ने समर्थन किया सन् 1956 में नेहरू ने दूसरी अमरीकी यात्रा की नेहरू का सर्वत्र अमेरिका मे स्वागत हुआ।

नवम्बर 1960 मे जे0एफ0 कैनडी अमेरिका के राष्ट्रपति बने और उनके नेतृत्व में अमेरिका ने अपनी विदेश नीति में अत्यन्त साहस पूर्ण तथा दूरगामी परिवर्तन किये। उससे पूर्व अमेरिका यह बात मानने के लिए तैयार नही था कि कोई राष्ट्रसाम्यवाद और लोकतंत्र के सघर्ष में तटस्थ रह सकता है।

कैनडी ने निर्गुटता को मान्यता दी और भारत अमरीकी सम्बन्धों को मधुरिमा प्रदान की। कांग्रेस के सम्मुख अपने प्रथम भाषण में कैनेडी ने नेहरू के उच्च आदर्शवाद की सार्वजनिक रूप से प्रसंशा की राष्ट्रपति बनने के पूर्व ही, कैनेडी भारत समर्थक थे। उन्होंने सीनयेटर के रूप में अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को दी जाने वाली सैनिक सहायता का तीव्र विरोध किया था। अक्टूबर 1962 में जब चीन ने भारत का आक्रमण किया तब भारत के अनुरोध पर कैनेडी ने बिना किसी शर्त पर पर्याप्त मात्रा में भारत को युद्ध सामग्री भेजी। कैनेडी का स्पष्ट मत था कि " हम चाहते है कि लाल चीन और भारत की इस प्रतिस्पर्धा में भारत विजयी हो। हम चाहते है कि मुक्त और उभरते हुए ऐशिया का नेतृत्व मुक्त और उभरता हुआ भारत करे।"

3. लाल बहादुर शास्त्री और भारत अमेरिका सम्बन्ध (1964–65)

7 दिसम्बर 1964 को भारत एवं अमेरिका के बीच नई दिल्ली में एक समझौता हुआ, जिसके अनुसार ही अमेरिका ने भारत को तारापुर मे आणविक संयन्त्र सथापित करने के लिये 8 करोड़ डालर दिये। 1964 मे भारत के विभिन्न भागों मे भारत , ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया और अमेरिका के वायु सैनिको ने सम्मिलित रूप से शैक्षणिक अभ्यास कियें। 1964 में भारत में खाद्यान्न का विकट संकट उपस्थिति होने पर भी पी0 एल0 480 के अर्न्तगत अमेरिका ने बड़ी मात्रा में खाद्यानों की पूर्ति की। किन्तु 1965 में भारत अमरीकी सम्बन्धों मे तनाव आया। लाल बहादुर शास्त्री के नेत्रत्व में भारत ने गुटनिर्पेक्षता की नीति का दृढता से पालन किया और इसी नीति का उन्होंने अपेक्षाकृत अधिक यर्थाथवादी स्वरूप प्रदान किया और इसी नीति का अनुशरण करते हुए जब शास्त्री युग में अमेरिका ने उत्तरीवियतनाम पर भारी मात्रा में बम वर्शा करना शुरू कर दिया तो भारत ने इसकी कटु आलोचना की जिसके कारण अमेरिका ने भारत के विरूद्ध तीब्र प्रतिक्रिया हुई। 1965 में भारत पाक युद्ध के दौरान पाकिस्तान द्वारा भारत के विरूद्ध अमेरिकन शस्त्रास्त्रों के प्रयोग के कारण भी भारत अमेरिकी समबन्धों मे उग्रता पैदा हो गई। इस युद्ध के दौरान अमेरिका का रूख भारत विरोधी रहा ये उल्लेखनीय है कि 1965 में अमेरिका भारत पाक युद्ध के दौरान 6 जहाजों में भारत के लिए जो सामग्री भेजी गई थी उसे अमेरिका ने भारतीय तट से 15 कि0 मी0 दूरी से वापस बुला लिया। संक्षेप में 1965 के भारत पाक युद्ध में भारत अमेरिका सम्बन्ध तनाव पूर्ण हो गये थे। यद्यपि अमेरिका तटस्थ रहा था परन्तु उसने भारत के प्रति तटस्थ तथा पकिस्तान के प्रति मित्रतापूर्ण व्यवहार किया।

4. श्री मती इन्दिरा गान्धी और भारत–अमेरिका सम्बन्द्ध–(1967–77 तथा 1980–84 तक)

10 जनवरी 1966 को लाल बहादुर शास्त्री के देहान्त के बाद के बाद श्री मती इंदिरा गॉधी भारत की प्रधानमंन्त्री बनीं। इंदिरा गॉधी युग में अमेरिका के साथ भारत के सम्बन्ध नफरत भरी मुहब्बत की विशेष भावना से प्रभावित रहे है। राष्ट्रपति जॉनसन ने भारत अमरीकी सम्बन्धों में सुधार की दृष्टि से श्री मती इंदिरा गांधी से अमेरिका यात्रा का अनुरोध किया जिसे स्वीकार कर 18 मार्च 1967 को भारतीय प्रधान मंत्री ने अमेरिका की यात्रा की। भारतीय प्रधानमंन्त्री की इस यात्रा से यह आशा की जाती थी कि दोनो देशों के बीच सहयोग का एक नया अध्याय शुरू होगा। किन्तु अमेरिका की दबाव नीति के कारण कोई अनुकूल परिणाम नही निकला। अमरीकन दबाव के कारण भारत को रूपये का अवमूल्यन करना पड़ा। भारत पाक

युद्ध के बाद अमेरिका ने बन्द कि गई आर्थिक सहायता को पुनः प्रारम्भ किया किन्तु भारत को अमेरिका द्वारा दी जाने वाली आर्थिक सहायता नगण्य थी। उल्लेखनीय है कि 1968 में अमेरिका ने भारत को जो आर्थिक सहायता स्वीकृत कि वह पिछले बीस वर्षो की तुलना में सबसे कम थी । जिसके कारण भारत की योजनाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। अप्रैल 1967 में नागा विद्रोही फिजो को अमेरिका मे आश्रय दिया गया।

बंगला देश संकट और अमेरिकी भूमिका –

1971 में बंगला देश संकट एवं भारत पाक युद्ध में अमेरिकी भूमिका विचित्र रही। 25 मार्च 1971 को पाकिस्तान को याह्या खॉ की सरकार के आदेश से पाकिस्तानी आतंक से पीड़ित पूर्वी पाकिस्तान कि जनता पर खुले आम अत्याचार करना शुरू कर दिया गया । इस आतंक से पीड़ित पूर्वी पाकिस्तान के लगभग 1 करोड़ शरणार्थियों के भरण पोषण का भार भारत पर आ पड़ा। भारत ने अमेरिका से शिकायत की कि पाकिस्तान अमेरिकी हथियारों का दुरूपयोग कर रहा है। भारत ने अमेरिका से आग्रह किया कि पाकिस्तान अमेरिका के प्रभाव क्षेत्र में है। इसलिए पाकिस्तान पर दबाब डाले कि वह बंगला देश में अत्याचार बन्द करें। ताकि बंगलादेश के शरणार्थियों का भारत में आना बन्द हो। अमेरिका ने इसे पाकिस्तान का आन्तरिक मामला बताकर टाल दिया और पाकिस्तान को अन्य अमेरिकी सहायता मिलती रही। भारतीय दृष्टिकोण को समझाने हेतु 6नवम्बर 1974 को प्रधान मंत्री इंदिरा गॉधी अमेरिका गई किन्तु निक्सन ने इंदिरा गॉधी के तर्को को गम्भीरता से नही लिया। अगस्त 1971 में भारत रूस संन्धि हो जाने पर अमेरिकन विदेश नीति को गहरा आघात लगा।

3 दिसम्बर 1971 भारत और पाकिस्तान के विरूद्ध युद्ध प्रारम्भ हो गया। युद्ध प्रारम्भ होने के बाद अमेरिका ने युद्ध प्रारम्भ करने का सारा दोष भारत पर लगाते हुए आर्थिक सहायता बन्द कर दी। जबकि पाकिस्तान को दी जाने वाली सहायता जारी रही। इस समय अमेरिका ने सुरक्षा परिषद में भारत विरोधी प्रस्ताव प्रस्तुत किये किन्तु सोवियत संघ के बीटो के कारण वह निरस्त हो गये। अमेरिका ने न केवल पाकिस्तान को राजनायिक सर्मथन प्रदान किया वरन् भारत के विरूद्ध **युद्ध पोत राजनय** का प्रयोग करते हुए सातवॉ जहाजी बेड़ा बंगाल की खाड़ी में भेज कर भारत को प्रत्यक्षतः धमकी दी 15 दिसम्बर 1971 को अणुशस्त्र सम्पन्न ये बेड़ा टोकिन की खाड़ी से बंगाल की खाड़ी में आया भारतीय राजदूत एल0 के0 झॉ ने अमेरिका को चेतावनी देते हुए कहा के पूर्वी पाकिस्तान से पश्चिमी पाकिस्तान की सेना को

निकालने का प्रयास शत्रुता पूर्व कार्य माना जायेगा क्यों कि यही सेना पश्चिमी मोर्चे पर भारत के विरूद्ध लड़ेगी''। हिन्द महासागर में सोवियत संघ के नौ सेनिक बेड़े कि उपस्थिति ने अमेरिका के युद्ध पोत राजनय को असफल बना दिया इस तरह से भारत अमेरिकी सम्बन्धों में तनाव पूर्ण स्थिति रही।

चीनी अमरीकी साठ–गॉठ –

राष्ट्रपति निकसन के पदारूढ़ होने के बाद 1969 के चीन सें मैत्री सम्बन्ध स्थापित करने के अमेरिकी निर्णय से भारत में चीन के प्रभाव कम करने के लिए भारत को अमेरिकी सहायता का प्रशन स्वतः ही समाप्त हो गया। इसके विपरीत अमेरिका ने शीघ्र ही चीन को दक्षिण एशिया में एक प्रभुत्व सम्पन्न सत्ता के रूप में स्वीकार कर लिया। फरवरी 1972 में निक्सन चीन गये। निक्सन ने वहाँ भारत की आलोचना की निकसन चाऊँ वार्ता पर श्री मती गॉधी ने चेतावनी दी अमेरिका और चीन ने मिल कर ऐशिया और भविष्य के बारे मे कोई निर्णय किया तो अन्य एशियाई राष्ट्र से स्वीकार नही करेगे। निकसन की यात्रा की समाप्ति पर जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में पाक क्षेत्र से भारतीय सेनाओं की वापसी और जम्मू कश्मीर की जनता को आत्म निर्णय देने की मांग की भारत ने इसे अपने आन्तरिक मामलों मे हस्तक्षेप की संज्ञा देकर इसका कड़ा विरोध किया।

ईरान को हथियारों की आपूर्ति –

15 मार्च 1973 को अमेरिका ने पाकिस्तान को पुनः सहायता देने का निर्णय लिया इस पर भारत ने तत्कालीन विदेश मंत्री स्वर्ण सिंह ने लोक सभा में घोषणा की पाकिस्तान को शत्रुओं की पूर्ति करना भारत अमेरिका सम्बन्धों के सामान्यीकरण में बाधक होगा। मई 1973 को अमेरिका ने ईराक को बड़े पैमाने पर शस्त्रस्त्र देने कि योजना बनायी भारत के लिये यह चिन्ता का विषय था। 1971 भारत पाक युद्ध के बाद पाकिस्तान ने ईराक के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाने शुरू कर दिये और ईरान ने पाकिस्तान को हर सम्भव सहयता देने का वादा भी किया था।

डियागोगार्शिया में अमरीकी अड्डा –

डियागोगार्शिया हिन्द महासागर में एक छोटा सा टापू है। जो कि ब्रिटेन के अधिकार मे था। बाद में इसे अमेरिका ने खरीद लिया 1974 में अमेरिका ने इस द्वीप में अपना एक

अत्यधिक आधुनिक नौ सैनिक अड्डा बनाने का निश्चय किया इससे भारत की सुरक्षा को खतरा उत्पन्न हो गया और भारत–अमेरिकी सम्बन्धों में कटुता आ गई। 8 फरवरी, 1974 को श्री मती इदिंरा गॉधी ने कहा कि " हिन्द महासागर मे परमाणु अड्डे कि स्थापना सयुक्त राष्ट्रसंघ के प्रस्ताव के विरूद्ध है। इस प्रकार के कदमों से आम तौर पर संघर्ष कि स्थति उत्पन्न होती है।" जून 1980 मे अमेरिकी राष्ट्रपति कार्टर ने तारापुर परमाणु बिजली घर के लिए समृद्ध यूरेनियम की आपूर्ति के लिए सरकारी आदेश पर हस्ताक्षर कर दिये किन्तु अमेरिकी सीनेट एवं प्रतिनिधि सभा कि विदेश सम्बन्ध समितियों में भारत को 38 टन यूरेनियम देने से इनकार कर दिया अमेरिकी राष्ट्रपति नियन्त्रण 27 जुलाई को श्री मती इदिंरा गॉधी नौ दिन की यात्रा पर गई अमेरिका इस बात पर सहमत हो गया कि भारत अपनी तारापुर भट्टी के लिए ईधन फ्रांस से ले सकता है । 15 मई 1984 को अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज बुश ने भारत की यात्रा की जार्ज बुश ने स्वीकार किया कि अनेक मुद्दो पर भारत व अमेरिका के बीच मतभेद है। इसके बाबजूद आर्थिक सांस्कृतिक वैज्ञानिक और तकनीकि क्षेत्रों में सहयोग बढ़ रहा है।

5. जनता सरकार और भारत अमेरिकी सम्बन्ध–

जनता पार्टी की राजनीति को देखकर ऐसा लगता है कि जनता पार्टी के सत्तारूढ़ होने से अमेरिका सम्बन्धों मे गुणात्मक सुधार होगा। जब 1977 के चुनाव के दौरान जनता पार्टी के नेता असली या सच्ची गुट निरपेक्षता कि बात करते तो उक्त सम्भावना अधिक पुश्ट होती थी।

न्यूर्याक टाइमस ने इसे जनता पार्टी की जीत को दुनिया के सभी लोक तन्त्रों के लिए प्रेरणा दायक बताते हुए कहा था अमेरिका के प्रति सत्ता रूढ दल का रूख मैत्री पूर्ण होगा। राष्ट्रपति कार्टर ने अपने बधाई संदेश में कहा था" हम दोनों मिलकर विश्व शान्ति न्याय तथा आर्थिक प्रगति के समान लक्ष्यों को पूरा करने के लिए बहुत कुछ कर सकते है। अमेरिकी नीति निर्माताओं को पता चल गया कि अमेरिकी सहायता प्राप्त करने के लिए भारत पहले कि तरह लालायित नही हैं तथा परमाणु अप्रसार संन्धि के मामले में भी भारत की राय को बदलाव लाना आसान नही हैं।[9]

डा0 बेद प्रकाश वैदिक के शब्दों में "कुल मिलाकर यह स्पष्ट हो गया है कि यदि सच्ची गुट निरपेक्षता का मतलब भारतीय परमाणु स्वयन्त्रों को अमेरिकी निगरानी में रख देना

लगाया जा रहा था। दो ऐसी गुटनिरपेक्षता को जनता सरकार ने ठुकरा दिया। "जनता सरकार कि इस दृढ़ता कि प्रशंशा भारतीय साम्यवादी दल ने की। कार्टर की यात्रा निश्फल नही हुई। बल्कि भारत – अमेरिकी संयुक्त आयोग की बैठक हुई जिसमें तीन क्षेत्रों आर्थिक और व्यापारिक , विज्ञान और तकनीकी तथा शिक्षा और संस्कृति में सहयोग बढ़ाने हेतु निर्णय हुये। अमेरिका ने अपने लैण्डसेट उपग्रह की सुविधायें भारत को देने का वादा किया। पूर्वी नदियों की जल शक्ति के दोहन में सहायता करने का आष्वासन दिया। तथा अन्तरिक्ष प्रयोगो के लिए नासा कि अनेक सुविधायें देने का संकल्प प्रकट किया। उद्योग कृषि तथा शिक्षा के क्षेत्र में भी सहयोग की नई योजनाये स्वीकृत हुई। भारत को 6 करोड़ डालर की सहायता देने का प्रस्ताव काग्रेस पहले ही पारित कर चुकी थी। जून 1978 में प्रधान मंत्री तथा विदेश मन्त्री वाजपेयी ने अमेरिका की यात्रा की इस यात्रा के दौरान यह स्पष्ट हो गया कि जनता सरकार भारत की परम्परागत गुटनिर्पेक्षता की नीति को छोड़ने के लिये तैयार नही है। 'सेन फ्रांसिस्को मे वर्ल्ड अफेयर्स कौंसिल " को सम्बोधित करते हुये श्री देसाई ने कहा था कि "हमारी गुटनिपेक्षता केवल नीति ही नही है। यह एक धर्म हैं। इसके द्वारा हमें अन्तर्राष्ट्रीय मामलों को गुण दोश के आधार पर परखने में सहायता मिलती है। श्री वाजपेयी ने दूसरी सभा को सम्बोधित करते हुये कहा था कि " भारत न पश्चिम समर्थक है। न पूर्व समर्थक, लेकिन वह भारत समर्थक है। दोनो भारतीय नेताओं ने अमरीकी जनता को यह बताने का प्रयत्न किया कि भारत की परमाणु नीतियॉ शान्तिपूर्ण है। किन्तु इसका यह मतलब नही कि वह परिमाणु अप्रसार सन्धि पर दस्तखत करने के लिए तैयार हो जायेगा। मोरार जी ने एक दूरदर्शन भेंट वार्ता मे कहा कि "यह सन्धि भेद भाव पूर्ण है। तथा हमारे आत्म सम्मान के विरूद्ध है। " यदि अमरीकी काग्रेस अमेरिका के सारे परमाणु संयत्रो को अन्तराष्ट्रीय निगरानी के लिये खोल दे तो हम भी अपने संयन्त्रो को खोल देगें। कार्टर ने मोरार जी को स्पष्ट रूप से आश्वस्त किया कि "अमरीकी कानून के तहत वे तारापुर सहयोग जारी रखने का भर यक प्रयत्न करेगे " इससे स्पष्ट हो जाता है। कि न भारत ने अपना दृष्टिकोण बदला और न अमेरिका ने नया अध्याय शुरू किया।

मेरार जी देसाई ने विभिन्न अवसरो पर अपनी स्पष्ट वादिता के द्वारा यह बता दिया कि जनता सरकार अमेरिका की हर बात को उचित नही मानती। हिन्द महासागर क्षेत्र में से फौजी अड्डे हटाने की बात श्री देसाई ने जोरदार ढंग से कही तो जायरे तथा अन्य अफ्रीकी देशों

के मामले मे साफ–साफ कहा कि वहाँ सोवियत संघ तथा क्यूबाई हस्तक्षेप की बात ठीक है। तो पश्चिमी देशो के हस्तक्षेप का रूसी आरोप ठीक ही है। अफ्रीका को दोनो तरफ से हस्तक्षेप मुक्त किया जाना चाहिये। इसी प्रकार अफगानिस्तान मे हुई खल्की क्रान्ति के बारे में अमेरिका की हाँ मिलाने के बजाय श्री देसाई ने उसे अमेरिका की हाँ मे हाँ मिलाने के बजाय श्री देसाई ने उसे अफगानिस्तान का आन्तरिक मामला बताया तथा भारत–अफगान सम्बन्धों के सामान्य रहने पर बल दिया। उत्तर दक्षिण संवाद तथा नई अर्थ व्यवस्था के प्रश्न पर श्री देसाई ने समृद्ध राष्ट्रो के उपभोक्तावाद तथा लालची रवैये की कडी आलोचना की। उन्होने सोवियत संघ के मानव अधिकारो के प्रश्न पर कार्टर की राय को केवल सैद्धान्तिक तौर पर ही माना लेकिन व्यवहार मे अनुपयोगी बताया । इसी प्रकार श्री देसाई ने सितम्बर 1978 मे कैम्प डेविड मे हुये मिश्र–इजराइल समझौते का स्वागत जरूर किया। किन्तु कार्टर और सादात को लिखे जवावी पत्रो मे उन्होने यह स्पष्ट कर दिया कि जब तक फिलिस्तीनियो के अधिकारो को मान्यता नही मिलती तथा इजराइल सारी अधिकृत जमीन खाली नही करता, पश्चिम ऐशिया स्थापित नही हो सकती।"

6. राजीव गॉधी और भारत अमेरिका सम्बन्ध (1984–1989)–

अक्टूबर 1984 को राजीव गान्धी भारत के प्रधानमन्त्री बने। राजीव गॉधी चाहते थे कि भारत और अमेरिका सम्बन्धो मे सकारात्मक सुधार हो। नबम्वर 1984 मे भारत और अमेरिका मे उच्च तकनीको हस्तान्तरण सम्बन्धी एक समझौता हुआ। इस समझौते मे पहली बार अमेरिका ने भारत की यह शर्त स्वीकार की कि अगर भारत अमेरिका से कोई तकनीकि खरीद कर ले आता है। तो वह किसी विदेशी जॉच पड़ताल को बर्दाश्त नही करेगा। अमरीकी प्रशासन ने तो तीन क्षेत्रों में संवेदनशील तकनीकी देने का निर्णय लिया। इस प्रकार जारी की गयी तकनीकी में भारतीय सशस्त्र सेना के लिये सुपर कम्प्यूटर भारतीय नौ सेना के फ्रिगेटो के लिये डेटा डिस्टीव्यूटम सिस्टम तथा भारतीय वायु सेना के हल्के युद्धक विमान के लिये जनरल इलेक्ट्रिक 404 इंजन शामिल है। जून 1985 मे प्रधान मंत्री राजीव गांधी ने अमेरिका की यात्रा की। रीगन ने राजीव गांधी का स्वागत करते हुये उनकी यात्रा को सन् 1949 मे जवाहर लाल नेहरू की खोज यात्रा से जोड़ा। श्री राजीव गॉधी ने रीगन से अनुरोध किया कि वे पाकिस्तान के परमाणु कार्यक्रम रोकने के लिये दबाब डाले उसके उत्तर मे रीगन ने कहा कि अमेरिका को भी पाकिस्तान के परमाणु कार्यक्रम को रोकने के लिये दबाब डाले उसके उत्तर में रीगन ने

कहा कि अमेरिका को भी पाकिस्तान के परमाणु कार्यक्रम की चिन्ता है। 13 जून को श्री राजीव गान्धी ने कांग्रेस के संयुक्त अधिवेशन को सम्बोधित करते हुये हिन्द महासागर के सैनिकीकरण और पड़ोसी देशो को की जाने वाली हथियारों की आपूर्ति से उत्पन्न होने वाले खतरो की चर्चा की। यहाँ यह ध्यान देने वाले खतरो की चर्चा की 23 अक्टूबर को जब राष्ट्रपति रीगन से भेंट हुई तो उन्होंने पाकिस्तान के परमाणु शस्त्र बनाने के कार्यक्रम पर अपने देश की चिन्ता बतायी। 18 जुलाई 1986 को अमरीकी विदेश विभाग के एक प्रवक्ता ने कहा कि अमेरिका खालिस्तान की मांग का सर्मथन नही करता। 9 सितम्बर 1987 को नई दिल्ली मे अमरीकी राजदूत गुन्थर डीन्स तथा विदेश सचिव के० पी० एस० मेनन ने एक समझौते पर हस्ताक्षर किये इसके अनुसार अमेरिका कुछ शर्तो पर भारत को सुपर कम्प्यूटर देने पर सहमत हो गया। अक्टूबर 1989 मे श्री राजीव गॉधी ने अमेरिका की यात्रा की। और राष्ट्रपति रीगन और रक्षा सचिव वाइन वर्जर आदि अमरीकी नेताओ से भेट की। पाकिस्तान द्वारा बनाये जा रहे परमाणु व अमरीकी सैन्य सहायता आदि मुद्दो पर बातचीत हुई।

7. वी० पी० सिंह चन्द्रशेखर और भारत अमेरिका सम्बन्ध –

विश्व नाथ प्रताप सिंह और चन्द्रशेखर (दिसम्बर 1985 से जून 1991 तक) लगभग डेढ वर्ष प्रधान मन्त्री रहे। इस अवधि मे भारत अमरीकी सम्बन्ध सामान्य रहे। अमेरिका भारत का सबसे बड़ा व्यापार भागीदार रहा। भारतीय निर्यातों की उसकी हिस्सेदारी 18.5 प्रतिशत और अपने आयातो के लिये लगभग 11.5 % रही। अमेरिका ने अप्रैल 1991 से स्पेशल 301 के तहत भारत पर प्रतिबन्ध लगाने का निर्णय लिया। बाद मे इसे स्थगित कर दिया गया खाड़ी संकट के दिनों मे भारत ने आन्तरिक राजनीति के दबाब मे अमरीकी विमानों को ईधन भरने से रोका जिसे अमेरिका ने पसन्द नही किया।

8. पी० वी० नरसिंह राव–और भारत अमेरिका सम्बन्ध –

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति मे गुणात्मक परिवर्तन आया इससे भारत अमेरिका सम्बन्धों पर रचनात्मक प्रभाव पड़ा और द्विपक्षीय सम्बन्धों को मजबूत बनाने के प्रयत्न प्रारम्भ हुये संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिशद की शिखर बैठक के दौरान प्रधानमन्त्री पी० वी० नरसिंह राव ने न्यूयार्क मे राष्ट्रपति बुश से मुलाकात की। रक्षा क्षेत्र मे एक दूसरे के देशो की उच्चस्तरीय यात्राऐ की गई। अमरीकी सेना के प्रशान्त कमाण्डर और अमरीकी कमाण्डर इन चीफ प्रशान्त कमाण्डर ने भारत की यात्रा की। भारतीय नौसेना प्रमुख की यात्रा के बाद

अमरीकी नौ सेना कार्यो के प्रमुख ने भारत की यात्रा की अगस्त 1991 मे भारत के सेनाध्यक्ष ने अमेरिका की यात्रा की। फिर भारत के रक्षा मंन्त्री शरद पवार ने अमेरिका की यात्रा की तथा हिन्द महासागर मे भारत अमरीकी नौ सेना के संयुक्त अभ्यास की इजाजत दी गयी। रक्षा प्रौद्यौगिकी के क्षेत्र मे भारत अमेरिका सहयोग मे मुख्यता हल्के लड़ाकू विमान परियोजना मे प्रगति हुई। अमेरिका भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार होने के साथ साथ भारत मे सबसे बड़ा विदेशी पूँजी निवेशक है। वर्ष 1993 के लिये द्विपक्षीय व्यापार की प्रवृत्तियो से यह पता चलता है। कि कुल व्यापार की प्रवुत्तियों से यह पता चलता है कि कुल व्यापार 7 विलियन अमरीकी डॉलर तक हो जायेगा जबकि बर्श 1992 के दौरान कुल व्यापार 5.69 विलियन अमरीकी डॉलर था। आर्थिक उदारीकरण उपायों का स्वागत किया है, इस प्रकिया को उत्साहित किया है। और बहुपक्षीय संस्थाओं से ऋण के लिये भारत के अनुरोध का समर्थन किया है। भारत मे संयुक्त उद्यमी के रूप मे कार्य कर रही समस्त विदेशी कम्पनियों मे करीब 30 प्रतिशत अमरीकी कम्पनियॉ है। भारत मे अमेरिका निवेश और प्रौद्यौगिकी का महत्वपूर्ण श्रोत है। विदेशी निवेश एवं प्रौद्योगिकी पर उदार नीतियो से इन क्षेत्रो मे भारत अमेरिका सहयोग को नई गति मिली सरकार ने अमरीकी कम्पनियों के अनेक महत्वपूर्ण प्रस्तावो का अनुमोदन किया 1991 मे 185 करोड़ रूपये के निवेश प्रस्तावों को अनुमोदन दिया गया।

भारत ने बदले परिपेक्ष्य मे अपनी विदेश नीति मे परिवर्तन किये। इजराइल के साथ अपने राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित किये एवं परम्परागत नीति मे परिवर्तन कर संयुक्त राष्ट्र संघ मे लौकर्शी तथा टेनेर विमान विस्फोट के लिये जिम्मेदार लीबियाई आरोपियो को सौपने के अमेरिका फ्रांस एवं बिट्रेन के प्रस्ताव के पक्ष में मत दिया भारत द्वारा पश्चिम ऐशिया सम्बन्धी नीतियो मे परिवर्तन का संकेत तब मिला जब उसने संयुक्त राष्ट्र संघ के सन्1975 के इजराइल विरोधी प्रस्ताव को रद्द करने सम्बन्धी अमेरिका समर्थित नये प्रस्ताव का समर्थन किया। इन सब के बावजूद अनेक मुद्दो पर भारत–अमरीकी मतभेद सामने आये। अमेरिका चाहता था कि भारत परमाणु अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर कर दे और दक्षिण ऐशिया को परमाणु मुक्त क्षेत्र बनाने के लिये अमेरिका द्वारा प्रस्तावित पॉच देशो के सम्मेलन मे भाग ले। भारत ने स्पष्ट कर दिया कि वह वर्तमान स्थिति में परमाणु अप्रसार संन्धि पर हस्ताक्षर नही करेगा यह सन्धि समानता पर आधारित नही। भारत का रॉकेट प्राद्यौगिकी न देने के लिये

रूस पर अमेरिका ने दबाब डाला। अमेरिका का कहना था कि यह अनुबन्ध (रूसी अन्तरिक्ष ऐजेन्सी ग्लेब कास्मास तथा भरतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संस्थान संगठन –इसरो) प्रक्षेपात्र प्रौद्यौगिकी अप्रसार सन्धि का उल्लंघन है। जबकि भारत के अनुसार यह सौदा ऐसे रॉकेट वूस्टरो का था जिनका सैनिक प्रयोग हो ही नही सकता। भारत ने अपने प्रक्षेपात्र 'अग्नि' का परीक्षण अमरीकी दबाव मे ही लम्बे समय तक रोके रखा। पिछले दिनों अमेरिका ने भारत को अमरीकी मण्डियो से गेहू क्रय करने मे बाधाऐ डाली। हाल ही मे राष्ट्रपति क्लिंटन ने ऐसी संस्थाओ को पत्र लिखे जो अमेरिका मे बैठकर भारत विरोधी मंसूवे बनाती है। इस आषय का पहला पत्र उन्होने वासिंगटन स्थिति कश्मीरी अमेरिकन कांउन्सिल के सर्वे सर्वाडा0 गुलाम नवी फाई को लिखा था यह संस्था कश्मीर के भारत मे विलय का विरोध करती है। राष्ट्रपति क्लिंटन ने इस संस्था के साथ मिलकर कश्मीर मे शान्ति व्यवस्था वहाल करने का प्रस्ताव रखा। दूसरा पत्र क्लिंटन ने डेमोक्रेटक पार्टी के सांसद गेरी कॉन डिट के पत्र के उत्तर मे लिखा। इसमे उन्होने पंजाब मे उग्रवादियो और भारत सरकार के बीच तनाव की चर्चा की और सिखों के मानवाधिकारों की सुरक्षा की बात कही। राष्ट्रपति के इन पत्रो को भारत में क्षोभ होना स्वाभाविक था। इसी परिपेक्ष्य मे भारत के गृहमंत्री एस0 वी0 चव्हाण ने 2 मार्च 1994 को लोकसभा मे अमेरिका पर कश्मीर मामले में हस्तक्षेप का आरोप लगाया और कहा कि अमेरिका को भारत मे कश्मीर के विलय अथवा मानवाधिकारों के बारे में प्रश्न उठाने का कोई अधिकार नही है।

भारत अमेरिका सम्बन्धों की प्रगाढ़ता मे कतिपय प्रमुख बाधाऐ आज भी बनी हुई है। जो इस प्रकार है – प्रथम पंजाब–कश्मीर मे मानवाधिकार हनन का मामला – अमेरिका पंजाब और कश्मीर मे भारत द्वारा ताकत के इस्तेमाल पर चिन्ता जताता रहा है। जबकि भारत का रूख यह है। कि अमेरिका को इन दोनों राज्यों मे आतंकवादियों द्वारा की जा रही निर्दोशों की हत्याओ के बारे मे भी बोलना चाहिये। द्वितीय दक्षिण ऐशिया क्षेत्र में परमाणु अस्त्रो का प्रसार–अमेरिका चाहता है। जिससे कि भारत क्षेत्रीय सन्धि कर ले जब कि भारत चाहता है कि समझौता अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का हो। तृतीय –पेटेण्ट के बारे मे भारतीय कानून अप्रैल 1991 मे अमरीकी प्रशासन ने भारत को विशेश 301 धारा में डाल दिया था। अमेरिका का कहना है। कि पेटेण्ट के बारे में भारतीय कानून उसके हितो के विपरीत है। इसलिये वह उसमे बदलाव चाहता है। लेकिन भारत का तर्क है कि विकसित देशो से हमारी तुलना न की जाय।

प्रधानमन्त्री पी0 वी0 नरसिंह राव की अमेरिका यात्रा के समापन पर (मई 1994) दोनों देशो के बीच सम्बन्धों का नया आयाम खोलने के उद्देश्य से 8 वर्शों के अन्तराल के बाद भारत अमेरिका संयुक्त आयोग को पुनजीर्वित करने और दोनो देशो के बीच सैनिक, असैनिक एवं सेवास्तर का सहयोग बढ़ाने का फैसला किया गया। संक्षेप में भारत और अमेरिका राजनीतिक, आर्थिक तथा रक्षा सहित विभिन्न क्षेत्रो में नई भागीदारी निर्माण के लिए सहमत हो गये है।

9. संयुक्त मोर्चा काल मे भारत अमेरिका सम्बन्ध –

एच0 डी0 देवगौडा काल 1जून 1996 से अप्रैल 1997 देवेगौडा 1 जून 1996 को प्रधान मन्त्री पद की शपथ ली। बर्श 1996 –97 की कालावधि भारतीय विदेश नीति के दस्तावेजों में एक ऐसे कालांश के रूप में दर्ज की जाएगी जिसमें भारत ने विश्व के शक्तिशाली देशों के दवाव तथा अन्तर्राश्ठीय विरादरी में अलग थलग पड जानें के बावजूद अपने राष्ट्रीय हितो के संवर्धन हेतु व्यापक परिमाणु परीक्षण प्रतिबन्ध सन्धि (सी0 टी0 वी0 टी0)के वर्तमान स्वरूप पर हस्ताक्षर करने से इंकार कर दिया। 20 अगस्त 1996 को तो भारत ने जेनेवा मे इस विवादास्पद सन्धि के मसौदे को औपचारिक रूप से वीटो भी कर दिया। सी0 टी0 वी0 टी0 पर भारत ने अपना विरोध दर्ज करते हुये स्पष्ट शब्दो मे कहा कि यह सन्धि परमाणु हथियारो को पूरी तरह से समाप्त करने के लक्ष्य को पूरा नही कर रही है। इसलिये सन्धि के वर्तमान स्वरूप पर हस्ताक्षर नही करेगा।

इन्द्रकुमार गुजराल काल(21 अप्रैल 1997 से 18 मार्च 1998) भारत और अमेरिका के मध्य प्रत्यर्पण सन्धि

जून 1997 मे भारत और अमेरिका के बीच महत्वपूर्ण प्रत्यर्पण सन्धि पर हस्ताक्षर किये गये इस सन्धि के तहत दोनो ही देश एक दूसरे द्वारा वांछित ऐसे भगोड़े अभियुक्तो व अपराधियो का प्रत्यर्पण करेगे जो एक वर्ष से अधिक सजा के पात्र हो।

चाहे उनकी नागरिकता कोई भी हो सन्धि मे एक देश के अनुरोध पर दूसरे देश द्वारा किसी अपराधी को तुरन्त गिफतार करने की प्रकिया भी शामिल है। ताकि अपराधी फरार न हो सके।

राष्ट्रीय जनतान्त्रिक गठबन्धन सरकार और भारत अमेरिका सम्बन्ध अटल बिहारी काल 19 मार्च 1998

भारत के नाभिकीय परीक्षणो के बाद अमेरिका की प्रतिक्रिया नितान्त आलोचनात्मक तथा नकारात्मक रही। अमेरिका ने पी 5 तथा जी 8 की बैठको मे नाभिकीय परीक्षणो पर

दण्डात्मक आर्थिक प्रतिबन्ध लगाने की पहल की। उन्होने भारतीय सरकारी संगठनो, अनुसंधान संस्थानो, सरकारी क्षेत्र, के उपक्रमो तथा निजी कम्पनियो की एक सूची जारी की जिन पर प्रतिबन्ध लगाया गया। बाद मे अमेरिका ने भारत के विरूद्ध लगाये गये प्रतिबन्धो को आशिंक रूप से उठाने की घोषणा की। ये एक्सिम ओपेक, टी0 डी0 ए0 वित्त पोशण तथा सैन्य प्रसिद्ध प्रशिक्षण से सम्बन्धित है। कारगिल मे पाकिस्तान की घुसपैठ के मुद्दे पर राष्ट्रपति क्लिंटन ने पाक प्रधानमन्त्री नवाज शरीफ से कहा कि वह वास्तविक नियन्त्रण रेखा से अपनी सेना हटा ले और तनाव समाप्त कर ने के लिये भारत के साथ सीधी बात चीत करे। अमेरिका ने भारत के उस दृष्टिकोण का एक बार फिर कड़ाई से अनुमोदन किया कि वास्तविक नियन्त्रण रेखा उल्लघनीय नही है। 22 वर्षो बाद किसी अमरीकी राष्ट्रपति की भारत यात्रा दोनो देशो के रिश्तो मे बदलाव लाने की दिशा मे प्रधानमंत्री वाजपेयी की महत्वपूर्ण राजनायिक उपलब्धि है। 21 मार्च 2000 को राष्ट्रपति किंलटन की भारत यात्रा के अवसर पर दोनो देशो ने अपने सम्बन्धो की भविष्य की दिशा को लेकर एक दृष्टिकोण पत्र जारी किया। इसमे दोनो देशो के शासनाध्यक्षों के बीच नियमित रूप से शिखर बैठक, सुरक्षा तथा परमाणु , अप्रसार पर चल रही बातचीत को गति प्रदान करने , आपसी सम्बन्धों तथा अन्य मुद्दो की समीक्षा करने और आंतकवाद से और अधिक कारगर ढ़ग से मिलकर निपटने पर सहमति व्यक्त की गई। दस्तावेज जिसे **''दृष्टिकोण पत्र 2000''** नाम दिया गया है। भारत–अमेरिका के आपसी सम्बन्धों को प्रगाढ़ बनाने के लिये आठ सूत्री कार्यक्रम की घोषणा की गयी है।

प्रधानमंत्री वाजपेयी की अमेरिका यात्रा –

भारत के प्रधानमन्त्री सितम्बर 2000 मे 11 दिन की अमेरिका यात्रा पर रहे। अमेरिका प्रस्ताव के दौरान 13–17 सितम्बर तक वह अमरीकी सरकार के मेहमान थे। 14 सितमबर को उनहोने अमरीकी कांग्रेस के दोनो सदनो की संयुक्त बैठक को सम्बोधित किया। विकास के मामले मे भारत मे भारत – अमरीकी सम्बन्धो का आवाहन नई दिल्ली मे करने की भी उनहोने पेशकश की। अमरीकी सांसदो को उन्होने बताया कि विश्व का कोई अन्य देश आंतकवादी हिंसा का उतना शिकार नही हुआ है। जितना भारत को गत दो दशको से होना पड़ा है। आंतकवाद से लड़ने के लिये उनहोने भारत व अमेरिका के बीच नजदीकी सहयोग का आवाहन किया। परमाणु अप्रसार पर बोलते हुये बिना कहा कि अप्रसार के अमरीकी प्रयासो मे भारत कोई बाधक बनना नही चाहता। उन्होने स्पष्ट किया कि भारत इस मामले मे अमेरिका

की चिन्ता समझता है तथा यह चाहता है कि अमेरिका भी भारत की सुरक्षा चिन्ताओ को समझे। अफगानिस्तान के तालिबान प्रशासन द्वारा आतंकवादियो द्वारा दी जा रही शरण व सहायता के मुद्दे पर भारत – अमरीकी संवाद को जारी रखने को दोनो देशो मे सहमति हुई। अमेरिका ने सकल्प जताया कि वह कश्मीर विवाद मे हस्तक्षेप नही करेगा और भारत ने इस बात के लिये सहमति दी कि सी0 टी0 वी0 टी0 पर हस्ताक्षर करने तक परमाणु परीक्षणो पर स्वघोषित रोक को जारी रखेगा। पारस्परिक आर्थिक सहयोग बढ़ाने के उद्देश्य से दोनो देशो के बीच ऊर्जा ई–कामर्स व बैंकिंग क्षेत्र की परियोजनाओ के लिये 6 अरब डालर के पॉच व्यवसायिक समझौतों पर हस्ताक्षर भी इस यात्रा के दौरान सम्पन्न हुये।

रोवर्ट डी0 व्लेक विल की नियुक्ति –

मार्च 2001 मे बुश प्रशासन ने रोवर्ट डी व्लेक बिल को भारत मे नया अमरीकी राजदूत नियुक्ति किया। राष्ट्रपति वुश के अनुसार " व्लेक बिल यह जानते है कि विदेश नीति की मेरी विषय सूची मे भारत का महत्वपूर्ण स्थान है। " भारत द्वारा विदेश सेवा मे उच्चतम पद पर ललित मान सिंह की संयुक्त राज्य अमेरिका मे राजदूत पद पर नियुक्ति यह इंगित करती है कि वाजपेयी प्रशासन अमेरिका से प्रगाढ़ संवाद कायम करने हेतु कितना उत्सुक है।

ओवल कार्यालय में जसवन्त सिंह की जार्ज बुश से भेट–

अप्रैल 2001 मे भारत के विदेश मन्त्री जसवन्त सिंह ने वासिंगटन में राष्ट्रपति जार्ज बुश से भेट की। राष्ट्रपति ने प्रोटोकोल को दर किनार करते हुये भारतीय मेहमान को अपने ओवल कार्यालय मे मुलाकात के लिये आमन्त्रित किया। राष्ट्रपति बुश को भारत यात्रा का नियन्त्रण दिया गया जिसे उन्होने स्वीकार कर लिया। जसवन्त सिंह और अमरीकी रक्षा मन्त्री रोनाल्ड रमसफीलड के बीच बातचीत के दौरान भारत और अमेरिका ने रक्षा सहयोग पर समझौता किया।

आंतकवाद उन्मूलन के लिये अमेरिका को सहयोग –

प्रधानमंन्त्री वाजपेयी ने राष्ट्रपति बुश को भरोसा दिलाया कि 11 सितम्बर 2001 को अमेरिका पर जो आंतकवादी हमले हुए है। उनकी जॉच मे तथा आंतकवाद के खात्मे के लिये

अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासो में भारत अपना पूरा योगदान देगा। 9 नबम्वर 2001 को अमरीकी राष्ट्रपति बुश के साथ प्रधानमन्त्री वाजपेयी की वार्ता व्हाइट हाउस मे हुई। बातचीत मे जार्ज बुश ने स्पष्ट किया कि आंतकवाद के विरूद्ध अन्तर्राष्ट्रीय गठबंधन की लड़ाई का प्रमुख उद्देश्य अलकायदा "के नेटवर्क को ध्वस्त करना है। जून 2003 मे जी 8 शिखर सम्मेलन मे वाजपेयी की भेंट राष्ट्रपति बुश से हुई और बुश ने भरोसा दिलाया कि आंतकवाद के खात्मे के लिये वे जनरल मुशर्रफ को समझाएगे।

प्रोटोकॉल तोड़ राष्ट्रपति बुश आडवाणी से मिले –

10 जून 2003 को अमरीकी राष्ट्रपति प्रोटोकॉल को दर किनार करते हुये भारत के उपप्रधानमंत्री लाल कृष्ण आडवाणी से बातचीत करने पहुचे। बुश की आडवाणी से हुई इस अप्रत्याशित मुलाकात को अमेरिका की नजर में भारत के बढ़ते राजनीतिक एवं कूटिनीतिक महत्व के रूप मे देखा जा रहा है। बुश आडवाणी से मिलने उस समय पहुचे जब व्हाइट हाउस मे उनकी अमेरिका की राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार कोडालीया राइस से बातचीत चल रही थी।

संयुक्त राष्ट्र सहस्राबदी शिखर सम्मेलन मे वाजपेयी का संबोधन –

6–8 सितम्बर 2000 को न्यूर्याक मे संयुक्त राष्ट्र प्रागण मे सम्पन्न तीन दिवसीय संयुक्त राष्ट्र सहस्राब्दि सम्मेलन मे अपने सम्बोधन मे प्रधानमन्त्री वाजपेयी ने भारत के विरूद्ध शत्रुता पूर्ण आंतकवादी अभियान चलाने एवं दोमुंहपन के लिये पाकिस्तान को बिना उसका नाम लिये) आडे हाथों लिया तथा भारत के साथ बातचीत के उसके ताजा प्रस्ताव को यह कहकर अस्वीकार कर दिया गया है। कि आतंकवाद और संवाद साथ–साथ नही चल सकते आतंकवाद के विरूद्ध संयुक्त कार्यवाही करने संयुक्त राष्ट्र संघ की संरचना मे सुधार करने तथा निर्धनता निवारण के लिये नई वैश्विक पहल करने का उन्होने अन्तर्राशटीय समुदाय से आवाहन किया सुरक्षा परिशद की स्थायी सदस्यता के लिये भारत का पक्ष प्रस्तुत करते हुए वाजपेयी ने भेदभाव रहित विश्व व्यापी परमाणु निःशस्त्रीकरण पर बल दिया।

ईराक पर अमरीकी हमले की लोकसभा मे निन्दा–

8 अप्रैल 2003 को लोकसभा ने इराक पर अमरीकी हमले के पंयालाप निन्दा प्रस्ताव पारित किया। प्रस्ताव मे कहा गया कि इराक की सत्ता को जबर– दस्ती बदलने के लिये

संयुक्त राष्ट्र की सहमति के बगैर की गयी सैनिक कार्यवाही को स्वीकार नही किया जायेगा। इसमें इराक के लोगो के लिये गम्भीर सन्ताप और गहन सुहानुभूति व्यक्त करते हुये उनकी सहायता के लिये भारत की ओर से 100 करोड़ रूपये की सहायता देने का भी फैसला किया गया जिसमे विश्व खाद्य कार्यक्रम के तहत 50 हजार टन गेंहूँ भी शामिल है।

इराक मे भारतीय सेना भेजने का फैसला –

अमरीकी अनुरोध पर इराक में भारतीय सेना भेजने का फैसला राष्ट्रीय आम सहमति के बाद ही करने का निर्णय तर्क संगत है। इराक मे सेना भेजे जाने के मामले पर संयुक्त राष्ट्र मे जो प्रस्ताव पास किया गया। उसमे अधिकार तो बिट्रेन और अमेरिका को दिया गया है। ऐसे मे भारत कैसे उनके मातहत अपनी सेना भेज सकता है। भारत ने आज तक किसी भी किसी अन्य देश के बैनर तले अपनी सेना नही भेजी तो अब कैसे भेजी जा सकती है। वाजपेयी सरकार के लिये यह नैतिक या राजनयिक दुविधा का क्षण नही है। यह इराक मे युद्ध के बाद निर्माण की संभावना के हिस्सा बंटाने या अमरीकी दबाब मे झुकने की बात नही है। बल्कि यह दुनिया मे अपनी अहमियत भू राजनीतिक शक्ति और जिम्मेदारियो का अहसास करने वाले भारत के एक राष्ट्र के रूप मे पेश आने का मौका है। इराक की अराजकता सिर्फ अमेरिका और बिट्रेन की चिन्ता का विषय है। बल्कि शेश विश्व की नजर ईराक पर है। भारत इस नई दुनिया मे क्षेत्रीय ताकत की तरह उभर रहा है। इसलिये वह इस जिम्मेदारी से बच नही सकता है।

Reference:-

1. A Appadarai and M.S Rajan(e.d) India"s foreign policy and Relation(Delhi,1985) Page 18

2. नेहरू - भारतीय विदेश नीति - Page-585

3. charles h.heimsath ,diplomatic history of modern India (Bombay 1971), Page 172

4. J.Bandhgopadhyaya , Making of india"s forign policy (Calcutta 1970) Page 243

5. डा0 पुश्पेश पंत एवं श्री पाल जैन , अन्तराष्ट्रीय सम्बन्ध Page.398

6. Dr. M.S Rajan , India in world affairs (1945-56) Page-258

7. Venkata Raman American Millitary-Alliance with Pakistan , International Studies , July –oct . 1956 , Page- 73

1. Appodorai , Essays in Indian politics &Forigen Pollicyb 1971, Page-173

9. The Times of India, 23 March , 1977

10. डा0 वेदप्रताप वैदिक भारतीय विदेश नीति नये दिशा संकेत Page 102

11 वार्शिक रिपोर्ट 1991–92, विदेशमन्त्रालय, भारत सरकार Page 39

अध्याय द्वितीय

अमेरिका विदेशनीति के आधार स्तम्भ

भारत अमेरिका सम्बन्धों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि:–

स्वतंत्रता पूर्व भारत के अमेरिका के साथ जो सम्बन्ध थे। उनका निर्वाहन ब्रिटेन करता था। पराधीन होने के कारण भारत की विदेश नीति स्वतंत्र प्रकृति की नहीं थी। उस समय भारत अमेरिका सम्बन्धों की प्रकृति, चरित्र, एवं शैली का निर्धारण भारत की पराधीनता के द्वारा ही सम्भव था। ब्रिटेन शासन काल में भारतीय अमरीकियों के सम्पर्क में आये और वे उनसे अपेक्षा करने लगें कि संयुक्त राज्य अमेरिका जो कभी स्वयं ब्रिटिश साम्राज्यवाद का शिकार रहा वह भारत की स्वतंत्रता के लिये अवश्य प्रयास करेगा। निःसन्देह वांशिगटन ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के प्रति सहानुभूति जताई। मगर वह मौखिक सहानुभूति थी। ब्रिटेन के साथ मैत्री संबन्ध होने के कारण अमेरिका इस दिशा में कई वर्षो तक सक्रिय भूमिका नहीं निभा पाया। प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्ध की अवधि में अमरीकियों ने भारतीयों के राजनीतिक एवं नैतिक समर्थन के महत्व को समझा और यहाँ तक कि उन्होंने भारतीय उप महाद्वीप में अमेरिका के सैनिक सामरिक और भू राजनैतिक हितों की पहिचान भी की। पर्ल हार्वर पर जापान के आक्रमण ने रूजवैल्ट प्रशासन को भारत के महत्व को स्वीकारने के लिये वाध्य किया। अमरीकी बुद्धिजीवियों ने समय–2 पर भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष को समर्थन देने के लिये अमेरिका ने जनमत तैयार किया था। परतंत्र राष्ट्रों के प्रति रूजवेल्ट प्रशासन की नीति में नैतिकता का प्रदर्शन तो था परन्तु वह विशुद्ध व्यवहारिकता पर निर्धारित था। अमेरिका ने अपने सहयोगी ब्रिटेन पर भारत की स्वतंत्रता के लिये कोई विशेष दवाब नही डाला।

1. राष्ट्रपति ट्रूमैन और अमेरिका–भारत में सम्बन्ध:–

भारत की स्वतंत्रता की पूर्व सन्ध्या पर अमरीकी राष्ट्रपति हैरी एस0 ट्रूमैन ने एक तार में लार्ड माउन्ट वेटन को अपने एक सन्देश में नये राष्ट्र के जन्म पर बधाई दी। उस सन्देश में प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू एवं भारत के लोगों के लिये भी शुभ कामनाओं का ज्ञापन किया गया और यह कहा गया कि आने वाले वर्षो में इस महान राष्ट्र के लोग अमेरिका को सर्वदा अपना मित्र पायेंगें। द्विपक्षीय स्तर पर भारत–अमेरिका सम्बन्ध ट्रूमैन प्रशासन की अवधि में धीरे–2 आगे बढे और अपेक्षित मैत्री आगे नहीं बढ सकी क्योंकि सम्बन्धों में औपचारिकता ही विद्यमान रही। इसका प्रमुख कारण यह था कि कुछ वैष्विक मुदद्दों पर दोनों के नेतृत्व के दृष्टिकोणों एवं पर्यवलोकन में विभिन्नता थी।

साम्यवाद के प्रसार की आशंकाः–

मार्च 1947 में राष्ट्रपति ट्रूमैन ने अपने प्रसिद्ध भाषण में कहा था कि "प्रत्यक्ष अथवा अपरोक्ष आक्रमण के द्वारा स्वतंत्रता लोगों के ऊपर परिपूर्णतावादी प्रशासन थोपे जाने के प्रयास हो रहे है। जो अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति की नीव को जड से काटते है और इसलिये अमेरिका इस बात की आवश्यकता अनुभव करता है कि उन स्वतंत्र राष्ट्रों को समर्थन दे जो सशस्त्र अल्पसंख्यकों के द्वारा पराधीन बनाने के प्रयासों अथवा वाह्य दबावों से जूझ रहे है। इस घोषणा को ट्रूमैन सिद्धान्त की संज्ञा की उपाधि दी गई। राष्ट्रपति ट्रूमैन के परावलोकन में सोवियत संघ यूरोप के स्वतंत्र राष्ट्रों की स्वतंत्रता के लिये एक गम्भीर खतरा था। और इसलिए उनकी सोच थी। कि यदि सोवियत संघ के प्रसार को रोक दिया जाए। तो शान्ति स्थापित हो सकती है।" भारत के प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने राष्ट्रपति ट्रूमैन की साम्यवाद से सम्बन्धित धारण एवं साम्यवाद के प्रसार की आषंका को सही माना। और न ही साम्य के परिसीमन की यह मान्यता थी। कि सोवियत एवं चीनी नेता पहले तो राष्ट्रवादी थे और उसके बाद साम्यवादी और मूलरूप में वे आक्रमण कारी नहीं थे।

शीतयुद्ध और भारत की गुटनिरपेक्षता की नीतिः–

2 जनवरी 1947 को भारत की अन्तरिम सरकार में विदेश मन्त्री के रूप में जवाहर लाल नेहरू ने चीन में भारत के राजदूत के0पी0 एस मेनन को लिखे एक पत्र में भारत की विदेश नीति को इस प्रकार परिभाषित किया।"हमारी सामान्य विदेश नीति शक्ति राजनीति से बचने की है। और किसी एक शक्ति समूह के विरूद्ध दूसरे शक्ति समूह में न शामिल होने की नीति है। आज रूसी और एग्लो अमरीकन दो अग्रणी खेमे है हमें दोनों का मित्र होना चाहिए। और उनमें शामिल नही होना चाहिए। सोवियत संघ हमारा पडोसी है। उसके साथ हमें निकटता के सम्बन्ध स्थापित करने ही होंगें। हम रूस को केवल इसलिए नाराज नहीं कर सकते क्योंकि नेहरू जी यह भी जानते थे। कि अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं को प्रभावित करने के लिये भारत के पास शक्ति नहीं है। वल्कि उसे तो अपने आर्थिक विकास के लिये इन दो उदय होने वाली महाशक्तियों से आर्थिक एवं तकनीकी सहायता की आवश्यकाता होगी और उन दोनों के साथ समान निकटता के सम्बन्ध स्थापित करने होगें।

स्वतंत्र भारत के प्रधानमंत्री बनने के बाद श्री नेहरू जी ने इस बात पर जोर दिया कि भारत एक स्वतंत्र नीति को अपनायेगा। भारत की विदेश नीति जो व्यवहार से उभर कर आयी। उसे असंलग्नता अथवा गुट निरपेक्षता की नीति की संज्ञा दी गई। इस नीति के द्वारा भारत के शीतयुद्ध की आलोचना की। 1949 तक अमेरिका भारत को ऐशिया के भविष्य के सन्दर्भ में राजनीतिक दृष्टि से कोई विशेश महत्व का देश नहीं मानता था और उसकी विदेश नीति को उपेक्षा की दृष्टि से देखता था। ऐशिया में बढते साम्यवाद को देखकर विश्व के सबसे बडे जनतंत्र भारत की साख वाशिंगटन की दृष्टि बढने लगी। ऐसा प्रतीत हुआ कि अमेरिका अब भारत के प्रति अपनी नीति का राजनीतिक एवं आर्थिक कारकों के आधार पर पुनरीक्षित करेगा। इस बात का संकेत तब देखने को मिला कि जब भारत ने अमेरिका के राजदूत लाय होडरसन ने भारत के आर्थिक विकास के लिये एक पॉच वर्शीय कार्यक्रम के लिये 550 मिलियन डालर की सहायता के लिये वाशिंगटन को सिफारिश की। अक्टूबर 1949 में नेहरू जी की अमेरिका यात्रा निश्चित की गयी। अपनी अमेरिका यात्रा में उन्होंने आर्थिक और तकनीकी सहायता के लिये अमेरिका नेतृत्व से अनुरोध किया ताकि भारत की गरीबी को कम किया जा सके। किन्तु उन्हें कोई स्पष्ट आष्वासन नहीं दिया गया। उनके भारत लौटने के बाद वासिंगटन ने भारत में अमेरिकी राजदूत द्वारा की गई सिफारिश को ठुकरा दिया और यह कहा कि "नेहरू जी ने सहायता के लिये अनुरोध बडे आकस्मिक तरीके से किया। कुछ अमरीकी विधायकों ने नेहरू जी के अनुरोध की शैली को दम्भ से भरा हुआ माना जिसके कारण अमरीकी काग्रेंस ने भारत को एक प्रस्तावित आर्थिक सहायता का अनुमोदन करने से इन्कार कर दिया। वस्तुतः अमरीकी सहायता के साथ कुछ शर्तो को जोडा जा रहा था। जिन्हें नेहरू ने मानने से इन्कार कर दिया।

<u>कोरिया युद्ध भारत और अमेरिका के दृष्टिकोण एवं पारस्परिक पर्यावलोकनः—</u>

25 जून 1950 को उत्तरी कोरिया ने दक्षिणी कोरिया पर आक्रमण कर दिया। संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद ने उत्तरी कोरिया को आक्रमण कारी घोषित कर दिया युद्ध को रोकने के लिये कहा और उत्तरी कोरिया से यह कहा गया कि अपनी सेनाओ को 38 समानान्तर से ऊपर की ओर ले जाये। भारत ने सुरक्षा परिषद के सुझाव को समर्थन किया और उत्तरी कोरिया को आक्रमणकारी माना। नेहरू जी ने अमरीकी सोवियत संघ और साम्यवादी चीन से अनुरोध किया कि वे युद्ध को घटना स्थल तक ही सीमित कर उसे समाप्त

करवायें और इसके लिये शान्तिपूर्ण राजनय के साधनों का प्रयोग करें। नेहरू बडी शक्तियों की झगडालू प्रवृत्ति से भली भाँति परिचित थे और इसलिये उन्हें अमेरिका पर सन्देह था कि वह अवश्य ही 38 अक्षांश को लॉध कर उत्तरी कोरिया पर कार्यवाही कर सकता है। बिट्रेन और अमेरिका ने नेहरू जी को आष्वासन दिया कि वे बिना संयुक्त राष्ट्र संघ के निर्देश के 38 अक्षांस को पार नही करेगें। चीन को भी पश्चिमी राष्ट्रों की नियत पर सन्देह था। और इसलिये चीन ने भारत के राजदूत के0 एम0 पणिक्कर के माध्यम से यह चेतावनी दी कि यदि राष्ट्र संघ की सेनाऐं 38 अक्षांष को पार करेगी तो चीन उनका मुकाबला करने के लिये बाध्य हो जायेगा। भारत ने ईमानदारी के साथ यह सन्देश बिट्रेन और अमेरिका तक पहॅुचा दिया। किन्तु राष्ट्र संघ की सेनाओं ने इसके बावजूद भी 38 अक्षांश को पार किया जहॉ उनकी भिडन्त चीनी सेनाओं से हुई। ऐसी विशम स्थिति में भारत ने एक शान्ति प्रस्ताव का सुझाव दिया। 6 दिसम्बर 1950 को भारतीय संसद में नेहरू जी ने कहा ''यदि हमें युद्ध से बचकर चलना है तो हमें उस तरीके से बचना होगा। जिससे कडवाहट उत्पन्न होती है। शान्ति वार्ता ही एक मात्र सम्भव रास्ता है। हमें यह बात पहले से ही स्पष्ट दिखाई दे रही थी कि बातचीत का तब तक कोई महत्व नही होगा। जब तक कि चीन को इसमें शामिल नही किया जायेगा। हमारा सदैव से यह मत रहा है कि कोरिया की समस्या का समाधान केवल चीन के सहयोग से किया जा सकता है।

<u>संयुक्त राष्ट्र संघ में साम्यवादी चीन के प्रवेश एवं सुरक्षा परिषद में उसके स्थान का मुदद्‌ा परस्पर विरोधी–भारत अमरीकी दृष्टिकोणः–</u>

अमेरिका के भरसक प्रयत्न के बाद भी चीन मे साम्यवादियों को सत्ता में आने से नही रोका जा सका। राष्ट्रवादी चीन के शासक च्यांगकाई शेख का प्रभुत्व सिमट कर ताईवान तक सीमित हो गया था। किन्तु फिर भी अमेरिका यह नही चाहता था कि राष्ट्रसंघ में साम्यवादी चीन की सरकार को प्रवेश मिले और सुरक्षा परिषद में साम्यवादी चीन चीनी राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करे। अमेरिका अपने राष्ट्र हित में यह सोचता था कि राष्ट्रवादी चीन सरकार सुरक्षा परिषद की सदस्य बनी रहेगी तो एक वीटो पावर वाला देश उसका पिछलग्गू बना रहेगा। और अमेरिका जैसा चाहेगा उसी प्रकार के प्रस्ताव राष्ट्र संघ में पारित होते रहेंगे। भारत की मान्यता थी कि चीन की साम्यवादी सरकार एक मात्र चीन का प्रतिनिधित्व करती थी। और इसलिए उसे न केवल राष्ट्र संघ में प्रवेश दिया जाये बल्कि सुरक्षा परिषद में भी

वीटो के अधिकार के सम्पन्न राष्ट्र के रूप में स्थान मिले। अमेरिका को भारत के इस दृष्टिकोण से घोर आपत्ति रही। और नेहरू जी की छवि पर अमेरिका में कीचड उछाला जाने लगा। अमेरिका साम्यवादी चीन को अलग–थलग करने के लिये प्रयासों में कार्यरत था और इसलिये साम्यवादी चीन को विश्व मंच पर लाने की भारत की कोशिश अमेरिका को पसन्द नही आई।

<u>भारत की खाद्य समस्याः–</u>

भारत में 1950–51 में अनाज की कमी ने विकराल रूप धारण कर लिया। इसका कारण यह था कि देश के उत्तरी राज्यों में बाढें आयीं और दक्षिणी राज्यों में भयंकर सूखा पडा। भारत को कई देशों से अनाज मांगाने के लिये बाध्य होना पडा। भारत ने अमेरिका से 2 मिलियन टन अनाज (गेहूँ) देने के लिये अनुरोध किया नई दिल्ली में यह आषा की जा रही थी कि वाशिंगटन को यह अनुरोध मानने में कोई कठिनाई नही होगी। क्यों कि उसके पास गेहूँ का आधिक्य था और उसके समुद्री जहाजों के द्वारा अनाज भारत को शीघ्र भेजा जा सकता था। इस सौदे के लिये तुरन्त अनुमति देने के बजाय अमेरिका सरकार ने अपने शीतयुद्ध से सम्बन्धित उददेश्यों की पूर्ति के लिये भारत के कान ऐंठने का प्रयास किया। अमेरिका की काग्रेंस में यह मुदद्दा विचारार्थ आया तो कई संशोधनों पर विचार किया गया। जिनमें यह चाहा गया था कि गेहूँ के रूप में दी जाने वाली सहायता के प्रतिफल के रूप में भारत को अपनी विदेशी नीति में कतिपय परिवर्तन करने होंगे। 25 जनवरी 1951 को सीनेट की विदेश मामलों की समिति के अध्यक्ष ने यह कहा कि भारत के अनुरोध पर कार्यवाही तब तक नही की जायेगी। जब तक एक उपसमिति भारत अमेरिका सम्बन्धों का पूर्ण रूप से पुनरावलोकन नही कर लेती। "देश के मुख्य मन्त्रियों को 1 फरवरी 1951 को लिखे पत्र में नेहरू जी ने कहा कि देश की विदेश नीति को गेहूँ के आयात के लिये सौदे वाजी का शिकार नहीं बनने दिया जाएगा। अन्ततोगत्वा अमरीकी काग्रेंस ने जून में इडिया एमर जेन्सीफूड एक्ट पारित कर दिया। जिसके अनुसार भारत को 4190 मिलियन के दीर्घ कालीन ऋण से खाद्य पदार्थ अमेरिका से खरीदने के लिये अधिकृत किया गया। यह धनराशि भारत के मूल अनुरोध की धनराशि का मात्र 6 प्रतिशत थी। चेस्टर बाउल्स ने लिखा कि कोरिया युद्ध के प्रति नई दिल्ली की प्रतिक्रिया और संयुक्त राष्ट्र संघ में चीन प्रवेश के मुदद्दे पर नेहरू के समर्थन के कारण अमेरिका भारत पर नाराज हुआ।

2. राष्ट्रपति आइजनहावर और अमेरिका – भारत सम्बन्धः–

जनवरी 1953 में डवाइट डी0 आइजनहावर अमेरिका के राष्ट्रपति बने। साम्यवाद के विस्तार के प्रति अमरीकी चिन्ता की सोच उन्हें ट्रूमैन के प्रशासन से विरासत के रूप में प्राप्त हुई। आइजन हावर ने विदेश नीति के निर्धारण एवं उसके क्रियान्वयन के कार्य को अपने राज्य विभाग के सचिव जोहन फास्टर डलेस को सौप दिया। साम्यवाद के परिसीमन की नीति पर डलेस की गहरी छाप पडी। यद्यपि इस नीति के आरम्भिक प्रणयन में जार्ज एफ0 कैनन जो कि सोवियत मामलों के प्रबुद्ध विश्लेशक थे का विशेश योगदान था। कैनन के अनुसार साम्यवाद की चुनौती मुख्य रूप से राजनैतिक थी। और उसका सामना राजनीतिक आर्थिक और गैर सैनिक साधनों के द्वारा किया जा सकता था। उन्होंने अपनी पुस्तक में लिखा कि जहॉ तक वे स्वयं परिसीमन के पक्ष में थे। उन्होंने सैनिक चुनौती का परिसीमन सैनिक साधनों के द्वारा करने का प्रस्ताव नही किया। बल्कि राजनीतिक चुनौती का परिसीमन राजनीतिक साधनों के द्वारा किये जाने का सुझाव दिया था। आइजन हावर प्रसाषन ने परिसीमन की नीति के अर्न्तगत सैनिक सहायता दिये जाने के विचार को प्रश्रय दिया। उसने इस प्रकार की सहायता न केवल द्विपक्षीय स्तर पर दिये जाने की बात की बल्कि बहुपक्षीय स्तर पर भी दिये जाने का विचार किया। और उसके बहुपक्षीय सन्धियों के निर्माण के कार्यक्रमों को प्रायोजित किया। इससे अमेरिका की नीतियों में एक नया आयाम उभर कर विश्व मंच पर आया जिससे अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की प्रकृति में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। भारत अमेरिका सम्बन्धों में आइजन हावर काल में निम्न लिखित मुदद् छाये रहे –

ऐशिया में संगठनो की स्थापनाः–

जब अमेरिका ने ऐशिया में यूरोप की भॉति सैनिक सन्धि संगठनो की स्थापना करने का मानस बनाया तो उसकी दृष्टि से दक्षिण ऐशिया सामरिक और राजनीतिक महत्व छिपा नही था और इसके लिये दक्षिण पूर्वी ऐशिया और मध्य पूर्व ऐशिया में सैनिक सन्धि संगठनों की स्थापना की। योजनाओं में भारतीय उपमहाद्वीप के देशों को भी शामिल करने का निष्चय किया भारत को इन संगठनों में शामिल करने के लिये वाशिंगठन ने प्रयास तो किये किन्तु नई दिल्ली अपनी असंलग्नता की नीति पर अडिग थी और भारत ने न केवल उसमें भाग लेने से इन्कार किया वल्कि उसके गठन का घोर विरोध भी किया।पाकिस्तान को बहुपक्षिय सैनिक संगठनों में शामिल करने से पूर्व उसके साथ प्रतिरक्षा समझौता किया। सितम्बर 1954 में

अमेरिका ने दक्षिण पूर्वी एशिया सन्धि संगठन (सीटों) की स्थापना योजना को प्रायोजित किया। मध्य पूर्व ऐशिया में भी बगदाद सैनिक संगठनों की स्थापना की गयी। बाद में यह संगठन केन्द्रीय सन्धि संगठन के नाम से विख्यात हुआ। भारत को इन संगठनों मे शामिल होने के लिये अमेरिका के द्वारा राजी न कर सकने के पीछे तीन कारण थे –

1– भारत एक स्वतंत्र नीति पर चलने के लिए प्रतिबद्ध था और भारत स्वतंत्र नीति थी गुटनिरपेक्षता की नीति। नेहरू जी का कथन था कि भारत को गुटों की राजनीति से दूर रहना चाहिए। इस प्रकार की राजनीति में राष्ट्र एक दूसरे के विरूद्ध संगठित होते है। जिसके कारण भूतकाल में विश्व युद्ध हुये और जिसके कारण भविष्य में भी क्षति उठानी पड सकती है। उनका यह विश्वास था कि प्रतिस्पर्द्धा, घृणा, और अर्न्तद्वन्दों के बावजूद भी विश्व को निकट सहयोग की ओर बढाना है और एक विश्व राज्य बनाना अवश्यसम्भावी है। नेहरू जी भारत को एक विश्व बनाने की दिशा में कृत संकल्प करना चाहते थे। एक ऐसा विश्व राज्य जिसमें स्वतंत्र देशों के मध्य एक स्वतंत्र प्रतियोगिता हो और जिसमें एक वर्ग अथवा एक समूह दूसरे का शोशण न कर सके।

2– नेहरू जी का विश्वास था कि भारतीय उपमहाद्वीप को साम्यवाद से कोई अन्य भय नहीं था। इसके विपरीत आइजनहावर के विचार से हटकर नेहरू जी यह सोचते थे। कि कहीं जनतंत्र के आवश्यक तत्व विद्यमान है तो सोवियत संघ में ही है। साम्यवादी चीन के प्रति नेहरू जी की गहरी आस्था एवं सहानुभूति थी। क्यों कि वह भी लम्बे समय तक पश्चिमी साम्राज्यवाद का शिकार रहा। साम्यवादी चीन का नेत्रत्व मूल रूप से अपने दृष्टिकोण में राष्ट्रवादी अधिक है इसलिये 1950 के दशक के अन्तिम वर्शो तक नेहरू के मन में चीन के प्रति शत्रु भाव नही आया।

3– भारत में यह धारणा पनप रही थी। कि संयुक्त राज्य अमेरिका सोच समझकर एशिया विरोधी नीति को अपनाये हुये था। नेहरू जी ने सीटो के गठन पर आयी जो प्रतिक्रिया व्यक्त की थी। वह ध्यान देने योग्य है। उनकी प्रतिक्रिया निम्न लिखित शब्दों में थी। " सन्धि को ध्यान पूर्वक पढने के बाद में यह अनुभव करता हूॅ कि किसी भी एशियाई राष्ट्र के दृष्टिकोण से यह पूरा नजरिया गलत और खतरनाक है एशिया और उसके बाहर के देशों में इसके प्रति भय न्यायोचित है। परन्तु मै कहता हूॅ कि सन्धि का नजरिया गलत है और एशिया के एक बडे भाग को नाराज कर सकता हैं। क्या आप शान्ति एवं सुरक्षा की स्थापना और भी अधिक

सघर्षो व दुश्मनी से करने जा रहे है? और लोगों को यह सोचने के लिये मजबूर कर रहे है कि आप इस क्षेत्र में सुरक्षा लाने के बजाय असुरक्षा लाना चाहते है।''

नेहरू जी ने यह सन्देश व्यक्त किया कि आरम्भ में सन्धि का कार्य क्षेत्र वही तक सीमित रहे जिस क्षेत्र के लिये उसकी स्थापना की गई है। किन्तु शनैः–2 यह दूसरे क्षेत्रों में भी प्रभावी हो सकता हैं नेहरू जी के इस सन्देह से यह बात स्पष्ट झलकने लगी कि उनके पर्यावलोकन में सन्धि के द्वारा शीत युद्ध को दक्षिणी एशिया क्षेत्र में लाया गया हैं भारत के लिये इसक कई अर्न्तनिहितार्थ है। वेन. ए. विल्कोक्स ने सटीक लिखा है कि अमेरिका की सैनिक नीति ने ''उप महाद्वीप के क्षेत्रीय अकेलेपन को बिगाड दिया व शक्ति सन्तुलन भारत के विरूद्ध कर दिया और भारत को इस बात के लिये बाध्य कर दिया किवह अपने आर्थिक और राजनीतिक साधनों को इस दिशा में अधिक मात्रा में लगाऐ।'' सीटो के प्रति भारत के विरोध का कारण था कि इस सन्धि में पाकिस्तान का शामिल होना।

<u>अमरिका पारस्परिक प्रतिरक्षा सहायता समझौता 1954</u>:–

मई 1954 में पाकिस्तान तथा अमरिका के मध्य में पारस्परिक प्रतिरक्षा सहायता समझौता किया गया। इसके अर्न्तगत अमेरिका के द्वारा पाकिस्तान को सैनिक सहायता दिये जाने का प्रावधान था। भारत पाकिस्तान के मध्य चलते तनाव पूर्ण सम्बन्धों को ध्यान में रखते हुये भारत के द्वारा इसका विरोध किया जाना स्वभाविक था। नेहरू जी ने तब कहा था। कि संवैधानिक दृष्टि से अथवा अन्य किसी दृष्टिकोण से पाकिस्तान अमेरिका सम्बन्धों में क्या गति विधियॉ चलतीं है। भारत उनके बारे में कुछ नही कह सकता। किन्तु अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को शस्त्रास्त्र देने से भारत की सुरक्षा को प्रत्यक्ष रूप से चुनौती का सामना करना पडेगा क्यों कि जब भी पाकिस्तान को विदेशी हथियार प्राप्त हुये उनका प्रयोग भारत के विरूद्ध ही करेगा। इसलिये नई दिल्ली ने अपनी गहरी चिन्ता को व्यक्त किया।

<u>जम्मू और काश्मीर राज्य में मतसंग्रह का मुदद्</u>ाः–

अमेरिकी लगातार पाकिस्तान की मांग का समर्थन करता रहा कि संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रस्तावना की पालना में भारत को जम्मू और कश्मीर राज्य में जनमत संग्रह करना चाहिए। सीटों की परिषद में जिसका अधिवेशन मार्च 1956 में करॉची में हुआ। उसमें कश्मीर के मुदद् को उठाया गया। भारत ने इस बात का और विरोध किया कश्मीर के मुदद् के कारण भारत अमेरिका सम्बन्धों मे तनाव के अवसर आये। भारत ने अमेरिका के द्वारा कश्मीर में जनमत

संग्रह कराने के लिये गये सुझाव को दो टूक शब्दों मे ठुकराया। कश्मीर के प्रति अमेरिका नीति ने भारत को अमेरिका से दूर किया और भारत को बाध्य किया कि वह सोवियत संघ से मैत्री पूर्ण व्यवहार बनाये। यह बात तब स्पष्ट हुई जब अमेरिका और उसके पश्चिमी सहयोगी राष्ट्रों ने भारत पर संयुक्त राष्ट्र संघ में एक ऐसा फार्मूला कश्मीर पर स्वीकार करने के लिये दवाब डाला जो भारत के हित में नही था और प्रस्ताव पारित कराना चाहा तो सोवियत संघ ने उस पर अपने विशेशाधिकार का प्रयोग किया। वस्तुतः सैनिक सन्धियों की सदस्यता प्राप्त करने के पष्चात पाकिस्तान ने कश्मीर के मुदद् पर भारत के प्रति अपने दृष्टिकोण को कठोर कर दिया और वह इस भुलावे में आया कि वह सैनिक शक्ति से कश्मीर भारत से हथिया लेगा। एस0 एम0 वक्र ने सटीक टिप्पणी की कि जब नेहरू लियाकत वार्ता सफलता की ओर अग्रसर हो रही थी। उस समय अमेरिका ने पाकिस्तान को सैनिक सहायता देने का मानस बना लिया। जिससे एक नई परिस्थिति को जन्म मिला और भारत और पाकिस्तान के मध्य में समझौते की सम्भावनाऐं धूमिल हो गई।

गोआ की समस्याः—

अगस्त 1947 में भारत के स्वतंत्र हो जाने के बाद भी गोआ में पुर्तगाली शासन चलता रहा भारत पुर्तगाल द्वारा गोआ में अपना कब्जा बनाये रखने और गोआ वासियों को स्वतंत्र न करने पर उसकी घोर आलोचना लगातार करता रहा। गोआ जो भौगोलिक, ऐतिहासिक, एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भारत का अभिन्न अंग था उसका पराधीन रहना भारत के माथे पर बदनुमा दाग जैसा था। भारत अपनी स्वतंत्रता के बाद साम्राज्यवाद, उपनिवेश वाद एवं नस्ल वाद के विरोध में हर विश्व मंच पर आवाज उठा रहा था और मानवीय समानता मानवीय न्याय और स्वतंत्रता जैसे मूल्यों के पोशण के लिये अफ्रीकी एशिया राष्ट्रों को संगठित करने में संलग्न था गोआ पर पुर्तगाली कब्जा भारत के लिये एक सम्मान का प्रश्न बन गया था। 25 अगस्त 1954 को नेहरू जी ने लोक सभा मे कहा कि भारत की स्वतंत्रता तब तक पूर्ण नहीं होगी। जब तक गोआ को स्वतंत्र नहीं करवा दिया जाता। नेहरू जी के निम्नलिखित शब्द उद्धरणीय है। "जब तक औपनिवेशिक नियंत्रण से विदेशी क्षेत्र के छोटे टुकडो को स्वतंत्र नही करा लिया जाता हैं तब तक स्वतंत्रता की प्रक्रिया सम्पूर्ण नहीं होगी। इसलिये गोआ के निवासियों को अपने आप को विदेशी शासन से मुक्त करने और मातृभूमि के साथ पुनः जोडने की आकाक्षांयें हैं। उनसे इस देश की सरकार और जनता को पूर्ण सहानुभूति है।

गोआ के साथ भारतवासियों की जो भावनाऐं जुडी हुई थी। उनको नेहरू जी ने 17 सितम्बर 1955 को लोक सभा में दिये गये अपने भाषण मे इस प्रकार व्यक्त किया।"गोआ मे जो एक उल्लेखनीय चित्र उभरता है। उसे कोई देखे तो वह पायेगा कि 16वी और20वी शताब्दियॉ आमने–सामने खडी है। पतनोन्मुख उपनिवेशवाद पुनर्जाग्रत एशिया के सामने अकड कर खडा हुआ हैं पुर्तगाली स्वतंत्र भारत को लज्जित और अपमानित करने में संलग्न है वस्तुतः पुर्तगाल जिस तरह से व्यवहार कर रहा हैं वह आधुनिक जगत से इतना असम्बद्ध है कि उसे देखकर कोई भी विचार शील व्यक्ति आश्चर्य में पड जाये।

अमेरिका के राज्य विभाग के सचिव जॉहन फास्टर डलेस और पुर्तगाल के विदेश मंत्री के संयुक्त बयान जो दिनॉक 2 दिसम्बर 1955 को जारी किया गया था। उसमे गोआ को पुर्तगाल का एक प्रान्त बताया गया। इसके पूर्व गोआ पुर्तगाल का एक उपनिवेश कहलाता था। इस घटना से भारत और अमेरिका के सम्बन्धों मे कडुवाहट का एक मुदद्‌ा और जुड गया।

स्वेज संकटः–

इस संकट की सुरूआत मिश्र के राष्ट्रपति नासिर की 26 जुलाई 1956 की घोषणा से हुई। उन्होंने स्वेज केनाल कम्पनी के राष्ट्रीयकरण की अचानक घोषणा कर दी। इस घोषणा के पीछे कारण यह था कि अमेरिका और बिट्रेन ने आस्वान बॉध परियोजना को क्रियान्वित करने के लिये सहायता देने से इन्कार कर दिया था। सम्बन्धित पश्चिमी राष्ट्रों ने जिनमें अमेरिका भी शामिल था। ने इस कदम को मनमाना और एक तरफा कहा। नेहरू ने तुरन्त बिना किसी शर्त के मिश्र को इस मुदद्‌े पर समर्थन दिया। अगस्त 1956 में पश्चिमी शक्तियों ने लन्दन में स्वेज संकट को हल करने के लिये अधिवेशन बुलाने का निर्णय लिया। नेहरू जी ने नासिर को परामर्श दिया कि वह लन्दन अधिवेशन में भाग लें लेकिन नासिर ने नेहरू जी के सुझाव को नहीं माना।

आइजन हावर की भारत यात्राः–

दिसम्बर 1969 में राष्ट्रपति आइजन हावर ने भारत का भ्रमण किया। उनकी यात्रा ने दोनों देशों के नेताओं को एक दूसरे के निकटता से समझने का सुअवसर प्रदान किया। इस घटना के बाद वाशिंगटन और नई दिल्ली के मध्य पश्चिमी एशिया की घटनाओं के कारण जो मनमुटाव हुये थे उनके बादल छँटना शुरू हो गये। नेहरू जी ने आइजन हावर को एक ऐसा

व्यक्तित्व बताया जिसने "विश्व में शान्ति के ध्वज को ऊँचा किया"। और जिसने "हमारे ह्रदयों में एक स्थान पा लिया है।" नेहरू जी इतने भाव बिह्वल हो गये। कि उन्होने आइजन हावर से कहा कि " भारत ने आपको सबसे मूल्यवान वस्तु प्रदान की है। अपने ह्रदय का एक भाग" राष्ट्रपति ने भारत को हर प्रकार से सहायता देने का आष्वासन दिया ताकि वह विश्व में एक स्वतंत्र राष्ट्र और जनतंत्र के रूप में कायम रहे। भारत की संसद को सम्बोधित करते हुए अमेरिका के राष्ट्रपति ने भारत की द्वारा की गई प्रगति की प्रशसा की।

<u>पी0एल0 480 समझौता</u> –

मई 1960 में भारत और अमेरिका के मध्य में पी0 एल0 480 समझौते पर हस्ताक्षर हुये जिसके अन्तर्गत अमेरिका से भारत द्वारा किये गये खाद्यानों के आयात का भुगतान बजाय डालर के रूपयें द्वारा के किये जान का प्रावधान गया। इसमें ब्याज की दर को कम रखा गया। इस तरह जो रूपया इकट्ठा हुआ उसको पी0एल0 480 कहते है जो भारत की रिजर्व बैंक में जमा किया गया इस समझौते के अन्तर्गत भारत को अमेरिका से काफी सहायता मिली इस सहायता कार्यक्रम में कृषि विकास स्वास्थ्य और जल परियोजनाओं को शामिल किया गया था।

3. राष्ट्रपति कैनेडी और अमेरिका – भारत सम्बन्ध –

जनवरी 1961 में जॉन एफ0 कैनेडी अमेरिका के राष्ट्रपति बने व्हाइट हाउस में प्रवेश करने से पूर्व वे अमरीकी प्रतिनिधि सभा और सीनेट के सदस्य रह चुके थे। इसलिये वे पिछले प्रशासन की कमियों और प्रशासन से भली भॉति परिचित थे। राष्ट्रपति कैनेडी का यह विश्वास था कि विश्व में अमरीकी नेतृत्व के प्रभाव में अपेक्षाकृत कमी आयी है और उसका कारण गलत विदेश नीति थी। जिसमें अवधारणीकरण का अभाव रहा।

<u>कैनेडी का सैनिक सन्धियों की सार्थकता पर सन्देह</u> –

राष्ट्रपति कैनेडी ने साम्यवादी देशो के विरूद्ध खड़ी की गयी कठोर सैनिक संगठनों की व्यवस्था से सम्बन्धित आइजनहावर की नीति की बुद्धिमता पर प्रश्न चिन्ह लगाया। राष्ट्रपति बनने से दो वर्ष पूर्व उन्होने यह तक्र दिया कि सैनिक संगठन कोई दीर्घकालीन समाधान नहीं दे पायेंगे। अतः उन्होने प्रगति के लिये गठबन्धनों की वकालत की तथा विकासशील देशो को अधिक से अधिक सहायता देने का निर्णय लिया और यह चाहा कि उन्हे "गरीबी की श्रृंखला"

से दूर करना होगा। सैनिक सन्धि संगठनों के बारे में उनका आकलन यह था कि "असंलग्न राष्ट्रो पर अनावश्यक दबाब डालकर उन्हे पश्चिम के साथ संलग्न होने के लिये अथवा अन्तर्राष्ट्रीय साम्यवाद दोनो में से किसी एक को चुनने के लिये वाध्य करने में कोई लाभ नहीं।

निःसन्देह हमारे राष्ट्रहित में यह होगा कि हम कई स्थानो पर इस प्रकार के चुनाव के लिये दबाब न डाले, विशेश रूप से इस तरह के कदम जब किसी राष्ट्र को अपनी ऊर्जा को वास्तविक आर्थिक सुधार और आर्थिक उडान के कार्यक्रमों में लगाने की विशेश आवश्यकता है।" [17]

कैनेडी के उपरोक्त विचारों ने उनकी भारत में एक अच्छी छवि बन गयी। नवम्बर 1961 में नेहरू जी ने अमेरिका का सरकारी भ्रमण किया तब उनकी राष्ट्रपति कैनेडी से साथ कई महत्व पूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दो पर बातचीत हुई इन मुद्दो में शामिल थे बर्लिन की समस्या दक्षिणी पूर्वी एशिया का तात्कालिक घटनाक्रम और नाभकीय शस्त्रों की समस्या। दोनों नेताओं के विचारो में समानता पायी गयी और दोनो ने विश्व शान्ति के बारे में एक दूसरे के विचारो को समझा और सहयोग करने पर सहमत हुये। [18]

गोआ की स्वतंत्रता के लिये भारत के द्वारा सैनिक कार्यवाही की। भारत द्वारा की गइ सैनिक कार्यवाही पर अमेरिका सरकार ने केवल नकारात्मक प्रतिक्रिया बल्कि संयुक्त राष्ट्र संघ में अपने पश्चिमी सहयोगी राष्ट्रो के साथ मिलकर भारत के विरूद्ध एक प्रस्ताव पारित करवाया; कि भारत तुरन्त पुर्तगाली भूमि से अपना कब्जा हटाये। सोवियत संघ ने अपना निशेधाधिकार इस प्रस्ताव के विरूद्ध प्रयोग किया भारतीय जनमत में राष्ट्रपति कैनेडी के प्रति जो उच्च सम्मान था वह इस घटना के कारण तिरोहित हुआ भारतीय जन मानस के प्रति उनका मोह भंग हुआ। पुर्तगाल की शिकायत पर 19 दिसम्बर 1961 को सुरक्षा परिशद की बैठक हुई जिसमें गोआ, दमन, द्वीव की भूमि पर भारत के द्वारा "जबरदस्ती से किये गये कब्जे" पर विचार किया गया।

पुर्तगाल के प्रतिनिधि ने कहा कि बिना पूर्व वार्ता के भारत ने पुर्तगाल की सम्प्रभुता का एवं संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर का उल्लंघन किया और पुर्तगाली भूमि पर कब्जा कर लिया। [19] युद्ध बन्द किया जाये और भारतीय सैनिक पुर्तगाली भूमि को खाली कर दें। [20] अमरीकी प्रतिनिधि अदलाई स्टेवेन्सन ने कहा कि "भारत का यह कृत्य मेरे देश को विशेश रूप से दुखी

करने वाला है, क्योकि विगत सप्ताहों में हमने भारत सरकार से बार–बार विनय की थी कि वह बल का प्रयोग न करे। हमारे प्रयास में शामिल थे न केवल नई दिल्ली और वाशिंगटन में राजनयिक उपागमों की श्रृंखला बल्कि 13 दिसम्बर को राष्ट्रपति कैनेडी का प्रधान मंत्री नेहरू को भेजा गया व्यक्तिगत संदेश भी था जिसमें गोआ की समस्या का हल करने के लिये बल का प्रयोग न करने का अनुरोध किया गया था। [21]

नेहरू जी ने एक व्यक्तिगत पत्र में राष्ट्रपति कैनेडी से पूँछा कि जिस घटना ने भारतीयो को आतंकित किया उसकी कठोरतम भाषा में अमेरिका ने संयुक्त राष्ट्र संघ में क्यों आलेचना की? [22] नेहरू जी ने स्थिति को स्पश्ठ करते हुए लिखा कि पुर्तगाली उपनिवेशवाद को और अधिक समय तक चलने दिया जाता तो भारत की स्वतंत्रता एवं सुरक्षा को भयंकर खतरा होता क्योकि गोआ भारत का अभिन्न अंग होने के कारण एक विस्फोटक स्थिति का निर्माण हो रहा था । इसलिये इसके पूर्व की स्थिति बिगड कर भारत की सुरक्षा को भारी चुनौती देती , भारत ने अपना आवश्यक कदम उठाया । नेहरू जी को लिखे पत्र में राष्ट्रपति केएनेडी ने गोआ वे मुददे पर भारत के प्रति सहानुभूति जताई परन्तु इस बात पर खेद अवश्य प्रकट किया कि नवम्बर 1961 को अपने अमरीकी भ्रमण के समय उन्होने भारत के गोआके बारे मे अपने विचार उन्हे नहीं बताए।"

गोआ के मामले मे भारतियो के मन मे जो गलत धारणा उनके विरूद्व बनी उसे दूर करने के लिये राष्ट्रपति कैनेडी ने अपनी पत्नी को भारत भ्रमण पर भेजा श्री मती कैनेडी की भारत यात्रा से भारत–अमरीकी सम्बन्धो मे फिर सुधार हुआ।

<u>चीन द्वारा भारत पर आक्रमण एंव भारत द्वारा सैनिक सहायता के लिये अमेरिका से अनुरोध</u> –

अक्टूबर 1962 मे चीन ने भारत पर अचानक आक्रमण कर दिया । भारत को चीन से ऐंसी आषा नहीं थी कि जिस देश ने "हिन्दी –चीनी भाई–भाई " कानारा दिया हो और भारत के साथ मिल कर पंचशील सिद्वान्त का प्रतिपालन किया वह अचानक उस पर आक्रमण कर देगा और सीमा विवाद को सुलझाने के लिये शान्ति वार्ता को त्याग कर सैनिक साधनो का प्रयोग करेगा। ऐसी परिस्थिति मे नेहरू जी ने कई देशो के नेताओ से सैनिक सहायता के लिये अपील की जिससे राष्ट्रपति के एनडी भी शामिल थे । अमेरिका से जो सैनिक सहायता तुरन्त माँगी गई थी उसमे न केवल लडाकू विमान मांगे गये थे वल्कि अमरीकी सैनिको को भी भेजने के लिये अनुरोध किया गया था ताकि चीनी सैनिको को भारत भूमि से निकाल कर बाहर कर

दिया जाये। अमेरिका तथा ब्रिटेन दोनों ने तुरन्त वायुयानों में भरकर शस्त्रास्त्र भेजे इसके तुरन्त बाद अमरीकी इंजीनियर्स भारत आये और उन्होने श्रीनगर–लेह सड़क बनायी और लेह हवाई पट्‌टी को हवाई युद्ध के योग्य बनायां भारत ने 500,000,000 डालर्स के मूल्य की सैनिक सहायता अमेरिका से मॉगी जिसका उपयोग अगले पॉच वर्शो की अवधि में किया जाता। राष्ट्रपति कैनेडी ने तो इस अनुरोध को तुरन्त स्वीकार कर लिया किन्तु पैंटागन और विदेश विभाग ने इसे एक जटिल समस्या के रूप में प्रस्तुत किया क्योकि उन्होने डलेश के समय के तर्को को इस सहायता पर लागू करने का प्रयास किया। मार्च 1963 में वीजू पटनायक ने इस सम्बन्ध में अमेरिका की यात्रा की। [25] अपनी दो सप्ताह की अमेरिका यात्रा और बी जू पटनायक ने अमेरिका के राज्य विभाग तथा प्रतिरक्षा विभाग के अधिकारियों के साथ वार्तायें की।

अप्रैल 1963 में वाल्टर रोस्टोव जो कि विदेश विभाग में शीर्शस्थ परमर्शदाता थे एवं राष्ट्रपति कैनेडी के व्यक्तिगत परामर्शदाता भी थे। भारत के विदेश मंत्री यशवन्त वी चह्वाण के साथ भारत की तात्कालिक प्रतिरक्षा आवश्यकताओं पर बात चीत की। भारत की आवश्यकताओं का अन्तिम आंकलन करने के लिये अमेरिका के विदेश विभाग के सचित डीन रस्क भी भारत आये। इस यात्राओं से भारत को दीर्घकालीन सहायता मिलने की आषायें बंधी परन्तु व्यवहार में अपेक्षायें मात्र ही सिद्ध हुए। नवम्बर 1963 में भारत में अमेरिका के राजदूत चेस्टरवाऊल्स, नेहरू जी के अनुरोध पर भारत सरकार का एक आरम्भिक प्रस्ताव लेकर वासिंगटन गये। पश्चिमी राष्ट्रो से मिलने वाली सैनिक सहायता सशर्त थी जैसा कि थोड़ा आगे चलकर देखेगे। चीन के आक्रमण और अमेरिका द्वारा भारत को सैनिक सहायता देने के कदम में नई दिल्ली और वासिंगटन को ऐसी परिस्थिति में डाल दिया था कि उन्हे कई दृष्टिकोणों से विचार करने की आवश्यकता पड़ी जो कारण उनके निर्णयों का आधार बने हो निम्न लिखित थेः–

1. पश्चिम राष्ट्रो द्वारा यह अपेक्षा थी कि भारत साम्यवाद के परिसीमन के लिये उनकी रणनीति का एक हिस्सा बनेगा तथा सोवियत संघ की साथ अपने सम्बन्धों को अधिक महत्व नहीं देगा।
2. अमेरिका को यह आषंका थी कि पाकिस्तान को सैनिक सहायता देने का घोर विरोध करेगा और यह तक्र देगा कि भारत को दी जाने वाली सहायता का प्रयोग चीन के विरूद्ध न होकर उसके विरूद्ध होगा। पाकिस्तान ने ऐसा ही किया।

वाशिंगटन अपने सहयोगी पाकिस्तान के विरोध की पूर्णरूप से उपेक्षा नहीं कर सका।

3 पश्चिमी राष्ट्रो में यह एक पक्का विश्वास था कि भारत व पाकिस्तान अपने पुराने झगड़ो को जब तक सुलझा नहीं लेते तब तक पाकिस्तान चीन के प्रभाव में आने से नहीं बच सकता।

4 भारत और पाकिस्तान के सम्बन्धों को देखते हुए यह आषंका स्वाभाविक थी कि भारत–चीन संघर्ष के समय पाकिस्तान भारत पर आक्रमण कर सकता थां ताकि भारत की सेनाओं को भारत–चीन सीमा से हटाया जा सके। राष्ट्रीय कैनेडी ने पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूवखान से ऐसा न करने का आष्वासन मॉगा था। यद्यपि पाकिस्तान ने स्वंय भारत पर उस समय आक्रमण नही किया उसने इस वात का आष्वासन भी नही दिया कि भरत पाकिस्तान सीमा से अपनी सेनाऐ हटाकर भारत चीन सीमा पर लगा दे ।

5 भारत ने पाकिस्तान को सुझाव दिया कि दोनो देश एक दूसरे पर आक्रमण न करने की सन्धि कर ले । परन्तु पाकिस्तान भारत के अनाक्रमण सन्धि के प्रस्ताव को तब तक मानने की कल्पना नही कर सकता था जब तक दोनो देशो के बीच में पुरानी समस्याओ का समाधान न हो जाये ।

6 इन परिस्थितियो को ध्यान में रखते हुये अमरीका यह चाहता था कि पाकिस्तान के लाभ के लिये कम से कम कश्मीर की समस्या का समाधान करवा ले ।वस्तुतः भारत ने पाकिस्तान के साथ कश्मीर पर वार्ता करने के लिये प्रस्ताव स्वीकार कर लिया ।

यह एक आश्चर्य मे डालने वाली बात थी कि उस समय नेहरु जी ने स्वंय दक्षिणी पूर्वी एशिया में चल रही लडाई को समाप्त करने के लिये एक राजनीतिक समाधान को समर्थन देने का प्रस्ताव किया इसके अतिरिक्त नेहरु जी इस वात पर भी राजी हो गये कि वे पाकिस्तान के साथ कश्मीर पर वार्ता करने के लिये एंव सैनिक व्यय की सीमा तय करने के लिये वार्ता करने को तैयार है। इन तीन तथ्यो से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है । कि भारत अपनी विवशता के कारण सैनिक सहायता प्राप्त करने के उन बातों पर समझौता करने के लिये तैयार हो गया जिन पर वह शायद सामान्य परिस्थितियो में कभी राजी नही होता ।

भारत अमेरिका सम्बन्धो मे यह एक ऐसा मोड था जब भारत की असंलग्नता की नीति कतिपय अंशो पर घुलनीय प्रतीत हुई ।

4. राष्ट्रपति जॉनसन और अमेरिका – भारत सम्बन्ध –

उपराष्ट्रपति लिण्डन वी0 जानसन कैनेडी की हत्या के बाद 1963 में अमेरिका के राष्ट्रपति बने राष्ट्रपति कैनेडी के जीवन काल मे अमेरिका ने भारत की पर्याप्त आर्थिक सहायता की । जो सहायता की गयी वह विनत, अनाज, जल, विधुत परियोजना और रसायन और खाद्य की इकाइयो की स्थापना के रुप मे थीं इसके अतिरिक्त भारत–चीन युद्व के समय भारत को कुछ सैनिक सहायता का आष्वासन दिया गया । नये राष्ट्रपति ने भारत को आष्वासन दिया कि उसके प्रति अमरीकी नीतियो में कोई परिवर्तन नही होगा। परन्तु व्यवहार मे राष्ट्रपति जानसन द्वारा इस समय पर किये गये आष्वासन का पालन नही किया गया कांगेस के दबाव मे आकर वे भारत को दी जाने वाली आर्थिक सहायता के साथ शर्ते जोडने लगे और सैनिक सहायता का मामला खटाई मे पड गया ।

पी0 एल0 480 समझौता –

पूर्व मे किये गये पी0 एल0 480 समझौते की अवधि 30 जून 1965 को समाप्त हुई। भारत यह चाहता था कि वार्ता सम्पन्न कर एक नया समझौता किया जाये । परन्तु राष्ट्रपति जानसन ने यह निर्णय लिया कि जब तक भारत कुछ शर्तो को पूरा नही कर लेता तब तक इस समझौते पर वार्ता आरम्भ न की जाये । अमेरिका का विदेश विभाग तथा अन्तराष्ट्रीय विकास ऐजेन्सी तथा राजदूत चेस्टर वाउल्स ने तर्क दिया भारत को भेजे जाने वाले अनाज के लदान मे कोई रुकावट नही पडे इस लिए नये समझौते की आवश्यकता थी। अमेरिका का कृषि विभाग इस बात से सहमत नही था वह चाहता था कि राष्ट्रपति पी0 एल0 480 समझौते को दबाव के साधन के रुप में भारत के विरुद्व प्रयोग करें। अमेरिका कृषि विभाग के सचिव ओर विल फ्री मैन तथा अवर सचिव जॉन स्मिटर ने निम्नलिखित शब्दो मे राष्ट्रपति से आग्रय किया कि :–

"अमेरिका को यह चाहिये कि वह अपने हर सम्भव प्रभाव का प्रयोग करे ताकि भारत की खाद्य कुशलता बढ सके अनाज सहायता को कुछ विशिष्ठ कदमो से जोडा जाय जो भारत

व स्वतंत्र जगत के हित मे है। जिनको भारत स्वंय अपने आप उठाने का प्रयास नही करेगा "।[27] भारत के साथ उपरोक्त समझौता तुरन्त न कर सकने के बारे मे राष्ट्रपति जानसन ने अपनी विवशता को निम्नलिखित शब्दो मे व्यक्त किया – "मै अकेला पड गया क्योकि कुछ ही परामर्श दाताओ ने अमेरिका द्वारा भारत को दी जाने वाली आर्थिक सहायता की गति को कम करने के सम्बन्ध मे मेरी लडाई के साथ दिया ताकि भारत स्वंय अपने लिये कुछ कर सके। यह मेरे राष्ट्रपति काल का सबसे कठिन और अकेले संघर्ष का समय था।"[28]

राष्ट्रपति जानसन ने तब तक दीर्घ कालीन समझौते पर हस्ताक्षार न करना पसन्द किया जब तक कि भारत अमेरिका कृषि विभाग के सुझावो पर अमल न कर ले कृषि विभाग के सचिव ने राष्ट्रपति को अपना स्मृति पत्र भेजा था वह निम्नलिखित था । " अमरीकी नीति निर्माताओ को विश्वास था कि कृषि के उददेश्य के वाबजूद भारत मे कृषि की कीमत पर औद्यौगिक उत्पादन पर जोर दिया जा रहा है। कृषि विभाग के अधिकारियो ने यह अनुमान किया कि भारत – अमेरिका आर्थिक सहायता और पी0 एल0 480 पर बहुत ज्यादा निर्भरता को कायम किये हुये था और वह इस सहायता का प्रयोग कृत्रिम तरीके से कीमतो को कम करने के लिये कर रहा था । इन आलोचको का यह तक्र था कि भारत को इस वात पर वाध्य किया जाये कि वह सहायता की कीमत के रुप मे अपनी नीतियो मे परिवर्तन करे । राष्ट्रपति जानसन के काल मे प्रधानमंत्री लाल वहादुर शास्त्री और श्रीमती इंद्रागॉधी को अमरीकी से खाद्य सहायता और अन्य आर्थिक सहायता के लिये कठिन संघर्ष करना पड़ा। फरवरी 1967 में पी0 एल0 480 समझौता दीर्घ कालीन अवधि के लिये किया गया किन्तु इसके पूर्व अल्पविधि के समझौते किये जाते रहे।

जनवरी 1966 में अमेरिका का भ्रमण करने से पूर्व भारत ने कई शर्तो का पालन कर लिया था फिर भी भारत पर कुछ और शर्ते लादी गयी उदाहरण के लिये भारत को इस बात पर भी राजी होना पड़ा कि उसे आयात नियन्त्रणों को ढ़ीला करना पड़ेगा और इसके साथ ही साथ आन्तरिक मूल्य, विपणन और दूसरे व्यापारिक नियन्त्रणो को भी कम करना होगा। भारत ने यह भी बात स्वीकार की कि वह निजी विदेशी निवेश को खाद्य उत्पादन क्षेंत्र के लिये आमन्त्रित करेगा। भारत को परिवार नियोजन के लिये प्रयास करना होगा जून 1966 में भारत ने अपने रूपये का अवमूल्यन किया जो कि डालर की तुलना में लगभग आधा था अर्थात 4.76 रूपया प्रति डालर से 7.5 रूपया प्रति डालर कर दिया गया भारत में अमरका के राजदूत

चेस्टर बाऊल्स ने लिखा कि "कम से कम पॉच बार 1965, 1966 और 1967 के विशम वर्शो में राष्ट्रपति ने भारत सरकार और जनता को खाद्य आपूर्ति के विषय में आवश्यक रूप से परेशानी में डाला जिसके लिये कोई मानने योग्य स्पश्टीकरण न तो मुझे और नही मेरे साथियों को दिया गया।"

सैनिक सहायता पर रोक –

राष्ट्रपति कैनेडी के द्वारा सैनिक सहायता देने के वायदे का क्रियान्वयन जॉनसन काल में उत्तरोत्तर धीमा होता गया। मई 1964 में भारत के रक्षा मंत्री यशवन्त चव्हाण अमेरिका गये और अमरीकी रक्षा सचिव मैकन मारा से हथियारों की आपूर्ति पर चर्चा करके एफ 104 विमानों की विशेश रूप से मांग की। परन्तु उनके प्रयासों को उस समय यात्रा में कोई सुखद परिणाम नहीं निकला। जानसन से भेट के लिये समय मांगा किन्तु उन्हे अमरीकी राष्ट्रपति से मिले बिना ही भारत लौटना पड़ा क्योकि उसी समय नेहरू जी के देहान्त का उन्हे समाचार प्राप्त हुआा था। चव्हाण को अमेरिका में यह कहा गया था कि भारत को सुरक्षा क्षमता बढ़ाने के साथ–साथ अपने आर्थिक विकास पर भी ध्यान देना चाहिये। दूसरे शब्दों में वाशिंगटन सैनिक सहायता देने से आना कानी कर रहा था । परन्तु कुछ समय बाद अमेरिका भारत को कुछ सैनिक सहायता देने पर राजी हो गया ।

वियतनाम मे अमेरिका बमबारी –

नेहरु जी के स्वर्गवास के वाद लाल बहादुर शास्त्री भारत के प्रधानमंत्री बने उन्होने अमेरिका द्वारा वियतनाम मे की गयी बमबारी की कटु आलोचना की जिससे अमेरिका ने नाराज होकर उनकी अमेरिका यात्रा कार्यक्रम को रदद् कर दिया ।

भारत पाक युद्व 1965 –

1965 मे भारत पाक युद्व कच्छ के रण और कश्मीर क्षेत्रो मे लड़ा गया । अमेरिका की इस युद्व के प्रति प्रतिक्रिया तटस्थता का आभास लिये हुये थी। राष्ट्रपति जानसन ने भारत और पाकिस्तान दोनो को युद्व का विस्तार न करने का परामर्श दिया किन्तु इसकी समाप्ति के लिये कोई सक्रिय भूमिका नहीं निभाई बल्कि दोनो देशों को हथियारों की आपूर्ति रोक दी।

कुछ असन्तोष के कारकः–

1967 में नागा विद्रोही फिजो को अमेरिका में शरण दी गयी पाकिस्तान को तीसरे देशों द्वारा सैनिक सामान की आपूर्ति करने क अमेरिका ने प्रयास किये। 1968 में जब श्री मती गान्धी सयुक्त राष्ट्र संघ के अधिवेशन में भाग लेने के लिये न्यूयाक्र गई तो वे वाशिंगटन जाये बिना ही वापस लौट आई। इससे यह स्पष्ट होता है कि दोनों देशों के मध्य में गर्म जोशी का आभास होने लगा।

5. राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन और अमेरिका– भारत सम्बन्धः–

26 जनवरी 1969 को रिचर्ड एम0 निक्सन अमेरिका के राष्ट्रपति बने उनके कार्यकाल में भारत–अमेरिका सम्बन्धों में जितनी कटुता आई जो कभी पहले दोनों देशों के सम्बन्धों में इतनी कटुता कभी नही रही।

भारत–सोवियत मैत्री सम्बन्धः–

पूर्वी पाकिस्तान का संकेत जैसे–2 गहरा होता गया वैसे–2 महाशक्तियों की दिलचस्पी भारतीय उपमहाद्वीप की राजनीति में बदलने लगी।जिसके कारण दो सैनिक धुरियों के निर्माण की सम्भावनाऐं बनने लगी। ताशकन्द घोषणा पर भारत और पाकिस्तान के हस्ताक्षर करवाकर सोवियत संघ ने यह सिद्ध कर दिया था कि उसका प्रभाव इस क्षेत्र में बृद्धि पर था। इसलिए अमेरिका चीन के साथ सम्बन्ध सुधारने के लिए प्रयास कर रहा था। इन प्रयासों में पाकिस्तान की भी एक भूमिका थी। भारत का यह पर्यावलोकन बना अमेरिका चीन पाकिस्तान धुरी का निर्माण होने जा रहा था। अमरीकी सूत्रों ने भारतीय सूत्रों को इस बात की चेतावनी दी थी। कि यदि पूर्वी पाकिस्तान की समस्या पर भारत और पाकिस्तान के मध्य में यदि युद्ध हुआ और उसमें चीन कूदा तो अमेरिका भारत की सहायता नहीं करेगा। भारत ने अपनी सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए सोवियत संघ के साथ मेंत्री सन्धि कर ली। इस सन्धि के कारण भारत के प्रति अमेरिका और भी अधिक नकारात्मक रूख अपनाने लगा।

श्री मती गान्धी की अमरीकी यात्राः–

नबम्वर 1971 को श्री मती इन्दिरा गान्धी ने पश्चिमी देशों का भ्रमण किया इस भ्रमण के दौरान वाशिंगटन जाकर व राष्ट्रपति निक्सन से भी मिली और भारत पाकिस्तान सीमा पर बढते तनाव पर भारत के दृष्टिकोंण को स्पष्ट किया श्री मती गान्धी ने निक्सन से अनुरोध किया कि पाकिस्तान पर अपने प्रभाव का प्रयोग करे तथा पाकिस्तान को हथियारों की आपूर्ति

न करें। राष्ट्रपति निक्सन ने श्री मती गान्धी को इन दोनों विन्दुओं पर आष्वासन तो दे दिया लेकिन व्यवहार में कुछ नही दिया।

भारत–पाक युद्धः–

भारत पाक सीमा पर तनाव अन्ततोगत्वा युद्ध में परिवर्तित हो गया मुक्ति वाहिनी और पाकिस्तान सेना में युद्ध हुआ। भारतीय सेना में मुक्ति वाहिनी की सहायता की। युद्ध में पाकिस्तान की सेना को हारना पडा और उसके 95 हजार सैंनिक बन्दी बना लिये गये। युद्ध के दौरान अमेरिका ने पाकिस्तान का हर कदम पर राजनयिक समर्थन किया।

वशिंगटन में भारत के राजदूत एल0 के झा ने उस समय कहा था कि दक्षिण ऐशिया में निक्सन सरकार की नीति से भारत सरकार खुश नही है तथा भारत में इस भावना को बल मिला है कि अमेरिका भारत का अपमान कर रहा है। भारत पाक युद्ध जो 3 दिसम्बर 1971 को शुरू हुआ था। उसके एक दिन बाद अमेरिका विदेश विभाग ने एक लम्बे वक्तव्य में भारत को दोशी ठहराया। उसने यह भी घोषणा की भारत ने कुछ बंद नही किया तो न केवल उसे हथियारों की आपूर्ति रोक दी जाएगी। वल्कि आर्थिक सहायता भी बन्द कर दी जाएगी। इतना ही नहीं अमेरिका ने संयुक्त राष्ट्र संघ में एक भारत विरोधी प्रस्ताव पारित करवाया। जिस पर सोवियत संघ को अपने निशेधाधिकार का प्रयोग करना पडा। 16 दिसम्बर को दिल्ली में विभिन्न राजनीतिक दलों ने एक सभा में अमरीकी रवैये की निन्दा की। भारत के लिए सबसे दुखद बात यह थी। कि युद्ध क दौरान अमेरिका ने भारत पर मनगढन्त आरोप लगाये इतना ही नही 6 दिसम्बर को ही निक्सन प्रशासन ने भारत को 876करोड डालर की स्वीकृति आर्थिक सहायता रदद् कर दी। और उसके दो दिन बाद भारत में अमेरिका के राजदूत ने औपचारिक रूप से नई दिल्ली को सूचित किया कि वाशिंगटन भारत को हथियार देना बन्द कर रहा है।

अमेरिका का युद्धपोत राजनयः–

जब बांग्लादेश में पाकिस्तानी सेना का पतन अवश्यंभावी हो गया तो अमेरिका ने अपने सातवें बेडे के "इण्टरप्राइज" नाम के युद्धपोत को बंगाल की खाडी की ओर भेजने के आदेश दिये इस आदेश के स्पश्टीकरण में कहा गया। कि ढाँका में फसे अमरीकीयों को निकालने के लिये युद्धपोत को भेजा जा रहा था। इस युद्धपोत राजनय का उद्देश्य भारत पर मनोवैज्ञानिक दबाव बनाना था। अमरीकी पत्रकार जैक एण्डरसन, जिन्होने अमेरिका के गुप्त दस्तावेजों का

अध्ययन किया था। ने इस बारे में अपना एक प्रतिवेदन प्रस्तुत किया था जिसमें इस राजनय के कई अर्थ निकाले गये।

1–भारत को इस बात के लिए बाध्य करना कि वह अमेरिकी कार्यवाही दल के समुद्री जहाजों और वायुयानों का पीछा करने के लिए बाध्य हो जाये ताकि उसका ध्यान बट जाए।

2–पूर्वी पाकिस्तान के विरूद्ध भारत द्वारा की गयी नाकाबन्दी को कमजोर करना।

3–भारतीय वायुवाहक वाहक विक्रान्त को अपने सैनिक अभियान से विचलित करना।

4–भारत को इस बात को लिये वाध्य करना कि वह अपने वायुयान को प्रति रक्षात्मक चौकसी के लिये सावधान रखे जिससे कि उनका उपयोग पाकिस्तान की थल सेना पर कम से कम हो।

<u>दियागोगार्सिया का सैनिक अड्डा:–</u>

कन्याकुमारी से 12 सौ मील की दूरी पर स्थिति दियागो गार्सिया एक छोटे द्वीप में अमेरिका व विट्रेन में अपनी वायुसेना और नौ सेना का एक अडडा बनाने का निर्णय किया गया। इस निर्णय से भारत अमेरिका सम्बन्धों मे तनाव उत्पन्न होने की आषंका फिर से होने लगी। भारत की चिन्ता का विषय यह था। कि इस टापू पर सैनिक अडडा बन जाने और उसके विस्तार से भारत की सुरक्षा को गम्भीर चुनौती का सामना करना पडेगा और हिन्द महासागर में महाशक्तियों की नौ सैनिक प्रतिस्पर्धा में बृद्धि होगी। "भारत इण्टर प्राइज" की घटना को भूल नही पाया था। भारत ने सदा हिन्द महासागर को शान्ति का क्षेत्र बनाये जाने के सुझाव का समर्थन किया है। भारत के प्रधानमंत्री ने इस अडडे की उपस्थिति को शान्तिपूर्ण वातावरण के विरूद्ध बताया। अमेरिका ने तर्क दिया कि हिन्द महासागर में सोवियत संघ की नौ सेनिक गतिविधियों को ध्यान में रखते हुए शक्ति सन्तुलन की स्थापना के लिए अडडे की योजना बनायी गयी थी।

6. राष्ट्रपति फोर्ड और अमेरिका– भारत सम्बन्ध:–

वाटर गेट विवाद के बाद राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन को अपना पद छोडना पडा जिसके परिणाम स्वरूप 9 अगस्त 1974 को जिराल्ड फोंर्ड अमेरिका के राष्ट्रपति बने राष्ट्रपति फोर्ड ने निक्सन प्रशासन के अन्तिम दिनों में अमेरिका में उभरी सोच कि जहा तक सम्भव हो भारत के साथ सम्बन्धों को न विगाडा जाये फोर्ड के कार्यकाल में अमेरिका ने सोवियत विरोधी विदेशी

नीति का अनुशरण किया किन्तु उनके प्रसासन की कोशिश यह भी रही कि सोवियत संघ के साथ सैनिक प्रतिस्पर्धा को कम किया जाये और सम्बन्ध सुधारे जाये।इस बात पर भी वासिंगटन में ध्यान दिया गया कि भारतीय उप महाद्वीप में सोवियत प्रभाव को कम करने के लिये इस क्षेत्र के देश स्वतंत्र व स्थिर रहे और उनके अमेरिका के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रहे। इसके लिए उनके साथ विनियोजन व्यापार बढाने के अतिरिक्त उनके साथ सांस्कृतिक आदन–प्रदान को बढावा देने की आवश्यकता है तथा यह भी निश्चित किया गया कि इन देशों के आर्थिक विकास के साथ–2 इनमें से कुछ को सैनिक सहायता भी देनी होगी।

डा0 हेनरी किसिंजर की भारत यात्रा:–

27 अक्टूबर 1974 को अमेरिका के विदेश सचिव डा0 हेनरी किसिंजर ने दिल्ली की यात्रा की। इस अवसर पर भारत अमेरिका संयुक्त आयोग की स्थापना की गयी इस आयोग के कार्य क्षेत्र के अन्तर्गत दोनों देशो के बीच में आर्थिक व्यापारिक वैज्ञानिक प्रावधिक शैक्षिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में परस्पर लाभ प्रद सहयोग की सम्भावनाओं को खो जाने का प्रावधान किया गया।

भारत में आपातकालीन स्थिति की घोषणा:–

जून 1975 में आन्तरिक परिस्थिति के कारण भारत में आपात कालीन स्थिति की घोषणा की गयी जिसके अर्न्तगत कई प्रकार के नागरिक अधिकारों पर प्रतिबन्ध लगा यह घटना भारत का आन्तरिक मामला था। किन्तु राष्ट्रपति फोर्ड ने 17 सितम्बर 1975 को यह टिप्पणी की कि यह अत्यन्त दुखद घटना है और मैं यह आषा करता हूँ कि शीघ्र ही भारत में लोकतंत्र की प्रक्रियाओ का जिस अर्थ में अमेरिका में हम उनसे परिचित है। पुर्नस्थापना होगी। भारत में सरकारी स्तर पर इस टिप्पणी की तीब्र प्रतिक्रिया हुई। प्रधानमंत्री श्री मती इन्दिरा गाँन्धी ने इसे भारत के आन्तरिक मामले में हस्तक्षेप माना और कठोर शब्दों में विरोध प्रकट किया। इस घटना से भारत अमेरिका सम्बन्धों को सामान्य बनाने की प्रक्रिया को आघात लगा।

पाकिस्तान को अमरीकी शस्त्रों की आपूर्ति:–

फरबरी 1975 मे फोर्ड प्रसासन ने पाकिस्तान को शस्त्रों की आपूर्ति पर 10 वर्शो से लगे प्रतिबन्ध को हटाने के निर्णय की औपचारिक सूचना भारत सरकार को दी। इस निर्णय पर भारत में तीब्र प्रतिक्रिया हुई। निक्सन प्रशासन ने भी इस प्रकार का निर्णय लिया था। किन्तु भारत को औपचारिक रूप से सूचित नही किया गया था। अक्टूबर 1974 में डा हेनरी किसिंजर

की भारत यात्रा के उत्तर में भारत के विदेश मंन्त्री की अमेरिका यात्रा प्रस्तावित थी। जिसे इस घटना के साथ स्थगित कर दिया गया। अप्रिय प्रसंगों के बावजूद भी अमेरिका के साथ सम्बन्धों को सामान्य बनाने की आवश्यकता नई दिल्ली से अनुभव की गयी जिसके परिणाम स्वरूप अक्टूबर 1975 में भारत के विदेश मंन्त्री ने अमेरिका की यात्रा की। अन्य वातों के अतिरिक्त इस यात्रा का उददेश्य यह था कि फोर्ड प्रशासन को यह स्पष्ट कर दिया जाए कि पाकिस्तान को उन्नत हथियार मिलने से शिमला समझौते के अन्तर्गत सम्बन्धों के सामान्यीकरण की प्रक्रिया पर बुरा प्रभाव पड सकता है और दक्षिण एशिया में हथियारों की प्रति स्पर्द्धा बद सकती है।

सिक्किम के भारत में विलय पर अमरीकी प्रतिक्रियाः—

फोर्ड प्रशासन ने सिक्किम के भारत मे विलय होने पर इन्दिरा सरकार की कटु आलोचना की भारत के इस कदम को साम्राज्यवादी कहा गया। जब कि वस्तु स्थिति यह थी कि सिक्किम का शासन विदेशी शक्तियों के चंगुल में था। जिससे सिक्किम की जनता उसके कुशासन से मुक्ति पाने के लिए भारत में सिक्किम के मिलाने के लिए आन्दोलन कर रही थी कि वहॉ जनतंत्र स्थापित हो सके।

भारत द्वारा अणु विस्फोटः—

18 मई 1974 को भारत मे पोरवरण में भूमि के नीचे अणु विस्फोट किया जिसकी अमेरिका में तीव्र आलोचना हुई।अमेरिका ने भारत के बिरूद्ध कार्यवाही करने की चेतावनी दी। भारत ने अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा कि उसके द्वारा किया गया परमाणु विस्फोट शान्तिपूर्ण उददेश्यों के लिये है तथा निकट भविष्य में भारत का और दूसरा विस्फोट करने की कोई योजना नहीं है। ऐसा प्रतीत हुआ कि अमेरिका ने भारत के आष्वासन को स्वीकार कर लिया। एक विद्वान ने यह कहा कि राष्ट्रपति फोर्ड के कार्य काल में भारत—अमेरिका सम्बन्धों को श्री मती गॉन्धी द्वारा उठाये गये दो कदमों ने नकारात्मक ढंग से प्रभावित किया।

7. राष्ट्रपति कार्टर और अमेरिका—भारत सम्बन्धः—

20 जनवरी 1977 को डेमोक्रेटिक पार्टी के जेम्स कार्टर जो जिम्मी कार्टर के नाम से प्रसिद्ध थे। अमेरिका के राष्ट्रपति बने। मार्च1977 में भारत में आम चुनावों के फलस्वरूप इन्दिरा गान्धी सरकार का अन्त हुआ और जनता पार्टी ने विजय प्राप्त करके नई सरकार का गठन किया राष्ट्रपति कार्टर ने भारत में हुये इस राजनीतिक परिवर्तन का स्वागत किया। और

आषा व्यक्त की भारत में जनतंत्र की जडे सुदृण होगी और भारत अमेरिका सम्बन्धों में एक नये अध्याय का प्रारम्भ होगा। राष्ट्रपति कार्टर के कार्यकाल मे भारत अमेरिका सम्बन्धों में अपेक्षाकृत कुछ सुधार किया।

भारत और अमेरिकी विदेश मन्त्रियों के मध्य में सम्पर्कः—

जनता सरकार के विदेश मन्त्री अटल विहारी बाजपेयी जब एक सम्मेलन मे भाग लेने के लिये पेरिस गये तो उनकी अमेरिका के विदेश सचिव से भेंट हुई और दोनों में मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने पर बल दिया। अमेरिका ने सम्भवतः उस बैठक के फलस्वरूप भारत को पुनः आर्थिक सहायता देने की घोषणा की इसके बाद अमेरिका के उप बिदेश सचिव वारेन क्रस्टोफर ने भारत का भ्रमण किया।

राष्ट्रपति कार्टर की भारत यात्राः—

1 जनवरी 1978 को अमेरिका राष्ट्रपति भारत आये उनकी भारतीय नेताओं से अत्यन्त सौहार्द पूर्ण वातावरण में वातचीत हुई दोनों देशों की ओर से एक संयुक्त घोषणा भी जारी की गयी जिसको दिल्ली घोषणा कहा जाता है। इस घोषणा में आशा व्यक्त की गयी थी। कि ''नैतिक मूल्यों के आधार पर भारत और अमेरिका सभी समस्याओं का आधार ढूँढ लेगें।'' इस घोषणा और अन्य संकल्पों को भी दोहराया गया। अपनी यात्रा के दौरान यह घोषणा की कि उन्होंने तारापुर परमाणु विजली संयत्र के लिए सवंर्धित यूरेनियम की एक खेप भारत भेजने का प्राधिकार दे दिया है। कार्टर और देसाई के मध्य यह सहमति भी हुई थी। कि नाभकीय अस्त्रों के प्रसार के खतरे को रोकने के लिए कार्य किये जाऐं। अमेरिका के राष्ट्रपति की भारत यात्रा का भारत—अमेरिका सम्बन्धों पर अच्छा प्रभाव पडने की आषा की जा रही थी परन्तु राष्ट्रपति और उसके विदेश मंत्री साइरसवेन्स की यूरेनियम सम्बन्धी टेप वार्ता को लेकर दोनों देशो के मध्य एक अप्रिय प्रसंग घटित हुआ। कहा जा सकता है कि प्रधानमंत्री मोरार जी देसाई से बातचीत के बाद राष्ट्रपति ने अपने विदेश मंत्री को बताया कि ''जब हम लौटेगे तो में सोचता हूँ कि हमें उन्हें(देसाई) एक पत्र लिखना चाहिए। स्पष्ट और दो टूक''। इस प्रसंग को दोनों देशों ने तूल नहीं दिया। और इस घटना पर पर्दा डालने का प्रयत्न किया गया किन्तु फिर भी इस बात को लेकर गलतफहमी में विशेश कमी नही आई।

प्रधानमंत्री देसाई की अमेरिका यात्राः—

जून 1978 में राष्ट्रपति कार्टर के निमंत्रण पर भारत के प्रधानमंत्री मोरार जी देसाई ने अमेरिका का भ्रमण किया देसाई जी अमेरिका यात्रा के समय राष्ट्रपति कार्टर ने यह आष्वासन दिया कि अमरीकी विधि के अन्तर्गत तारापुर परमाणु बिजलीघरको ईधन की आपूर्ति करके भारत के साथ परमाणु क्षेत्र में सहयोग करने का प्रयास किया जायेगा। दिल्ली घोषणा में दोनो देशों ने जनतंत्र और आर्थिक विकास पर विशेश बल दिया और साथ में यह भी कहा कि वे अन्य राष्ट्रों के साथ अपने सम्बन्ध को सुधारेगें। मोरार जी देसाई की अमरीकी यात्रा की एक अन्य उपलब्धि यह थी कि दोनों देशों मे एक दूसरे के प्रति जो शंका और गलत फहमियॉ थी उनमें कमी आयी।

भारत को अमरीकी सवंर्धित यूरेनियम की आपूर्ति का मुदद्ाः—

कार्टर के कार्यकाल में यह मुदद्ा छाया रहा इसका कुछ विवरण दिया जाना आवश्यक है। क्योंकि इस मुदद् के समाधान हो जाने के बाद से दोनो दोनों देशों के सम्बन्धों में सुधार आया। जब श्री मोरार जी देसाई राष्ट्रपति कार्टर से अमेरिका में मिले थे तो उन्होने सवंर्धितम यूरेनियम की आपूर्ति के बारे में जो बातचीत की उससे ऐसा आभास मिला कि भारत के प्रधान मन्त्री एक याचक के रूप में बात नही कर रहे थे अपितु वे एक समान स्तर पर खुली चर्चा करने गये थे। भारत ने यह स्पष्ट कह दिया कि परमाणु अस्त्रों के सम्बन्ध में वह किसी अन्य शक्ति के दबाव को सहन नहीं करेगा। यहॉ पर यह बताना प्रासांगिक होगा कि तारापुर परमाणु केन्द्र को ईधन देने क प्रश्न को लेकर अमेरिका भारत पर निरन्तर दबाव डाल रहा था। वस्तुतः भारत को यह ईधन अमेरिका को एक समझौते के अनुसार मिलना ही था। किन्तु अमेरिका इसकी आपूर्ति में आना कानी कर रहा था। अन्त में अमेरिका कांग्रेस ने 13 जुलाई1978 को परमाणु ईधन की आपूर्ति करने के लिये प्रशासन को अधिकृत कर दिया। निःसन्देह सम्बन्ध सामान्य करने की दिशा में अमेरिका प्रशासन का यह एक प्रसंसनीय कदम था।

भारत के विदेश मन्त्री की अमेरिका यात्राः—

20—25 अप्रैल 1979 के बीच भारत के बिदेश मंत्री बाजपेयी ने अमेरिका का भ्रमण किया इस यात्रा के दौरान बाजपेयी ने कई द्विपक्षीय और अन्तर्राष्ट्रीय मामलों पर अमरीकी

अधिकारियों से बातचीत की।तारापुर संयत्र के लिए ईधन की आपूर्ति के बारे में कतिपय मतभेद बने हुये थे। बाजपेयी जी ने कहा कि अमेरिका को अपने संविदात्मक दायित्व का सम्मान करना चाहिए। उन्होने यह भी स्पष्ट किया कि यद्यपि अस्त्रों के प्रसार के निशेध के विषय में अमेरिका के उददेश्यों से भारत सहमत हैं। किन्तु नई दिल्ली का यह विचार है। कि यदि इन सुरक्षा संम्बन्धी उपायों का उददेश्य वस्तुतः परमाणु अस्त्रों के प्रसार को रोकना है। तो वाशिंगटन को चाहिए कि वह प्रसार के रोकने की प्रक्रिया को केवल विस्तार स्तर तक ही सीमित नही करे अपितु गहनता के स्तर पर रोक लगाये। यह रोक केवल उन राष्ट्रों पर ही लगाई जानी चाहिए। जिसके पास ये अस्त्र है और वे प्रचुर मात्रा में है भारत सुरक्षा सम्बन्धी उपायों को किसी दवाब में आकर स्वीकार नहीं करेगा। उन्होंने पाकिस्तान को यह समझाने का सुझाव दिया कि वह परमाणु अस्त्रों की होड इस क्षेत्र में आरम्भ न करे। वाजपेयी जी ने हिन्द महासागर में अमेरिका द्वारा नौसेना की शक्ति की जाने वाली बृद्धि को अन्य राष्ट्रों द्वारा अपनी नौ सेना की शक्ति की बृद्धि करने के लिये उत्तर दायी माना।

अफगानिस्तान में गृहयुद्ध और उसमें सोवियत हस्तक्षेपः–

31 दिसम्बर 1979 को अफगानिस्तान में गहराते गृहयुद्ध को देखकर सोवियत संघ ने अफगानिस्तान के साम्यवादी विचार धारा वाले शासकों के समर्थन में अफगानिस्तान सोवियत संघ मैत्री सन्धि के अर्न्तगत अपने सैनिक भेजे। सोवियत संघ के हस्तक्षेप से कार्टर प्रशासन अत्यन्त उत्तेजित हुआ और वासिंगटन में यह निर्णय लिया गया कि पाकिस्तान जो कि अफगानिस्तान का पडोसी राष्ट्र है उसको सैनिक सहायता बढा दी जाये ताकि वह अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप के कारण आये शरणार्थियों के लिये अपने यहॉ व्यवस्था कर सके और पाकिस्तान की भूमि से सोवियत सेनाओं का सामना कर सके। तत्कालीन पाकिस्तान के सैनिक शासक जनरल जियाउलहक ने अमेरिका द्वारा प्रस्तावित सहायता को मटर के दाने कहकर नकार दी और भारी मात्रा में सहायता की मॉग की। भारत ने दबी आवाज में सोवियत हस्तक्षेप की आलोचना की इससे अमेरिका भारत की प्रतिक्रिया से संन्तुश्ट नही हुआ। अमेरिका का यह निर्णय कि पाकिस्तान को जहॉ तक सम्भव हो आधिकारिक सैनिक सहायता दी जाये भारत को पसन्द नही आया। क्यों कि भारत को यह आषंका थी कि अमरीकी हथियारों का प्रयोग उसके ही विरूद्ध किया जायेगा।

8. राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन और अमेरिका–भारत सम्बन्धः–

रिपब्लिक पार्टी के 69वर्शीय रोनाल्ड 1981 में अमेरिका के नये राष्ट्रपति बने अभिनेता से राजनीतिज्ञ बने रीगन सबसे अधिक उम्र के राष्ट्रपति थे। रीगन ने विदेश नीति और देश की निरन्तर बिगडती आर्थिक स्थिति को चुनावी मुददा बनाया। रीगन ने कार्टर की विदेश नीति को ढीली ढाली विदेश नीति करार दिया। उन्होने कहा कि हम चाहते हैं कि ईरान से अमरीकी वंधक तुरन्त वापस आयें उन्होनें ने यह भी कहा कि जब सोवियत संघ ने अफगानिस्तान पर हमला किया था यदि वह सत्ता में होते तो वह तुरन्त ही क्यूबा की नाकाबन्दी करते। रीगन के सत्तारूढ होते ही सोवियत संघ के साथ सम्बन्धों में निरन्तर बिगाड के कारण जिस तरह की राजनीतिक स्थिति पैदा हो गयी थी। उससे अमेरिका और सोवियत संघ में एक प्रकार के शीत युद्ध का नवीनीकरण हो गया था।

डियागो गार्सिया अडडे का विस्तारः—

अमेरिका विश्व में जहा कही भी सम्भव हो अपने सैनिक अडडे बनाकर अपनी रक्षा शक्ति को मजबूत करने हेतु कटिबद्ध रहा। डियागो गार्सियो में उसने अपनी सामरिक शक्ति को बहुत विकसित कर लिया रीगन प्रशासन डियागो गार्सिया पर पृथक से पॉचवा हिन्द महासागर वेडा बनाकर लगभग 1 लाख दस हजार व्यक्तियों को वहॉ स्थायी रूप से रखना चाहता था। **पाकिस्तान को सैनिक सहायता—**

रीगन प्रशासन की नजरे में पाकिस्तान एशिया में अमरीकी हितो के लिये उपयोगी है। अतः वह इसे ईरान का दर्जा देना चाहता था वह उसे ऐसा विश्वसनीय क्षेत्रीय मित्र वना देना चाहता था जिस प्रकार पश्चिमी एशिया मे इजरायल है। इसी कारण अमेरिका पाकिस्तान से सम्बन्ध बढाने लगा उसे समर्थन देता रहा। उसे आर्थिक और सैनिक सहायता देता रहा तथा उसे आधुनिकतम घातक हथियारों से लैस करता रहा। जहॉ कार्टर प्रशासन पाकिस्तान को 40 करोड डालर की सहायता देना चाहता था। वहीं रीगन प्रशासन ने 1982—87 में पाँच वर्षो के लिये 3 अरब डालर की सहायता का ऐलान किया पाकिस्तान को अमेरिका ने एफ 16 सी, हाट मिसाइल और पूर्व चेतावनी देने वाले "अवाक्स"विमान आदि प्राप्त होते रहे दूसरी ओर अमेरिका को पाकिस्तान की धरती पर सैनिक अडडे कायम करने, पाकिस्तानी बन्दरगाहों का लाभ लेने तथा अमेरिकी पायलटों द्वारा गश्त लगाने वाले विमानों को चलाने की सुविधाऐं मिलती रहीं। इन व्यवस्थाओं से जहाँ अमेरिका को सोवियत संघ के खिलाप पाकिस्तान में

सैनिक अडड् पुख्ता करने का अवसर मिला वहीं पाकिस्तान को अमेरिका की गोद में बैठकर भारत को आँखें दिखाने का अवसर मिला।

गुटनिरपेक्ष आन्दोलनः—

रीगन को निर्गुट आन्दोलन में सोवियत वाद की ही गन्ध आती रही। संयुक्त राष्ट्र महासभा के मंच से सन् 1883 में रीगन ने सोवियत पिछलग्गू सरकार के इसमें घुस आने का आरोप लगाते हुए पूरे आन्दोलन को छद्मवेशी गुटनिरपेक्ष आन्दोलन घोषित किया। गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों से मोल ली गयी। कटुता का यह परिणाम था कि संयुक्त राष्ट्रसंघ का मंच अमेरिका की निन्दा का मंच बनता चला गया।

श्री मती गान्धी की अमेरिका यात्राः—

भारत अमेरिका के सम्बन्धों में तनाव बढने की आषंका ने नई दिल्ली को इस सोच बनाने के लिये बाध्य किया कि वाशिंगटन के साथ सम्बन्धों को और अधिक न विगडने दिया जाये। भारत के विदेश मंत्री पी0वी0 नरसिंह राव ने लोकसभा में कहा था कि प्रधानमंत्री की अमेरिका यात्रा का उददे्श्य यह होगा कि दोनों देशों के मध्य चलते मतभेदों को स्वीकार करना था। सहमति के क्षेत्रों की खोज करना। जिससे कि दोनों देशों में मित्रता और सहयोग बढे अक्टूबर 1981 को श्री मती गान्धी की अमेरिका के राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन के साथ थोडी देर के लिए कानकुन (मैक्सिको) में उत्तर दक्षिण आर्थिक शिखर वार्ता के अवसर पर भेंट हुई थी। ऐसा प्रतीत होता है। कि उस भेंट में श्री मती गान्धी उत्साहित हुई और जुलाई 1982में वे अमेरिका की यात्रा पर गयी। "श्री मती गान्धी की अमरीकी यात्रा की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि थी। रीगन गान्धी सांइस एण्ड टेक्नोलोजी इनिशियेटिव—एस टी0 आई 1982 इसके अतिरिक्त अमेरिका भारत के प्रतिरक्षात्मक सरकारों (डिफेन्स कन्सर्न्स) पर ध्यान देने के लिये तैयार हो गया। भारत अमेरिका सामरिक सम्बन्धों में मेमोरेन्डम आफ अण्डर स्टैण्डिंग (एम0सी0यू0) ऑन सेन्सिटिव टेक्नोलॉजिज कम्मोडिटीज एण्ड (एल0सी0ए0) इन्फारमेशन मील का पत्थर बना। इसके फलस्वरूप हल्के लडाकू विमान के निर्माण की प्रायोजना के लिये अमेरिका ने भारत के साथ सहयोग प्रारम्भ किया। राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन और श्री मती गान्धी दोनों ने अपनी सरकारों को यह निर्देश दिया कि भारत अमेरिका सम्बन्धों के "सकारात्मक पहिलुओं" पर बल दिया जाना चाहिए। और नकारात्मक पहलुओं पर कम ध्यान दिया जाय। स्वयं श्री मती गान्धी ने पहली बार इस बात को स्वीकार किया कि अमेरिका ने भारत के विकास मे सहायता दी।

अमरीकी उपराष्ट्रपति जार्ज बुश की अमरीकी यात्राः–

15 मई 1984 को उपराष्ट्रपति जार्ज बुश 4 दिवसीय सरकारी यात्रा पर भारत आये। इस यात्रा का उददे्श्य दोनों देशों के मध्य राजनीतिक सूझबूझ को बढावा देना था। अमेरिका के द्वारा पाकिस्तान को दिये जा रहे हथियारों की बात को ध्यान में रखकर भारतीय जनमत क्षुब्ध था। और नई दिल्ली शुरू से ही अपनी चिन्ता व्यक्त कर रही थी। समाचार पत्रों में छपी रिपोर्टो के अनुसार बुश ने आष्वासन दिया कि अमेरिका जो शस्त्र पाकिस्तान को दे रहा है। उसका प्रयोग भारत के विरूद्ध नहीं होगा। बुश ने स्वीकार किया कि अनेक मुदद्ों पर दोनों देशों के मतभेद रहते हुए भी भारत और अमेरिका के मध्य आर्थिक,सांस्कृतिक,वैज्ञानिक और तकनीकी सहयोग में बृद्धि हो रही है।

रिचर्ड मर्फी की भारत यात्राः–

21 अक्टूबर 1984 को अमेरिका के उप विदेश सचिव रिचर्ड मर्फी ने भारत यात्रा की। अपनी यात्रा के दौरान श्री मर्फी ने भारत–अमेरिका सम्बन्धो के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की समाचार पत्रों में जो यह चर्चा चल रही थी। कि अमेरिका पाकिस्तान को परमाणु संरक्षण प्रदान करने का विचार कर रहा है। उसका श्री मर्फी ने भारतीय नेताओं के साथ हुई बातचीत में खण्डन किया।

राजीव गान्धी की अमेरिका यात्राः–

प्रधानमंत्री का पद ग्रहण करने पर राजीव गान्धी ने विभिन्न देशों की यात्रा की। इसी क्रम में उनकी 5 दिवसीय अमेरिका यात्रा का कार्यक्रम बना। जो 11 जून से 15 जून 1985 तक था। उनकी यात्रा के दो लक्ष्य थे। एक तो पाकिस्तान को दी जा रही सैनिक सहायता के विषय में भारत की चिन्ता व्यक्त करना तथा दूसरा अमेरिका द्वारा पाकिस्तान के परमाणु आयुद्ध कार्यक्रम पर भारत के सरोकारों को व्यक्त करना। अपनी अमरीकी यात्रा के दौरान राजीव गान्धी ने राष्ट्रपति रीगन सहित अनेक अमरीकी नेताओं से द्विपक्षीय और अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर बातचीत की। उन्होंने अमरीकी कांग्रेस व नेशनल प्रेस क्लब को भी सम्बोधित किया। यात्रा के अन्त में जारी की गयी संयुक्त विज्ञप्ति में भारत के विरूद्ध विदेशी आतंकवादी कार्यवाही से निपटने के लिए अमेरिका ने सहयोग का आष्वासन दिया। दोनों नेताओं ने अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय से अपील की कि वह संगठित आतंकवाद के ''नये खतरे का सामना करने के लिये उचित कदम उठाये। संयुक्त विज्ञप्ति मु इस बात का भी उल्लेख था कि दोनों

देश कृशि, वानिकी, स्वास्थ्य और पोशण, परिवार कल्याण, औद्योगिक अनुसंधान विकास में सहयोग करेंगे। दोनों नेताओं ने विश्व शान्ति व आर्थिक विकास के बारे में बातचीत की और पारम्परिक सद्भाव को बढाने के लिए निरन्तर संयम से रहने का निश्चय किया। इस यात्रा की एक प्रमुख उपलब्धि यह कही जा सकती है। कि भारत और अमेरिका के नेताओं को व्यक्तिगत रूप से एक दूसरे को जानने का व समझने का अवसर मिला।

12 जून 1985 को श्री गान्धी का स्वागत करते हुये राष्ट्रपति रीगन ने कहा "हम भारत की गुट निरपेक्षता का सम्मान करते है। और आपका देश जो दक्षिण एशिया में केन्द्रीय भूमिका निभाता हैं उसको मान्यता देते है।" उन्होनें इस तथ्य को रेखांकित किया कि यद्यपि दोनों देशों के मध्य में कई मतभेद के क्षेत्र है। फिर भी संवाद और स्पष्ट बातचीत के माध्यम से दोनों देशों के बीच सूझबूझ को बढाने के लिये अवसर विद्यमान हैं। औपचारिक रूप से राष्ट्रपति रीगन ने राजीव गान्धी के नेतृत्व और उसके भारत की अर्थ व्यवस्था को सशक्त बनाने क प्रयासों की प्रशंसा की। संयुक्त राष्ट्र संघ की 40वी0 वर्ष गॉठ के अवसर पर अक्टूबर 1985 में राजीव गान्धी पुनः अमेरिका गये। उन्होंने राष्ट्रपति रीगन से अनुरोध किया कि वे अपने प्रभाव का प्रयोग करके पाकिस्तान के परमाणु बम बनाने के प्रयास को रूकवायें।

अमेरिका प्रतिरक्षा सचिव की भारत यात्राः–

अमेरिका के प्रतिरक्षा सचिव केस्पर बाइनवर्गर ने 11 से 14 अक्टूबर 1986 में भारत का भ्रमण किया। वे भारत में आने वाले अमेरिका के प्रथम प्रतिरक्षा सचिव थे। उनका भारत आगमन भारत–अमेरिका सम्बन्धों के राजनीतिक एवं सामाजिक आयाम को प्रशस्त किये जाने का परिचायक था इस यात्रा का प्रमुख उददेश्य प्रतिरक्षा संघ पर निर्भरता में कमी करना था। बाइन बर्गर ने नई दिल्ली को विश्वास दिलवाया कि अमेरिका भारत के साथ प्रतिरक्षा के क्षेत्र में सह–उत्पादन करेगा एवं प्राद्योगिकी के क्षेत्र में आदान–प्रदान करके सक्रिय सहयोग का आदान प्रदान करेगा। उसका संकेत सुपर कम्प्यूटर और जी0ई0404 इंजिनो की ओर था वर्ष के अन्त में 11 दिसम्बर 1986 को वासिंगटन में भारत को सुपर कम्प्यूटर देने के एक समझौते पर अमेरिका और भारत प्रतिनिधि मण्डलों के बीच हस्ताक्षर सम्पन्न हुआ।

भारत के विदेश सचिव की विदेश यात्राः–

जनवरी 1987 को भारत के विदेश सचिव ए0पी0 बेंकटेश्वर ने अमेरिका की यात्रा की यात्रा के उददे्श्य पारस्पारिक हित के महत्वपूर्ण मामलों और भारतीय उपमहाद्वीप की सामरिक स्थिति पर विचार विमर्श करना था।

भारत अमेरिका सहयोग के लिये एक मुद्रा कोष की स्थापनाः–

7 जनवरी 1987 को भारत–अमेरिका के वैज्ञानिक, सांस्कृतिक और शैक्षिणक क्षेत्रों में सहयोग के लिये भारतीय मुद्रा में एक कोश की स्थापना की। भारत के वित्त सचिव वैंकटरमण और भारत में अमेरिका के राजदूत गुन्थर डीन ने समझौते पर हस्ताक्षर किये।

श्री राजीव गान्धी की अमेरिका यात्राः–

अक्टूबर 1987 में प्रधानमंत्री राजीव गान्धी पुनः तीसरी बार अमेरिका की यात्रा की। इस यात्रा के विषय में भारत की बडी अपेक्षा की जा रही थी। ऐसी अपेक्षा की जा रही थी। कि भारत–अमेरिका सम्बन्धों में गुणात्मक सुधार होगा। इस आशावाद का आभास तब हुआ। जब राष्ट्रपति रीगन ने भारत को उच्च प्रोद्योगिकी देना सहर्श स्वीकार किया। काफी लम्बे समय से चलती आ रही वार्ताओं की परिणति दो महत्वपूर्ण समझौते में हुई। एक समझौता सुपर कम्प्यूटर की बिक्री से सम्बन्धित था। और दूसरा समझौता हल्के लडाकू विमान (लाइट कम्बेट एसरक्राफ्ट अथवा एल0सी0ए0) के सह उत्पादन से सम्बन्धित था परमाणु अप्रसार के प्रश्न पर राजीव गान्धी और रोनाल्ड रीगन के पर्यावलोकन में स्पष्ट मतभेद पाये गये। भारत के प्रधानमंत्री को स्पष्ट रूप से अमेरिका के राष्ट्रपति से यह कह दिया कि भारत परमाणु अप्रसार संन्धि पर हस्ताक्षर नहीं करेगा। तत्कालीन अमेरिका के प्रतिरक्षा सचिव फ्रेंक कार लूसी ने राजीव गान्धी को इस बात पर राजी करने का बडा प्रयास किया। कि भारत परमाणु अप्रसार सन्धि पर अपना द्रश्टिकोण बदल ले। राजीव गान्धी ने इतना तो अवश्य किया कि भारत का परमाणु हथियार बनाने का कोई इरादा नहीं है। परन्तु राजीव गान्धी ने यह शिकायत की कि दक्षिण एशिया में रीगन प्रसासन परमाणु मुदद् पर पाकिस्तान के विरूद्ध दोहरे मापदण्ड अपना रहा है। उन्होने विशेश रूप से इस तथ्य को रेखांकित किया। कि यद्यपि स्वयं वाशिंगटन के आकलन के अनुसार पाकिस्तान परमाणु हथियारों के क्षेत्र में सक्षमता प्राप्ति के निकट है। किन्तु फिर भी अमेरिका सरकार पाकिस्तान के पक्ष में सिंमिगटन संशोधन में छूट देने से वाज नही आ रही हैं। राष्ट्रपति रीगन ने श्री गान्धी यात्रा के दौरान कहा कि विज्ञान,प्राद्योगिकी और अन्तरिक्ष के क्षेत्र में (भारत और अमेरिका के मध्य में) सुद्रढ आधार पर सहयोग की अपार

सम्भावनाऐं है। उन्होने इस बात पर भी सहमति भी बताई की अमेरिका भारत के साथ मिलकर अनुसंधान परियोजनाओं को चलाए विशेश रूप से सूखे प्रदेशों में कृषि संवर्द्धन जन प्रबन्धन और जल श्रोतों के विकास की सम्भावनाओं को तलाषने के लिये।

अमरीकी प्रतिरक्षा सचिव की भारत यात्राः–

4 अप्रैल 1988 को अमेरिका के प्रति रक्षा सचिव फ्रेंक कार लूसी ने भारत की यात्रा की उनकी यात्रा का उददेश्य क्षेत्रीय मुदद्दों पर बातचीत एवं भारत को दिये जाने वाले हथियारों की सूची को अन्तिम रूप देना था। अमेरिका ने अप्रैल में यह निर्णय लिया कि वे भारत को आधुनिक हल्के लडाकू विमान बनाने में सहायता देगा। अमेरिका ने 4 अप्रैल को यह कहा था। कि भारत के रक्षा हितों के प्रति अमेरिका का प्रशासन जागरूक है। परन्तु 6 अप्रैल को वांशिगटन में घोषणा की गई कि अमेरिका पाकिस्तान को अफगानिस्तान में सोवियत सैनिकों की वापसी के पश्चात भी सैनिक सहायता में कोई कटौती नहीं करेगा। 2मई 1988 को अमेरिका ने पाकिस्तान को अत्याधुनिक हथियार न दिये जाने की भारत की अपील को ठुकरा कर कहा कि डेढ अरब 74 करोड डालर के शस्त्रों की सहायता समेत पाकिस्तान को 1988–93 के मध्य दी जाने वाली चार अरब दो करोड डालर की सहायता यथावत दी जाएगी।

राजीव गान्धी की अमरीकी यात्राः–

जून 1988 के पूर्वान्ह में प्रधानमंत्री राजीव गान्धी ने अमेरिका की यात्रा की उन्होंने राष्ट्रपति रीगन के प्रति उनकी तथा श्री गोर्वाचोव के मध्यम दूरी के प्रक्षेयास्त्रों को सीमित करने से सम्बन्धित की गयी सन्धि पर आभार प्रकट किया।

9. राष्ट्रपति जार्ज बुश और अमेरिका – भारत सम्बन्धः–

रीगन समथिन जार्ज बुश को राष्ट्रपति चुनकर अमेरिकों जनता ने स्पश्टतया रीगन की नीतियों का ही समर्थन किया तथापि राष्ट्रपति बुश ने अमरीकी विदेश नीति में बुनियादी परिवर्तन कर रीगन की नीति से अलग प्रकार की विदेश नीति का सूत्रपात किया। जहॉ रीगन ने नवशीत युद्ध की शुरूआत की वहॉ बुश ने शीत युद्ध की समाप्ति की घोषणा की जहॉ रीगन ने नाटों को शक्तिशाली बनाने की पेशकश की वहॉ बुश ने नाटो की अवांछनीयता प्रतिपादित की।

जहाँ रीगन ने "स्टार वार" कार्यक्रम प्रस्तुत किया वहाँ बुश ने सामरिक हथियारों में कटौती करने की एकतरफा घोषणा की। जार्ज बुश की भारत के प्रतिनीति निम्न प्रकार से व्यक्त की जा सकती है।

जनरल किक लाईटर की भारत यात्राऐं:-

राष्ट्रपति जार्ज बुश के कार्यभार सम्भालने के बाद ऐसा प्रतीत होने लगा कि भारत और अमेरिका दोनों इस बात की आवश्यकता को अनुभव करने लगे कि वे पारस्परिक सामरिक सम्बन्धों में सुधार लाऐं। अमेरिका ने दोनों देशों की थल और जल सेनाओं के मध्य में सहयोग और सम्पक्र बढाने में रूचि दिखलाई। जब कि भारत इन सेनाओं के अतिरिक्त दोनों देशों के वायु सेनाओं के मध्य में सम्पक्र और सहयोग बढाने का इच्छुक था। जनवरी 1989 में अमेरिका के जनरल मेकपीक ने भारत का भ्रमण किया। भारत में जो अमेरिका की थल सेना के जो अधिकारी आए उनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति लेफ्टीनेन्ट जनरल क्लॉड किक लाइटर थे। वे अमेरिका की पैसेफिक आर्मी के कमाण्डर थे। उन्होंने भारत की तीन यात्राऐं की सर्व प्रथम मार्च1989 में वे भारत आये। उस समय वे अमेरिका की पश्चिमी कमाण्ड के कमाण्डर थे। बाद में अमेरिका की पैसेफिक आर्मी के कमाण्डर के रूप मे दो बार भारत आये। एक बार नवम्बर 1990 में तथा दूसरी बार अप्रैल 1991 में। उनकी यात्रा के महत्व को इस बात से समझा जा सकता हैं। कि अमेरिका की यूनीफाइड कमाण्डो में यू0 एस0 पैसेफिक कमाण्ड सबसे बडी है।

भारत के रक्षा मन्त्री के0 सी0 पन्त की अमेरिका यात्रा:-

जून 1989 में भारत के तत्कालीन रक्षामंत्री श्री कृशणचन्द्र पंत ने अमेरिका की यात्रा की। राष्ट्रपति बुश के कार्यकाल में भारत के किसी रक्षामंत्री की यह पहली अमेरिकी यात्रा थी। जो सरकारी निमंत्रण पर आयोजित की गयी थी। रक्षामंत्री ने अमेरिका के रक्षा सचिव डिक चेने के साथ गम्भीर बातचीत की। इसके अतिरिक्त श्री पन्त ने अमेरिका के कई सैनिक प्रतिश्ठानो का निरीक्षण किया। कोलोराडो स्प्रिंगज में स्थिति यू0एस0 स्पेस कमाण्ड हेड क्वार्टर्स, यू0एस0 एयरफोर्स ऐरोनॉटीकल सिस्टम डिविजन स्थिति ओहियो स्थिति राइट पैटर सन एयर फार्स बेस और नारफॉक विरजिनयॉ में स्थिति यू0 एस0 एटलॉटिक हेड क्वार्टर्स आदि सैनिक प्रतिष्ठान थे। जिनको श्री पन्त ने देखा। दोनों देशों की ओर से प्रतिरक्षा के क्षेत्र में सहयोग पर कोई विधिवत औपचारिक प्रस्ताव नही रखे गये थे। किन्तु श्री पन्त ने अमेरिका

की पनडुब्बी प्रौद्योगिकी की प्रणालियों, कई प्रकार की युद्ध प्रौद्योगिकीयों सीन्लान्चड मिसाइल्स और डीप सी0 सेन्सर्ज प्राप्त करने की इच्छा व्यक्त की। भारतीय अनुरोध के प्रति अमेरिका का उत्तर काफी उत्साह जनक रहा। ऐसी रिपोर्ट समाचार पत्रों में छपी। भारत के रक्षामंत्री के अमेरिका भ्रमण के पश्चात् भारत के एड मिरल नादकर्णी वाइस एडमिरल चौपडा, एयर मार्षल कीलर, एयर वाइस मार्षल जय कुमार और जरनल शर्मा अमेरिका भ्रमण पर गये। इन भारतीय सैनिक अधिकारियों की अमेरिका यात्राऐं जुलाई, सितम्बर, अक्टूबर 1989 में ही सम्पन्न हुई। इन यात्राओं के बाद भी जुलाई 1991 तक भारतीय सैनिक अधिकारियों की यात्राऐं जारी रही राबर्ट किम्मिट जो अफगान समस्या का राजनीतिक समाधान ढूँढने के लिये सऊदी अरब और पाकिस्तान की यात्रा पर गये थें। ने जनवरी 1990 को भारत का भ्रमण किया उन्होने भारत के प्रतिरक्षा सचिव, विदेश सचिव, विदेश मंत्री, व प्रधानमंत्री से भेंट की और उन्हें अपनी यात्राओं के बारे में अवगत कराया।

जनरल रोड्रिग की अमेरिका यात्राः—

जुलाई 1991 में भारतीय थल सेना के अध्यक्ष जनरल एस0 एफ0 रोड्रिग ने अमेरिका की एक पखवाडे के लिये यात्रा की अपनी यात्रा के दौरान वे अमेरिका के आर्मी चीफ ऑफ स्टाफ जनरल गार्डन आर सुल्लीवन के अतिथि थे। अमेरिका में उनकी कई अन्य उच्च अधिकारियों से भेट हुई। जैसे चेयर मैन ऑफ दि जे0 सी0 एस0 जनरल कोलिन पावेल, सहायक सचिव प्रतिरक्षा, डोनाल्ड जे0एरबुड जूनियर सहायक सचिव, विदेश विभाग, लॉरेन्स ईगल बर्जर और अन्य वरिष्ठ अधिकारी,जनरल रोड्रिग ने अमेरिका के सैनिक अधिकारियों से दोनों देशों की जल और थल सेनाओं के संयुक्त सैनिक अभ्यासों की सम्भावनाओं पर विचार विमर्श किया। उनके विचार में वे सैनिक अभ्यास''आरम्भ में सीमित'' होगें। ऐसा प्रतीत होता कि भारत और अमरिका के सैनिक अधिकारियों के बीच चलते निरन्तर सम्पक्र को देखकर अमेरिका के नीति निर्माता इन सैनिक सम्पर्को और प्रति रक्षा के क्षेत्र में सहयोग की सम्भावनाओं के सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभावों और परिणामों को जॉचने की प्रक्रियामे व्यस्त दिखाई दिये। इस निष्कर्ष का आधार यह हैं कि जनरल किकलाईटर ने भारत अमेरिका के मध्य प्रतिरक्षा के क्षेत्र में किये जाने वाले सहयोग पर एक रिपोर्ट अपनी भारत यात्रा के पश्चात अमेरिका की सरकार को प्रस्तुत की थी। उस रिपोर्ट को कुछ समय तक गुप्त रखा गया और जनरल किक लाईटर की सेवानिवृत्ति के बाद केवल उसके कुछ अंशो को समाचार

पत्रों में जानबूझ कर "लीक" किया गया उस पर भारत में तथा उसके पडोसी देशों में और अमेरिका में क्या प्रतिक्रिया होती हैं इसका पता चल जायें। यह लीक करने के लिए भी अमेरिका ने उपयुक्त समय चुना यह समय था जनरल रोड्रिग की अमेरिका यात्रा के बाद का।

किक लाईटर प्रस्तावः—

सितम्बर 1991 में समाचार पत्रों में किक लाइटर प्रस्तावों के जो अंश प्रकाशित किये गये उनमें से कुछ निम्नाकिंत है—

1— दोनों देशों के चीफ आफ स्टाफ की एक दूसरे के देश में वार्शिक भ्रमण।

2— भारत अमेरिका सेना की कार्यकारी संचालन परिशद की स्थापना।

3— नियिमित रूप से सामरिक गोश्ठियों का आयोजन।

4— दूसरे विशिष्ट कमाण्डों की प्रत्युन्तर यात्राऐं(रेसीप्रोकल विजिटस)।

5— दोनों देशों की थल सेनाओं के स्टाफ के मध्य में नियमित बातचीत ।

6— स्टाफ सूचनाओं का आदान—प्रदान।

7— प्रत्युत्तर प्रशिक्षण (रेसीप्रोकल ट्रेनिंग) और व्यक्तिगत प्रशिक्षण कार्यक्रम

8— इकाई प्रशिक्षण आदान—प्रदान और प्रशिक्षण अभ्यासों का परिवेक्षण(आब्जर्वेशन)

9— संयुक्त प्रशिक्षण गतिविधियॉ।

10— पैसेफिक कमाण्ड की सयुक्त समिति के स्तर पर अमरीकी और भारतीय सेनाओं की बैठकों में

भागीदारी के कार्यक्रम।

11— 1993 में भारतीय और अमरीकी सेना(पैसेफिक कमाण्ड) द्वारा संयुक्त पैसेफिक आर्मीज मैनेजमेन्ट

संगोश्ठी का आयोजन।

12— क्षेत्रीय कान्फ्रेन्सों मे उपस्थिति व भागीदारी।

13— सामूहिक प्रशिक्षण सूचनाओं का आदान—प्रदान और सहयोग।

14— कार्मिक(परसॉनेल) आदान—प्रदान कार्यक्रम।

प्रतिरक्षा समझौताः—

उपयुक्त समय देखकर भारत और अमेरिका ने जनरल रोड्रिक की अमरीकी यात्रा के पश्चात एक प्रतिरक्षा समझौता किया। इस समझौते के अर्न्तगत भारतीय सैनिक अधिकारियों को अमेरिका के सैनिक अधिकारियों को अमेरिका के सैनिक प्रतिष्ठानों में रखी गयी जो रण कौशल (वारगेम्स) और सैनिक गतिस्थिति कला अवलम्बन (लॉजिस्टिक्स सपोर्ट) से लेकर संचार तथा नाभकीय अवधारणाओं तक निश्चित की गयी दो महीने के अन्तराल में जनरल रोड्रिगज बडे विश्वास के साथ यह कह सके कि भारत— अमेरिका प्रतिरक्षा सम्बन्ध''सामरिक पर्यावलोकन की भागीदारी पर आधारित थें। जिनका विकास पारस्परिक प्रबन्धों मे होगा जिनसे दोनों को समान रूप से लाभ होगा। यह कहने के बाद उन्होने इस बात का रहस्योद्घाटन किया कि भारत अपनी युद्धक शक्ति बढाने के लिए अमेरिका से शक्ति गुणक प्राप्त कर सकेगा। उपरोक्त विवेचना से यह बात स्पष्ट हो जाती हैं। कि भारत न केवल अमरीकी सैनिक प्रतिष्ठानों के साथ सम्पर्क साधकर सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास कर रहा था। बल्कि अमेरिका से सैनिक सज्जा सामग्री क्रय करने की सम्भावनाओं को भी तलाश रहा था। सोवियत संघ जो भारत की सैनिक सज्जा सामग्री की खरीद का प्रमुख केन्द्र था। शीघ्रता से अपखन्डन की ओर अग्रसर हो रहा था। ऐसे समय में सैनिक सज्जा सामग्री के वैकल्पिक श्रोतों की खोज करना भारत के लिये स्वाभाविक ही था। वस्तुतः सोवियत संघ के टूट जाने के बाद सैनिक सामान बनाने वाले भूतपूर्व सोवियत गणराज्यों में फैले हुये थें। और उनसे सैनिक उपकरण प्राप्त करने में भारतीय सेना को कठिनाई हो रही थी। भारतीय समाचार पत्रों में छपे समाचारों के अनुसार भारतीय प्रतिरक्षा नियोजक अमेरिका से अर्ली वार्निंग सिस्टम और एच0डई0 क्रमशः नौसेना और वायु सेना के लिये खरीदने की सम्भावनाओं को तलाश रहे थे।

अमेरिका के थल सेना और नौसेना शिष्टमण्डलों की भारत यात्राः—

इसी सन्दर्भ में जनवरी1992 में अमेरिका ने दो सैनिक शिष्ट मण्डलों को भारत भेजने का निश्चय किया। तत्कालीन भारत के रक्षा मंत्री शरद पवार ने 17 जनवरी को भारतीय प्रेस ट्रस्ट को एक सम्पूर्ण साक्षात्कार में यह बताया कि भारत और अमेरिका'' अपनी सेनाओं और अपनी प्रतिरक्षा गतिविधियों '' को एक दूसरे के लिये खोल रहे है। तथा महत्वाकांक्षी प्रतिरक्षा प्रायोजनाओं जैसे हल्का लडाकू विमान के क्षेत्र में सम्बन्ध स्थापित करने जा रहे है। इसके

कुछ दिन बाद ही लेफटी नेन्ट जनरल जानी कार्नस के नेत्रत्व मे अमेरिका का एक सैनिक शिष्ट मण्डल भारत आया जिनमें कर्नल जिम्मी एस वर्थ कार्यकारी अधिकारी लेफटीनेन्ट कर्नल लारेन्स आर वेल्टी, सहायक चीफ, स्टाफ ऑप्रेशन्स और भारत में अमरीकी दूतावास केनेथ सी0 विल0 और कर्नल आर जे0 किटिज शामिल थे। इस प्रतिनिधि मण्डल ने भारतीय सैनिक प्रतिनिधि मण्डल से बातचीत की। भारतीय प्रतिनिधि मण्डल का प्रतिनिधित्व लेफटीनेन्ट जनरल वी0 के0 सूद ने किया जो उस समय भारतीय सेना स्टाफ के सहायक चीफ थे। जनरल कार्नस ने जनरल रोड्रिग्ज प्रतिरक्षा सचिव एन0एन0 बोहरा विदेश सचिव जे0 एन दीक्षित नौसेना अध्यक्ष एल0 रामदास और वायुसेना अध्यक्ष एन सी सूरी से कई विषयों पर बातचीत की। प्रतिरक्षा सहयोग और सामरिक पर्यावलोकन की बातचीत के केन्द्रीय विषय रहे। एक दूसरा अमेरिकी सैनिक शिष्ट मण्डल एडमिरल फ्रेन्क केल्सों की अध्यक्षता में भारत आया। किलसो अमेरिका के नौ सेनिक अभियानों के मुखिया थे। उनकी यात्रा का स्पष्ट उददे्श्य था कि भारत और अमेरिका की नौ सेनाओं में सम्पर्क और सहयोग की शुरूआत हो संयोग वश जब अमरीकी नौ शिष्ट मण्डल भारत आया तब भारतीय नौसेना के मुख्यालय ने केन्द्रीय मंन्त्रीमण्डल के विचारार्थ यह प्रस्ताव रखा था कि भारतीय नौ सेना अमेरिका की नौसेना के साथ संयुक्त नौसेनिक अभ्यास करना चाहती है। यह कदम भारत की हिन्द महा सागर नीति में परिवर्तन का एक हल्का सा संकेत प्रतीत हुआ। केल्सो की यात्रा के दौरान भारत और अमेरिका की नौ सेनाऐं एक संयुक्त संचालन समिति के गठन पर सहमति हुई। इस यात्रा के दो महीने बाद भारत सरकार ने भारतीय नौ सेना को अमरीकी नौ सेना के साथ भारत के तटीय क्षेत्र से वाहर हिन्द महासागर में संयुक्त अभ्यास करने के लिये हरी झण्डी दिखा दी।

<u>सीनेटरमोयनाहान की भारत यात्राः–</u>

सीनेटर पैट्रिकि मोयनाहान जो भारत में अमेरिका के राजदूत रह चुके थे, वे जनवरी 1992 में भारत आये। राष्ट्रपति जार्ज बुश का एक पत्र प्रधानमंत्री नरसिंह राव के लिये लेकर आये थे। अपने पत्र में बुश ने लिखा कि उन्हे इस बात पर सन्तोष है कि दोनों देशों के मध्य में अच्छे सम्बन्ध निर्मित हो रहे है। 1991 से हो रहे विश्व व्यापी परिवर्तनों से दोनों महान जनतंत्रों को प्रेरणा लेनी चाहिए। मोयनाहान ने अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति, दक्षिण एशिया स्थिति एवं द्विपक्षीय सम्बन्धों पर अधिकारियों से बातचीत की 14 जनवरी 1992 को वे प्रधानमंत्री से मिले।

<u>नरसिंह राव की अमरिका यात्राः–</u>

जनवरी 1992 में भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री पी0वी0 नरसिंह राव ने अमेरिका की यात्रा की उनकी अमेरिका यात्रा का प्रमुख उददेश्य संयुक्त राष्ट्र संघ की 50 वीं वर्ष गॉठ के अवसर पर आयोजित राज्याध्यक्षों के सम्मेलन मे भाग लेना था सम्मेलन मे भाग लेने के बाद नरसिंह राव राष्ट्रपति जार्ज बुश से भी मिले।संयुक्त राष्ट्र मे दिये गये भाषण में उन्होने इस बात की स्पष्ट घोषणा कर दी। कि भारत परमाणु अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं करेगा। ऐसा कहकर उन्होने परमाणु मुदद् पर भारत की परम्परागत नीति की पुष्टि की। किन्तु राष्ट्रपति बुश के साथ हुई बात चीत में उन्होने अमेरिका के साथ द्विपक्षीय स्तर पर परमाणु मुदद् पर वार्ता का प्रस्ताव रखा। यहॉ यह बता देना समाचीन होगा कि बुश प्रसाषन ने परमाणु प्रसार के मुदद् को अपनी विदेश नीति की प्राथमिकताओं मे शीर्श स्थान दे रखा था।वाशिंगटन यह चाहता था कि भारत परमाणु अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर करे।अथवा दक्षिण एशिया में किसी द्विपक्षीय अथवा बहुपक्षीय व्यवस्था के अर्न्तगत भारत किसी ऐसी सन्धि पर हस्ताक्षर करे जिससे परमाणु अप्रसार सन्धि के उददेश्य प्राप्त हो जायें। अतः नरसिंह राव ने क्षेत्रीय उपागम को नकारते हुए इस मुदद् को अमेरिका के साथ द्विपक्षीय स्तर पर विचार करने का प्रस्ताव किया था।

भारत के विदेश सचिव दीक्षित की अमरिका यात्राः–

मार्च 1992 के पूर्वाद्ध मे भारत के विदेश सचिव जे0 एन0 दीक्षित ने अमेरिका की यात्रा की। उनकी अमरीकी यात्रा का सामान्य उददेश्य कई विषयों पर बातचीत करना था। भारत अमरिका सम्बन्धो में और अधिक सुधार लाने के लिये दीक्षित को अमेरिका के अधिकारियो और विधायकों से वार्तालाप करना था। भारत और अमेरिका में विदेश सचिव की यात्रा को विशेश महत्व दिया जा रहा था क्यों कि उनके वार्तालाप से दोनो देशो के सम्बन्धो मे विद्यमान आक्रोश को दूर किया जाना था। ताकि बुश के राष्ट्रपति बनने के बाद राजनीतिक और सामरिक सम्बन्धों में जो सुधार का क्रम बना था। उसमें कोई अवरोध आने की आषंका न रहे। एक भारतीय विश्लेशक ने इस सम्बन्घ में लिखा कि उस समय अमरिका ने कश्मीर मुदद् पर जिस प्रकार से अपनी स्थिति स्पष्ट की उससे भारत संन्तुश्ट प्रतीत हुआ और संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत के मत देने के व्यवहार में आये परिवर्तन से अमेरिका प्रसन्न था और दूसरा कारण था भारत द्वारा इजराइल के साथ कूटिनीतिक सम्बन्ध स्थापित करना। यद्यपि भारत और अमेरिका के बीच मे स्पेशल 301 पर मतभेद गहरे हो चले थे। किन्तु उनके राजनीतिक एवं सुरक्षा सम्बन्धों में आडे आने की सम्भावनाऐं कम थीं।

वाली हरगर संशोधनः—

वाली हरगर जो खालिस्तान के प्रबल समर्थक काग्रेंस सदस्य थें। ने दूसरा संशोधन प्रस्ताव प्रस्तुत किया था। और जिसे पारित कर दिया गया था। इस प्रस्ताव के अर्न्तगत अन्तर्राश्ट्रीय सैनिक प्रशिक्षण कार्यक्रम के मत में 345000डालर की दी जाने वाली सहायता पर यह शर्त लगा दी कि भारतीय सुरक्षा बलों को मानवाधिकारों के महत्व के बारे मे शिक्षा दी जाए। वाली हरगर ने यह भी मॉग की कि पंजाब और कश्मीर मे मानवाधिकारियों को उल्लंघन करने के आरोपों के कारण भारत को व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण देशो का दर्जा न दिया जाये।

अमरीकी सैनिक विमानो को भारतीय हवाई अडड्रो पर पेट्रोल भरने की सुविधा पर रोकः—

भारत ने अमेरिका को खाडी संकट के समय उसके विमानों के मार्ग में भारतीय हवाई अडड्रों से पेट्रोल भरने की सुविधा भारत अमेरिका को पहले से दे रहा था। किन्तु भारत मे यह विवाद उठ खडा हुआ कि अमेरिका भारत के एक मित्र देश इराक पर आक्रमण कार्यवाही कर रहा है। ऐसे समय पर अमेरिका को इस प्रकार की सुविधा देना कहॉ तक उचित है ?देश मे उमडते जनमत को ध्यान में रखकर नई दिल्ली ने सुविधा रोकने का निर्णय लिया। अमेरिका ने भारत की राजनीतिक मजबूरी को समझते हुए इस कार्यवाही पर कोई गम्भीर प्रतिक्रिया नही जताई।

अमेरिका द्वारा भारत के इसरो पर प्रतिबन्धः—

भारत रूस क्रायोजेनिक इंजिन के सौदे के विरूद्ध जब अमेरिका ने भारत के अन्तरिक्ष अनुसंधान केन्द्र के बिरूद्ध दण्डात्मक कार्यवाही की घोषणा की तो भारतीय संसद में मॉग की गई कि न केवल अमेरिका की निन्दा की जाए वल्कि भारत और अमेरिका के द्वारा निकट भविष्य में किये जाने वाले संयुक्त नौ सैनिक अभ्यासों के कार्यक्रम को रदद् कर दिया जाये। नई दिल्ली ने इस मामले को तूल ने देते हुये 27—28 मई 1992 को कोचीन के तट पर भारत अमेरिका संयुक्त नौ सैनिक अभ्यासों के कार्यक्रमों को यथावत रखा।

आतंकवाद और मानवाधिकारों का अतिक्रमणः—

जार्ज बुश के कार्यकाल में ऐसा प्रतीत हुआ कि वासिंगटन ने पाकिस्तान समर्थित आतंकवाद के वारे में भारत की चिन्ता को समझने का प्रयत्न किया। और इस समस्या को सुलझाने में कुछ दिलचस्पी दिखाई। मई 1990 में राष्ट्रपति जार्ज बुश ने अपने सहायक राष्ट्रीय

सुरक्षा सलाहकार रावर्ट गेट्स को अपने विशिष्ट प्रतिनिधि के रूप में भारतीय उपमहाद्वीप में भेजा अपनी पाकिस्तानी यात्रा के दौरान गेट्स ने आतंकवाद का मुदद्ा कश्मीर मुदद् के साथ उठाया। जून 1990 में अमेरिका के प्रतिरक्षा अधिकारी ने न्यूयाक्र टाइम्स को बताया कि अमेरिका यह चाहता है। कि "पाकिस्तान कश्मीर में आतंकवादियों को अपनी भूमि से जो सहायता दे रहा है। उसे रोक दे। बुश प्रशासन ने पाकिस्तान को चेतावनी दी। कि उसे उन राष्ट्रों की सूची में रखा जा सकता है। जो आतंकवादी गतिविधियों को प्रायोजित करते है। और प्रोत्साहन देते है। कुछ समय तक ऐसा प्रतीत हुआ कि अमेरिका की चेतावनी का कुछ प्रभाव इस्लामावाद पर पडा और आतंकवादी गतिविधियॉ भारत में थोडी सी थम गई। इस बात से नई दिल्ली को सन्तोश हुआ किन्तु यह क्षणिक स्थिति सिद्ध हुई और भारत में पाक समर्थित आतंकवादी गतिविधियॉ धीरे–2 पुनः तेज होने लगी।अमेरिका में पाकिस्तान समर्थन मजबूत लॉबियॉ है। वे भारत के विरूद्ध प्रचार करके अमरीकी विधेयकों को प्रभावित करती रहती है। भारतीय पुलिस और सैनिक बलों के द्वारा आतंकवाद के विरूद्ध की जाने वाली कार्यवाहियों को यह लॉवियॉ मानवाधिकारों के अतिक्रमण के रूप में चिन्हित करती है। जिसके कारण अमेरिका काग्रेंस में मानवाधिकारों के अतिक्रमण करने के आरोप में भारत विरोधी विधेयक लाये जाते है। ऐसा न केवल रीगन के काल में हुआ बल्कि बुश के कार्यकाल में भी होता रहा। कुछ मामलों में बुश प्रशासन ने इस प्रकार के प्रस्तावों का विरोध किया।

राष्ट्रपति विलक्लिंटन और अमेरिका–भारत सम्बन्धः– अमेरिका ने 3 नबम्वर 1992 को हुये राष्ट्रपति चुनाव में मतदाताओं ने रिपब्लिकन पार्टी को अपदस्थ कर डेमोक्रेटिव पार्टी के नेता विलक्लिंटन को भारी बहुमत से नया राष्ट्रपति चुना। 20 जनवरी 1993 को विलक्लिंटन ने राष्ट्रपति पद की शपथ ग्रहण की और कहा कि "जब शासन बदलता है तो अमेरिका के हित नही बदलते।"

भारत अमेरिकी सम्बन्धों में ऐतिहासिक मोडः– वर्ष 1993 में भारत अमरीकी सम्बन्धों में कडवाहट आयी। राष्ट्रपति क्लिंटन ने 27 सितम्बर 1993 को संयुक्त राष्ट्र महा सभा में कश्मीर को ऐसा संघर्ष रत क्षेत्र बतलायां। जिससे विश्व शान्ति को खतरा है। इससे पहले किसी अमरीकी राष्ट्रपति ने किसी अन्तर्राशर्ट्रीय मंच पर इस तरह का वयान नहीं दिया था। कश्मीर के अलावा मानवाधिकार, परमाणु अप्रसार और व्यापार भारत अमेरिका कडवाहट के प्रमुख मुदद् थे। मई1994 को अमरीकी सहायक विदेश मंत्री जान मैलट ने सार्वजनिक रूप से कश्मीर में

भारतीय सुरक्षा वलों की भूमिका की आलोचना की। क्लिंटन परमाणु अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर या अन्य किसी प्रकार के क्षेत्रीय अप्रसार व्यवस्था में शामिल होने के लिये भारत पर दवाब बनाये हुये थे। 19 मार्च 1998 को अटल विहारी वाजपेयी ने प्रधानमंत्री पद ग्रहण किया। अप्रैल 98 में विल क्लिंटन के विशेश दूत विल रिचर्डसन को भारत यात्रा पर भेजा गया इसके दो मुख्य उददेश्य थे–

1– भारतीय सरकार के मानस का पता लगाना।

2– विल क्लिंटन की भारत यात्रा का माहौल तैयार करना।

अमेरिका को यह उम्मीद थी कि वर्ष 1998 में अमरीकी राष्ट्रपति की भारत यात्रा आयोजित हो जाती है। तो भारत का बाजार अमेरिका को प्राप्त होने की पूरी उम्मीद थी। लेकिन अमेरिका भारत को ग्लोवल पावर के रूप में मान चुका था। इस कारण से आर्थिक सम्बन्धों को तीब्र गति से बढाने की इच्छा रखता था। अप्रैल 1998 में पाक द्वारा गौरी प्रक्षेपास्त्र का परीक्षण किये जाने के बाद परिस्थितियाँ परिवर्तित हुई। भारतीय रक्षामंत्रालय और रक्षामंत्री जार्ज फर्नाडीस भारत सरकार को यह महसूस हुआ। कि भारत की सुरक्षा को खतरा बढा है। इसके बाद में 11एवं 13 मई 1998 को पॉच परमाणु परीक्षण भारत की ओर से किये गये जिस पर पाक ने भी भारत का अनुशरण करते हुये 28 मई 1998 को परमाणु परीक्षण किये इससे अमेरिका भारत पाक दोनों पर बुरी तरह नाराज हुआ।

यह परीक्षण ऐसे समय में किये गये जब **N.P.T** व **C.T.B.T** सन्धि को लेकर अमेरिका का दवाब भारत पर बढता जा रहा था। अमेरिका ने भारत पाकिस्तान पर एक साथ आर्थिक प्रतिबन्ध लगाए थें। इससे भारत और अमेरिका के बीच तनाव पूर्ण वातावरण उत्पन्न हो गया। यद्यपि अमेरिका ने पाक को परमाणु परीक्षण करने से रोकने के प्रयास भी किये थे। जिसके लिये 15 मई 1998 को स्ट्रोव टॉलवोट को इस्लामावाद भी भेजा गया था। जिसमें अमेरिका का यह प्रयास रहा कि पाक भी परमाणु परीक्षण करता है। तो दक्षिणी एशिया में आणविक हथियारों को लेकर तनाव बढेगा। लेकिन पाक ने अमरीकी दवाब ठुकरा दिया। पाक जनता का दवाब भी काफी बढ गया था। इससे पाक द्वारा परमाणु परीक्षण करने से **N.P.T.** व **C.T.B.T.** पर हस्ताक्षर करने की समस्या और भी बढ गयी थी। भारत के परमाणु परीक्षण और पाक के परमाणु परीक्षण के बाद भारत अमेरिका सम्बन्धों को सुधारने के लिये अमेरिका के उप विदेश मंत्री स्ट्रोव टॉलवोट और भारत के प्रधानमंत्री के विशेश दूत जसवन्त

सिंह को एवं पाक की ओर से साहिव जादा याकूब खान को अधिकृत किया गया। इसके बाद में भारत अमेरिका के वीच जनवरी 1999 तक आठ शिखर वार्ताऐं आयोजित हो चुकी है।

1– अमेरिका द्वारा लगाये गये आर्थिक प्रतिबन्धों को हटवाना।

2– भारतीय परमाणु नीति के उददेश्यों से अमेरिका को अवगत कराना।

3– भारत और अमेरिका के बीच तनावों को कम करना।

4– अमेरिका के साथ व्यापक पहलुओं पर विचारों का आदान–प्रदान करना।

5– भारतीय सुरक्षा पडोसी राज्यों के खतरों से अमेरिका को अवगत कराना।

6– वार्ताओं में आने वाले गतिरोध को समाप्त करना।

7– पूर्ण समान निः शस्त्रीकरण की प्रक्रिया विश्व स्तर पर लागू करना। इन वार्ताओं में अमेरिका के निम्न उददेश्य रहे–

1– एन.पी.टी. व सी.टी.बी.टी. सन्धियों में भारत को शामिल करना।

2– परमाणु निःशस्त्रीकरण मुदद् पर अमेरिका जो अपनी नीति रखता है। उस पर भारत की सहमति प्राप्त करना।

3– भारत को विल क्लिंटन की यात्रा का वातावरण तैयार करना।

4– दक्षिणी एशिया में भारत–पाक मामलों में अमेरिका भागीदारी रखना चाहता है।

5– अमेरिका समान सुरक्षा व्यवस्था अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करना चाहता है।

6– अमेरिका भारत को विखण्डित पदार्थ नियंत्रण सन्धि में सम्मलित करना चाहता है।

7– अमेरिका सीमा शुल्क, वाणिज्य, ऊर्जा, निर्यात आदि के आर्थिक सम्बन्धो को बढाना चाहता है।

8– भारतीय प्रक्षेपास्त्र निर्माण पर अमेरिका प्रतिबन्ध लगाना चाहता है।

अमेरिका सितम्बर 1999 से पहले भारत से सी.टी.बी.टी. सन्धि पर हस्ताक्षर कराना चाहता था। इस हस्ताक्षर की प्रक्रिया से पहले क्लिंटन की भारत यात्रा भी आयोजित करना चाहता था। यद्यपि अमेरिका ने आर्थिक प्रतिबन्धों में छूट भी दी थी। लेकिन पूर्णरूप से प्रतिबन्ध नही हटाये है। अभी तक वार्ताओं का आयोजन होता रहा है। मार्च 1999 में 9वीं वार्ता का दौर होगा। इसके बाद भारत अमेरिका सम्बन्धों में क्या बदलाव आयेगा? इस सम्बन्ध मे हम यह कह सकते है कि भारत अमेरिका की बराबरी करते हुये। राष्ट्रीय सुरक्षा राष्ट्रीय हितों

की पूति करने के बाद ही सहमति प्रकट करेगा। यद्यपि बाजपेयी सरकार राष्ट्रीय हितों की पूर्ति करने के बाद ही सहमति प्रकट करेगा। यद्यपि बाजपेयी सरकार N.P.T. व C.T.B.T सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं करेगी। इसका मुख्य कारण यह है कि चीन को भारत की ओर से भारत को निरन्तर खतरा महसूस किया जा रहा हैं। चीन पाक की हमेशा मदद करता रहा है। और करता रहेगा।चीन को अमेरिका भी नहीं रोक पाया है। इसलिये अमरिका यह चाहता है। कि चीन के बाद भारत के पास सबसे बडा बाजार है। इस बाजार में अमेरिका उपभोक्ता वस्तुओं को बेचना चाहता है। भारत में 20 करोड मध्यम वर्ग के लोग निवास करते है। इस कारण से अमेरिका को भारत का बाजार चाहिए। भारत आणविक क्लव का सदस्य बनना चाहता है। वह Ps जैसे राष्ट्रों की सुविधा भी चाहता है। इस कारण से अमेरिका भारत सम्बन्ध सामान्य नहीं हो पायेगें। भारत अमेरिका सम्बन्धों के बारे में योगेश चन्द्र हालन ने लिखा था कि राष्ट्रपति चाहे डेमोक्रेटिक हो या रिपब्लिकन उसका मनोवैज्ञानिक ढॉचा अमरीकी ही है। एक सामान्य अमरीकी भारत के बारे में या तो अनभिज्ञ है। या गलत धारणाऐं लिये हुये है। दस में से 9 अमरीकी संसार के मानचित्र में भारत को नहीं पहिचान सकते है। भारत अमेरिकी सम्बन्धों के बारे में सुरेन्द्र निहाल सिंह ने भी लिखा कि" भारत अमेरिकी सम्बन्धों को लेकर अमेरिका की सोच में काफी अन्तर आया है। दोनों देशों के बीच कुछ हद तक सम्बन्ध अच्छे हुये है। इसकी एक बजह है। कि अमेरिका प्रशासन यह सोचने लगा है कि पाक से सम्बन्ध बनाये रखने का फायदा जो भी हो लेकिन दक्षिण एशिया का प्रमुख देश तो हिन्दुस्तान ही हैं। दूसरा कारण यह माना जाता हैं कि सोवियत अपनी नीतियों मे परिवर्तन कर रहा हैं इसलिये अमेरिका को भी अपनी नीतियों में परिवर्तन करना पडा।"अब अमेरिका हिन्दुस्तान की अहमियत समझता है। भारत में क्षेत्रीय नेतृत्व निभाने की क्षमता और इच्छा शक्ति दोनों ही मौजूद है।

राष्ट्रपति जार्ज वाकर बुश और अमेरिका भारत सम्बन्धः—

जनवरी 2001 में राष्ट्रपति जार्ज डब्ल्यू बुश ने आते ही विदेश नीति के क्षेत्र में आक्रामक रूख अपनाने के संकेत दिये। इसकी शुरूआत खाडी युद्ध के समय सेनाध्यक्ष रहे। जनरल कोलिन पावेल को विदेश मंत्री बनाने के साथ ही हो गयी थी। दुश्ट परमाणु ताकतों से अमेरिका और उसके मित्र देशों की सुरक्षा के लिये बुश 100—200अरब डालर की एन0एम0डी0 व्यवस्था विकसित करना चाहते है। जिससे विश्व में हडकम्प मचा हुआ है।

जार्ज डब्ल्यू बुश के प्रशासन में सामरिक दृष्टि से भारत को अधिक महत्व दिया जा रहा हैं तथा भारत से रक्षा सहित अन्य क्षेत्रों में सम्बन्ध स्थापित करने की सम्भावनाओं पर विचार किया जा रहा हैं भारत पर लगे प्रतिबन्धों के बावजूद अमरीकी प्रशासन ने राष्ट्रीय प्रक्षेपास्त्र रक्षा प्रणाली पर भारत से सलाह लेने का निर्णय लिया। अप्रैल 2001 में भारत के विदेश मंत्री बुश प्रशासन के साथ पहचान बनाने और रिश्तों की सम्भावना टटोलने गये थे। लेकिन राष्ट्रपति बुश के साथ उनकी अचानक और सीधी वार्ता से व्यवहारिकता के धरातल पर भारत अमेरिका सम्बन्धों की नीव डाल दी। जब जसवंत सिंह अमेरिकी राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार सुश्री राइस के कार्यालय में थे तब राष्ट्रपति बुश वहॉ अचानक आये और जसवंत सिंह से मिले बुश ने जसवंत सिंह को अपने ओवल आफिस आने का निमंत्रण दिया। 23 सितम्बर 2001 को अमेरिका ने भारत व पाकिस्तान पर आरोपित अमरीकी प्रतिबन्धो को हटाने की घोषणा की। कश्मीर के मामले में अमेरिका के दृष्टिकोण में बदलाव आने लगा। जिसका अभाव अमरीकी विदेश मंत्री कोटिन पावेल को 27–28 जुलाई 2002 की भारत व पाकिस्तान की यात्रा के दौरान भारत का हुआ। अभी तक कश्मीर को भारत व पाकिस्तान के बीच का द्विपक्षीय मामला बताने वाल अमेरिका ने यह स्पष्ट कर दिया है कि कश्मीर का मुदद्दा अन्तर्राश्ट्रीय एजेण्डे पर है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ऐशियन स्टडीज (कलकत्ता) वर्ष – 14, अंक 1 1996 पेज 44
2. फ्रेंकलिंन टुहेनरी किसिजर (न्यूयार्क) 1974 पेज 5,6
3. करेन्टहिस्ट्री (फिलाडेलिफया) मार्च 1959 पेज 146–152
4. इंडियन फॉरेन पॉलिसी – द न्यू ईरा (नई दिल्ली) 1976 पेज 134–135
5. फॉरेन अफेयर्स (न्यूयार्क) जुलाई 1971 पेज 638
6. डेनिश बुक्स, इंडिया एण्ड दी यूनाटेड स्थेट्स द स्ट्रेन्ज्ड डेमोक्रेसीज 1947–1991 (वाशिंगटन डी0 सी0) पेज 79
7. डेनिश बुक्स, इंडिया एण्ड दी यूनाटेड स्थेट्स द स्ट्रेन्ज्ड डेमोक्रेसीज 1947–1991 (वाशिंगटन डी0 सी0) पेज 79
8. स्ट्रटाजिक एनालिसिस वर्ष 21, अंक 12 मार्च 1998 पेज 1753
9. इंडियाज फॉरेन पॉलिसी सेलेक्टेडस्पीचेज, सित0 1946, अप्रैल 1961, नई दिल्ली पेज 201
10. जवाहर लाल नेहरू एनायोग्राफी 1947–1956, वॉल्यूम (नई दिल्ली 1961) पेंज 105
11. चेस्टर वाउल्स प्रामिजेजटुकीप : माईइयर्सइन पब्लिक लाइफ 1941 –69 (न्यूयार्क 1971) पेज 478–79
12. एनाटॉमी ऑफ इएडोन्यु0 एस0 रिलेशन्स, वर्ल्ड अफेयर्स, नई दिल्ली वर्ष–5,अंक 1 जून 1996 पेज 23
13. उद्घृत – रिचर्ड पी0 स्टेबिन्स, डाक्यूमेन्ट्स ऑन अमेरिका फॉरेन पॉसिली (न्यूयार्क 1962) पेज 293
14. फॉरेन अफेयर्स रिकार्डस (नई दिल्ली) 12 – 18 फरवरी 1962 पेज 62
15. एशियन रिकॉर्डर (नई दिल्ली) 12 – 18 फरवरी 1962 पेज 4417
16. दीनानाथ वर्मा , अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध (दिल्ली1996) पेज 280
17. जॉन एफ कैनडी दी स्ट्रटजी ऑफपीस (न्यूयार्क 1960) पेज 122
18. फारेन अफेयर्स रिकॉर्ड्स (नई दिल्ली) नव 1961 पेंज 443
19. क्रीसिंग्स कन्टेम्पोरेरी आर काइब्ज 1961–62 पेज 18660
20. दी अमेरिकन जर्नल ऑफ इण्टर नेशनल लॉ (वाशिंगटन डी0 सी0)वर्ष 56 1962,

पेज 617—32

21. आर्थर एम0 श्लेसिंगर ए थाऊजेन्ड डेज (लन्दन 1965) पेज 459

22. एशियन रिकॉर्डर (नई दिल्ली) 12 — 18 फरवरी 1963 पेज 4417

23. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड (नई दिल्ली) मार्च 1962, पेज 64

24. डाक्यूमेन्ट्स ऑन अमेरिकन फारेन पॉलिसी (न्यूयार्क 1962) पेज 293

25. चेस्टर बाऊलस, ''अमेरिका एण्ड एशिया इन इण्डिया'' फॉरेन अफेयर्स (न्यूयार्क) जुलाई 1971 पेज 638

References:

1. A Appadarai and M.S Rajan(e.d) India"s foreign policy and Relation(Delhi,1985) Page 18

2. नेहरू - भारतीय विदेश नीति - Page-585

3. charles h.heimsath ,diplomatic history of modern India (Bombay 1971), Page 172

4. J.Bandhgopadhyaya , Making of india"s forign policy (Calcutta 1970) Page 243

5. डा0 पुश्पेश पंत एवं श्री पाल जैन , अन्तराष्ट्रीय सम्बन्ध Page.398

6. Dr. M.S Rajan , India in world affairs (1945-56) Page-258

7. Venkata Raman American Millitary-Alliance with Pakistan , International Studies , July –oct . 1956 , Page- 73

2. Appodorai , Essays in Indian politics &Forigen Pollicyb 1971, Page-173

9. The Times of India, 23 March , 1977

10. डा0 वेदप्रताप वैदिक भारतीय विदेश नीति नये दिशा संकेत Page 102

11 वार्शिक रिपोर्ट 1991–92, विदेशमन्त्रालय, भारत सरकार Page 39

अध्याय तृतीय

दक्षिण एशिया के सन्दर्भ में भारत – अमेरिका सम्बन्ध

दक्षिण एशिया के सन्दर्भ में भारत – अमेरिका सम्बन्ध

1. विल क्लिंटन काल और अमेरिका भारत सम्बन्ध –

20 जनवरी 1993 को विल क्लिंटन अमरीका के राष्ट्रपति बने। राष्टपति को ऐसा विश्व मंच मिला जहॉ उसका कोई प्रतिद्वंद्वी नही है। शीत युद्ध समाप्त हो चुका है। सोवियत संघ का अस्तित्व ही नही है। साम्यवादी खेमा धराशायी हो चुका है। विश्व एक ध्रुवीय है। जिसमे शीर्ष पर अमरीका है। अतः अमरीका राष्ट्रपति विल क्लिंटन सम्पूर्ण शक्तियों के साथ विश्व का नेतृत्व कर रहे है चार्ल्स क्राउथर ने कहा है। कि –"शीत युद्धोत्तर विश्व की असाधारण विशेषता उसका एक ध्रुवीकरण है। " क्लिंटन के प्रथम काल में भारत के साथ अमरीका के सम्बन्धों मे गिराबट ही देखने को मिली भारत को अर्थिक उदारीकरण और अपने अर्थ तंत्र को विश्व अर्थ तंत्र से जोड़ने के लिये दबाव डाला गया (N.B.T.) की सन्धि पर हस्ताक्षर करने के लिये दबाव डाला जाता रहा है। भारत की चली आ रही स्वतंतत्र विदेश नीति सामरिक समस्या , राकेट टेक्नोलॉजी विकसित करने की उसकी आंकाक्षा और आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्वी बनने की उसकी इच्छा ही अमरीका की ऑख की किरकिरी बनी हुई है। [1]

अमरीका भारत सम्बन्ध के आर्थिक आयाम –

पिछले पॉच दशको में पारस्परिक सार्वजनिक वाद – विवाद के कारण भारत–अमरीका राजनीतिक एवं सामरिक सम्बन्ध आकर्षण का केन्द्र बने रहे है। और इसके विपरीत भारत – अमरीका आर्थिक सम्बन्धों ने सार्वजनिक ध्यान को अधिक आकर्षित नही किया किन्तु भारत अमरीका सम्बन्धों का आर्थिक आयाम भी कम विवादस्पद नही रहा है। शीत युद्ध काल मे इन दोनो देशो के आर्थिक सम्बन्ध राजनीतिक सम्बन्धों से विशेश रूप से प्रभावित रहे। राष्ट्रपति जॉन एफ0 कैनडी के कार्य काल मे कुछ समय के लिये जो आर्थिक सम्बन्ध दोनो देशो के मध्य मे विकसित हुये उन्हें भारत–अमरीका के आर्थिक सम्बन्धो के इतिहास मे अपवाद की संज्ञा दी जा सकती है। यद्यपि उन्हे भी अमरीका के राजनीतिक एवं सामरिक उद्देश्यो से पूर्ण रूपेण मुक्त नही कहा जा सकता है। शीत काल के अन्तिम बर्षो मे तथा शीत युद्धोत्तर काल मे आर्थिक सम्बन्धो को अन्तराष्ट्रीय राजनीति मे आर्थिक महत्व दिया जाने लगा। अमरीका के पर राष्ट्र सम्बन्धों मे सामान्तया यह तथ्य स्पष्टतः झलका किन्तु भारत और अमरीका के द्विपक्षीय आर्थिक सम्बन्ध पूर्णतया उसके राजनीतिक एवं सामरिक उद्देश्यो

से मुक्त नही हो पाये। वस्तुतः उन्हे राजनीतिक एवं सामरिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु दवाब के रूप मे प्रयोग किया गया।

भारत – अमरीका आर्थिक सम्बन्धो की पृष्ठभूमि –

स्वतंत्रत्रा प्राप्ति के पश्चात् भारतीय यह आशा लगाये हुये थे कि भारत और अमरीका के मध्य आर्थिक सम्बन्ध प्रगाढ होगे। दूसरी औ भारत की जनसंख्या और प्राक्तिक संसाधनो को ध्यान मे रखकर अमरीका भारत के साथ आर्थिक सम्बन्ध बनाने की सोच रहा था। परन्तु शीघ्र ही यह आशावाद ठण्डा पड़ने लगा । दोनो देशो ने यह पाया कि उनके आर्थिक दर्शन और उनकी नीतियॉ एक दूसरे के साथ मेल नही खाती थी देश मे गरीबी और आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिये भारतीय नेतत्व ने " जनतांत्रिक समाजवाद" का एक लक्ष्य के रूप में चुनाव सैद्धान्तिक आधार पर नही बल्कि मानवीय अर्थो मे किया गया। भारत ने मिश्रित अर्थ व्यवस्था को अपनाया जिसमे केन्द्रीय योजना को प्रमुख्य भूमिका प्रदान की गयी । अर्थ व्यवस्था को सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र मे बॉटा गया। सार्वजनिक क्षेत्र को महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान की गयी। संयुक्त राज्य अमरीका समाजवाद को तिरस्कार की दृष्टि से देखता था। वह केन्द्रीय योजना का विरोधी था और उसका यह भी विश्वास था कि अर्थव्यवस्था संचालन मे राज्य का हस्तक्षेप उचित नही क्यो कि वह नियमों और नियन्त्रणों को जन्म देता है। जिससे आर्थिक वृद्धि अवरूद्ध होती है। आर्थिक दर्शनो की भिन्नता को ध्यान मे रखते हुये अमरीका भारत के साथ अपनी शर्तो पर एक वाणिज्य सन्धि सम्पन्न करने के लिये उत्सुक था ताकि उसके अपने आर्थिक हितो के सेरक्षण को सुनिशचित किया जा सके कई वर्षो तक सत्त प्रयत्न करने के बाबजूद दोनो देश वाणिज्य सन्धि के प्रारूप पर एक मत नही हो सके । द्विपक्षीय आर्थिक सम्वन्धो को तीन क्षेत्रो मे विभाजित किया जा सकता है। और वे है– व्यापार विनियोजन सहायता को तीन उपक्षेत्रो मे विभाजित किया जा सकता है। और वे है– नकद वस्तुगत और सेवागत जिसमें प्राविधिक सेवाऐं शामिल रहती है।

दिसम्बर 1950 मे जब अमरीका ने भारत को आर्थिक सहायता देना प्रारम्भ किया तब उसने प्रथम प्रावधिक सहयोग समझौते पर हस्ताक्षर किये उसके एक वर्ष वाद एक विशेष अधिनियम के अन्तर्गत 1897 मिलियन डालर की राशि के मूल्य का गेहूँ ऋण अमरीका द्वारा भारत को दिया गया। शनैः–2 अमरीका के द्वारा भारत को दी जाने वाली सहायता मे विस्तार होने लगा विदेशी मुद्रा विनिमय के लिये ऋण विकासात्मक अनुदान , यू एस फण्ड (यू0 एस0

एजेन्सी फॉर इण्टर नेशनल डवेलपमेन्ट) के माध्यम से कुशि उत्पाद , यू0 एस0 एक्सपोर्ट – इम्पोर्ट बैंक और पब्लिक लॉ 480 (एग्रीकल्चरलट्रेड डेवलप मेंट एण्ड असिस्टेण्डटस एक्ट ऑफ 1954) द्वारा अमरीका सहायता के संवाहक बने। भारत को द्विपक्षीय सहायता देने वालो मे अकेला अमरीका सबसे बड़ा सहायता दाता बना। अप्रैल 1971 तक भारत द्वारा प्राप्त कुल विदेशी सहायता राशि कि आधी राशि अकेलें अमेरिका ने की । यह राशि 9,896.3 मि0 डालर थी इसमे अनुदान और ऋण शामिल थे पॉच वर्षो तक भारत को अमेरिका से सहायता नही मिली 1987 अमेरिका ने पुनः सहायता को देना प्रारम्भ किया उस वर्ष भारत को 7 मिलियन की राशि प्रदान की गयी ।

द्विपक्षीय सहायता देने के अतिरिक्त अमेरिका ने भारत को बहुपक्षीय विनती सस्थाओं का सदस्य बनबाया। 1951–1967 तक की 16 वर्ष की अवधि मे तीन पंचवर्षीय योजनाओ के लिए प्राप्त कुल विदेशी सहायता का 54 अमेरिका ने दिया जो सहायता दाता देशो मे सबसे बड़ी रकम अमेरिका का प्रथम पंचवर्षीय योजनाओ मे अंश दान 63.3 प्रतिशत , द्वितीय पंचवर्षीय योजनाओं मे 58.5 प्रतिशत रहा तथा तृतीय पंचवर्षीय योजनाओ मे 58.5 प्रतिशत रहा। चौथी पंचवर्षीय योजना में भारत को प्राप्त कुल विदेशी सहायता मे अमेरिका का अंशदान सर्वाधिक रहा परन्तु वह कुल राशि का 50 प्रतिशत था।

जहॉ तक अमेरिका द्वारा भारत को दिये जाने वाले अनुदानो एवं ऋण का सम्बन्ध है एक अनुमान के अनुसार वह इस प्रकार थे–

अवधि	ऋण अथवा अनुदान के रूप मे दी गई धनराशि (मिलियन डालर में)
1946 से 1955तक	370
1956से 1965 तक	4890
1966 से 1975 तक	3815
1976 से 1980 तक	512
1946 से 1980 तक	9587

अमरीका द्वारा दी जाने वाली सहायता मे निस्तर कमी आने के कई कारण थे जैसे अमरीका की वियतनाम मे अपमानजनक हार, वाटर गेट काण्ड से उत्पन्न घरेलू संकट , विश्व

अर्थ व्यवस्था मे अमरीका को पश्चिमी यूरोप और जापान से चुनौती । तेल उत्पादक एवं निर्यातक राष्टो के द्वारा तेल के मूल्यो की वृद्धि का अमरीका की अर्थ व्यवस्था पर दुश्प्रभाव।

अमरीका द्वारा भारत पर लगाये गये आर्थिक प्रतिबन्ध –

अमरीका ने भारत पाक के परमाणु परीक्षण करने के बाद ही आर्थिक प्रतिबन्ध लगाने की घोषणा की थी जो कि दोनो ही राष्ट्रो पर समान रूप से लगाये गये थे जिसका विवरण इस प्रकार हैः–

1. विदेशी सहायता कानून के तहत विदेशी मदद स्थगित।
2. भारत के लिये 2.1 करोड़ की अर्थिक विकास आवास सहायता की गारंटी समाप्त।
3. भारत मे 60 लाख डालर वाला ग्रीन हाउस गैस कार्यक्रम स्थगित।
4. व्यापार ऐजेन्सी पर या नई परियोजनाओ पर अमरीका विचार नही करेगा।
5. पाकिस्तान को मिलने वाली अधिकतर सहायता पहले से ही बन्द है।
6. शस्त्र निर्यात नियन्त्रण कानून के तहत विदेशी सैन्य बिक्री रोकी।
7. भारत को पूर्व मे मंजूर रक्षा उपकरणो और सेवाओ की आपूर्ति स्थगित।
8. यू0 एस0 जी. ऋण का कोई नया वादा और यू0एस0जी0 की जोड़ी संस्थाओं एक्जिम ओपेक और सी0सी0 से ऋण गांरटी रोकी।
9. प्रशासन ऋण की इजाजत के लिए विधेयक का समर्थन करेगा।
10. ओपेक ने हाल ही पाकिस्तान में अपना काम शुरू किया है। लेकिन भारत को ओपिक समर्थन के तहत हर वर्ष औसतन 30 करोड़ डालर प्राप्त होता था। उसे रोक दिया गया।
11. जी0 8 समूह के प्रस्ताव का समर्थन दस समूह ने भारत पाक के लिये अन्तर्राश्टीय वित्तीय संस्थाओं द्वारा दिये जाने वाले गैर बुनियाद मानवीय ऋण को स्थगित करने का प्रस्ताव दिया है।

भारत में अमरीका का वियोजन –

अमरीका के साथ द्विपक्षीय व्यापार के क्षेत्र में 1970 के दशक में भारत की उपलब्धियॉ तो उल्लेखनीय थी ही उनका क्रम 1980 के दशक में में भी चला। भारत का व्यापार क्षेत्र में अमरीका सबसे बड़ा भागीदार रहा । 1961 से लेकर 1977 तक अवधि में अमरीका का व्यापार आधिक्य सरप्लस मिलियन रूपयों से लेकर 7646 मिलियन के

अधिक्य की राशियों के बीच उपर नीचे होता रहा । 1983 में स्थिति में कुछ अन्तर आया जब भारत के अमरिकों कियें गये नियति 118 प्रतिशत की दर से बढ़े तव नियति 5935 मिलियन डालर से बढ़ कर 12939 मिलियन डालर राशि के हो गये । भारत के निर्यातो मे निरन्तर वृद्धि की प्रवृत्ति वर्ष 1990–91 को छोड़कर वर्ष 1992–93 तक बनी रही। जैसा कि सारणी 6अ और सारणी 6ब को देखने से स्पष्ट होता है। यह वृद्धि अमरीका को खटकी क्योकि इससे उसे वैश्विक व्यापार घाटे मे वृद्धि हुई।वस्तुतः बुश राष्टपतित्व काल मे भारत – अमरीका के आर्थिक सम्बन्धो मे इस कारक के कारण तनाव की स्थिति बनी ।

भारत अमरीका का व्यापार (मूल्य करोड़ रूपये मे)

वर्ष	निर्यात	आयात	द्विपक्षीय व्यापार	व्यापार सन्तुलन
1990–91	47.96	52.44	10041.12	448.12
1991–92	7201.69	4919.38	12121.07	2282.31
1992–93	10106.07	6147.20	16253.27	3958.87

श्रोत –डी0 जी0 सी0 आई0 एण्ड0 एस0 कलकत्ता

सारणी –7अ

भारत को अमरीकी सहायता

(मिलियन डालर में)

अमरीकी वित्त वर्ष	प्रतिबद्ध राशि
1951–1977	10,238.1
1978	215.1
1979	272.3
1980	246.4
1981	299.5
1982	251.8
1983	219.8
1984	215.3

1985	179.4
योग	12,137.7

Year	Loan	Grant	Debt Service	Net Assistance
1990-91	34.54	29.96	-320.22	-285.68
1991-92	52.36	45.85	-459.99	-407.63
1992-93	68.46	8.57	-561.37	-492.91
1993-94	0.00	17.29	-576.28	-576.28
1994-95	0.00	35.25	-580.47	-580.47
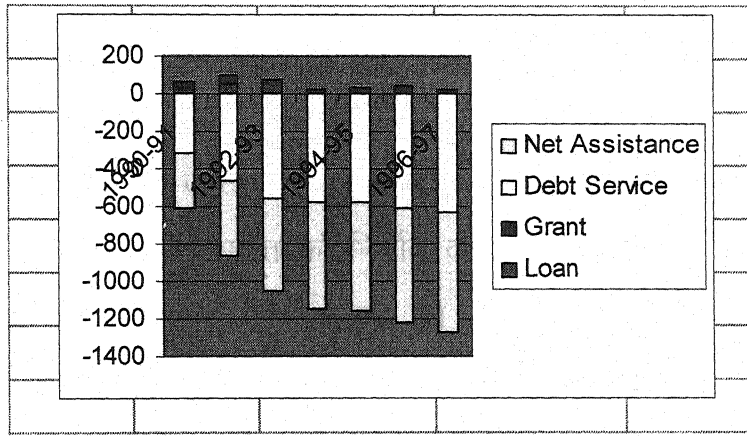
1981 मे भारत द्वारा आई0 उम0 एफ0 से 5.6 मिलियन डालर के ऋण मांगने के अवसर पर अमरीका ने भारत की आवश्यकताओ को सहानुभूति पूर्ण ढंग से स्वीकार नही किया और एशियन डवलपमेंट बैंक से भारत द्वारा की गयी ऋण की प्रार्थना का विरोध किया। 1882 और 1984 में आई0 डी0 ए0 से भारत को प्राप्त होने वाला ऋण को रूकवाने के लिये अमरीका ने अपना अशंदान कम कर दिया और यह तर्क दिया कि भारत की अर्थ व्यवस्था इतनी सुद्ढ हो गई है कि वह रियायती (कन्सेसनल)ऋण लेने के बजाय कठोर ऋण जिसमे अन्तर्राष्ट्रीय बाजार से वाणिज्यिक ऋण शामिल किया जा सकता था, लेने के लिये भारत सक्षम हो गया था। भारत का तर्क था कि उसे घरेलू पूॅजी की कमी को पूरा करने के लिये रियायती

सुपर 301 और स्पेशल 301 धाराओ का भारत –अमरीका सम्बन्धो पर प्रभाव

अमरीका के उपरोक्त व्यापार अधिनियम के अनुसार जो देश अपने यहॉ अमरीकी कम्पनियो एवं व्यापारियो के प्रवेश पर विभिन्न तरीको से रोक लगायेगे उनके विरूद्ध अमरीका

सरकार घाटा सुपर 301 का प्रयोग करेगी तथा जिन देशो के कानून वौद्धिक सम्पदा के अधिकार (इन्अेलेक्चुअल प्रोपर्टी राइट्स)के पर्याप्त संरक्षण की व्यवस्था नही करते उनके विरूद्ध धारा "स्पेशल 301 " का प्रयोग किया जायेगा।

उपरोक्त धाराओ के अर्न्तगत यह प्रावधान रखा गया था कि इन धाराओ के उल्लघंन की छानवीन की जानी चाहिये इन धाराओ के उल्लंघन की छानबीन की जानी चाहिये इन धाराओ का समाधान किया जाना चाहिये और यदि द्विपक्षीय वार्ताओ के परिणाम सन्तोषजनक न निकले तो अपराधी देशो के आयातों पर 100 प्रतिशत तटकर लगाया जाए।

मई 1989 में धारा "सुपर 301 के अर्न्तगत ब्राजील और जापान के साथ साथ भारत को भी एक अन्य फेया टेडी पार्टनर केरूप मे चिन्हहित किया गया। और निगरानी सूची मे रखा गया सूची के अर्न्तगत 12से 18 महीनो मे छानबीन की जानी थी अमेरिका ने भारत पर निम्न प्रकार के आरोप लगाये जो इस प्रकार थे–

1. भारत की आयात निर्यात जटिल है वह आयात पर जो तटकर लगाये जाते वह बहुत अधिक हैं और उनके कारण भारत को निर्यात करना कठिन है।
2. भारत द्वारा आयात की सीमा निश्चित कर दी जाती है। जो कि दूसरे देशो से किये जाने वाले विशेश रूप से अमरीका से होने वाले निर्यात को प्रभावित करती है।
3. भारत अपनी आयात नीति अपने उद्योगो के संरक्षण प्रदान करने के लिऐ बनाता है न कि अपने व्यापार संन्तुलन को बनाये रखने के लिए बनाता हैं ।
4. भारत द्वारा निर्यात सर्व धर्म के लिए विभिन्न प्रकार की सब्सिडी प्रदान की जाती है। जिससे दूसरे देशो से भारत से आयतित वस्तुऐं सस्ती पड़ती है।

1989 मे भारत को स्पेशल 301 के अर्न्तगत निगरानी सूची मे रखा गया अमेरिका का आरोप था कि भारत अमेरिका के बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारो कि रक्षा करने मे असमर्थ रहा है, तथा अमेरिका पेटेन्ट की भी रक्षा न कर पाया । विशेष रूप से अमेरिका द्वारा बनाये गये दवाइयों को बिना औपचारिक उचित अधिकार के भारत मे बनाया जा रहा है इसके अतिरिक्त ये आरोप लगाया कि भारत मे विदेशी टेंडमार्क का प्रयोग भारतीय कानूनो के कारण सम्भव नही है। अमेरिका ने 25 मई 1989 से लेकर 28 अप्रैल 1992 तक धमकियॉ व बॉंह मरोड़ने का दौर जारी रखा। 29 अप्रैल 1992 को राष्ट्रपति बुश ने जिस आदेश पर हस्ताक्षण किये उसमे निम्नलिखित बिन्दु थे –

1. भारत को प्रगतिशील राष्ट्रो की श्रेणी मे सम्मलित किया जाय।

2. भारत को कुछ वस्तुओ पर दी गई रियायतों से बंछित कर दिया जाय और उन वस्तुओ से भारत से आयात किये जाने पर भारी कर लगाया जाय।[16]

3. भारत स्पेशल 301 का विरोध इस आधार पर करता रहा है कि अमेरिका एक बहुपक्षीय मुद्दे पर एक तरफा कार्यवाही करना चाहता है।

बौद्धिक सम्प्रदा अधिकारो अथवा अन्य व्यापारिक विवादो का निपटारा गेट के द्वारा किया जाना चाहिए।[17]

2. राष्ट्रपति क्लिंटन काल मे आर्थिक सम्बन्ध –

अमेरिका ने भारत द्वारा अपनाये गये आर्थिक उदारीकरण के उपायों का स्वागत किया एवं भारत के अनुरोध का समर्थन किया । भारत मे सयुक्त उद्यमी के रूप मे काम कर रही समस्त विदेशी कंम्पनियों में 30 प्रतिशत अमरीकी कम्पनियां है। 1994 के दौरान राज्य वाणिज्य सहयोग के प्रमुख क्षेत्र थे 1993 मे द्विपक्षीय व्यापार 7.3 विलियन अमेरिका डालर का व्यापार अधिशेष भारत के पक्ष मे था।

मई 1994 मे प्रधानमंत्री श्रीराव ने अमेरिका की यात्रा कि तब भारत अमरिका ने दोनो देशो के बीच सम्बन्धो का नया आयाम खोलने के उद्देश्य से आठ वर्षो के अन्तराल के बाद संयुक्त आयोग को पुनः जीवित करने सैनिक एवं असैनिक सेवा स्तर बढ़ाने कां फैसला किया।

भारत ने अपनी आर्थिक नीतियो और अर्थव्यवस्था को उदार बनाने के बारे में अमरीकी प्रशासन को संकेत दिया कि अमरिका को भारत की इस सम्बन्ध मे कुछ बाते अवश्य समझ लेनी चाहिए। भारत अपने द्वारा सभी पूजी निवेश करने वाले देशो के लिए जिनमे अमेरिका भी शामिल हैं खोल देना चाहता हैं ।उन्हे वह सुविधाये भी देने का इच्छुक है । जो अन्य देशो मे पूंजी निवेशक राष्ट्रो को उपलब्ध है। लेकिन आज वह दिन हवा हो गये जब सर टॉम्स जैसे जेम्स प्रथम के दूत जहॉगीर के दरबार मे कोनिक्स बजाकर आते थे और कुछ सुविधाओ की याचना कर सारे देश पर राजनीतिक कब्जा करने कि बात सोचते थे। भारत आर्थिक उन्नति के लिए आधुनिकीकरण के लिए विदेशी पूंजी अवश्य चाहता है। लेकिन पुराने इतिहास कि पुनरावृति कदापि नही। ये बात अमरीका सहित सभी देशो को समझ लेनी चाहिए और उनमे से अधिकांश देश यह समझते भी है ।

17 जनवरी 1995 को भारत व अमेरिका मे व्यापार और वाणिज्य सम्बन्धित अनेक समझौतो पर हस्ताक्षर कियें अमेरिकी वणिज्य मंन्त्री श्री रोनाल्ड एच0 ब्राउन के साथ आये बहुराष्ट्रीय शीर्ष कम्पनियो के व्यापार प्रतिनिधी मण्डल मे भारत के साथ 2.6 अरब डालर के जिन व्यापार समझौतों पर हस्ताक्षर किये उनमे दूरसंचार ,उर्जा ,पेट्रो रसायन तथा स्वास्थ सेवाओ आदि के क्षेत्र शामिल है। इन 2.6 अरब डालर के व्यापार समझौतो को मिलाकर अमेरिका वाणिज्य मंत्री की यात्रा के दौरान सम्पन्न कुल समझौतो की लागत राशि 4 अरब डालर से अधिक आंकी गई अमेरिका व भारतीय कंम्पनियो के बीच सम्पन्न समझौतो मे ए0इ0एस0 एनरान इनसर्च डेपलमेंट कारपोरेशन एक्जिम आयात निर्यात ,बैक,पैट्रो डाइन, सौरास चटर्जी ,समूह हयूजेज नेटवर्क सिस्टम यूनाइटेड इंटरनेशनल होल्डिंग तथा इंट्रीगेटेड हेल्थ सर्विसज की परियोजनाए समलित है। समझौते के तहत ए0ई0एस0 परियोजना के अन्तर्गत उड़ीसा मे 420 मेगावाट का उर्जा संयत्र लगाया गया जिसकी लागत 63.3 करोड़ डालर है। भारत सरकार ने इस योजना को काएंटर गारंटी की सुविधा प्रदान की है। एनरान ने अपने समझौते मे तेल एवं गैस उत्पादन की परियोजना पर 1.1 अरब डालर निवेश का प्रस्ताव रखा। उर्जा क्षेत्र मे तीसरा समझौता कार्पोरेशन के साथ हुआ जिसके अर्न्तगत 300 मेगावाट का उर्जा संयत्र स्थापित किया जिसकी लागत 45 करोड़ डालर आंकी गई। पैटो रसायन के क्षेत्र मे एक्जिम बैक ने दो समझौते किये जिसमे 15 करोड़ डालर का पहला समझौता इण्डियन पैट्रो रसायन उद्योग के लिये आवश्यक उपकरणो के आयात का प्रावधान या एक्जिम बैक ने दूसरा समझौता भारतीय तेल निगम के साथ किया, जिसके अन्तर्गत भारतीय तेल निगम यूनिवर्शल आयात प्रोडक्ट्स कम्पनी से 30 लाख डालर के तेल उत्पादको के आयात की व्यवस्था की गयी इसी प्रकार पैट्रोडाइन ने भी भारतीय तेल निगम और पेट्रो एनर्जी प्रोडक्ट्स इंडिया के साथ समझौते किये ।इन सभी समझौतों पर नई दिल्ली मे एक आयोजित समारोह मे हस्ताक्षर किये गये।

भारत की नई उदार आर्थिक नीति को अमरीकी राष्ट्रपति क्लिंटन ने साहसिक और आकांक्षा पूर्णनीति माना और भारत के साथ अमरीका की पूँजी निवेश वे बड़े व्यापारिक भागीदारी निभाने पर अपना प्रबल सर्मथन जाहिर किया श्रीराव व वित्तमन्त्री मनमोहन सिंह ने ब्राउन को भारत के अर्थिक सुधार कार्यक्रमो के जारी रहने के बारे मे आष्वासन दिया।

3. क्लिंटन काल मे राजनीतिक एवं सामरिक सम्बन्ध –

भारत तथा अमरीका ने 21वी सदी की शुरूआत मे आपसी सम्बन्धो मे एक नया अध्याय जोड़ते हुये दोनो देशो के बीच नियमित रूप से शिखर बैठक में आपसी सम्बन्धो एवं अन्य मुद्दो की समीक्षा करने तथा आंतकवाद से और अधिक कारगर ढंग से मिलकर लड़ने की सहमति व्यक्त की यह बैठक अमरीकी राष्ट्रपति तथा भारत के प्रधानमन्त्री के बीच हुआ करेगी। प्रधानमन्त्री वाजपेयी तथा अमरीकी राष्ट्रपति क्लिंटन ने 21मार्च 2000 को इस आशय एक महत्वपूर्ण दस्तावेज <u>21वी सदी का दृष्टि पत्र</u> पर हस्ताक्षर किये जिसमे दोनो देशो के बीच आपसी संवाद को प्रांसगिक रूप देने के लिये उनके ठोस कदम उठाने पर सहमति व्यक्त की गयी। इस दृष्टिकोण पत्र मे आपसी सम्बन्धो को प्रगाढ़ बनाने के लिये 8 सूत्री कार्यक्रमो की घोषणा की गयी।

<u>आतंकवाद के विरूद्ध भारत की जीत –</u>

प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी के अनुगृह पर अमरीकी राष्ट्रपति ने पाकिस्तानी यात्रा के दौरान कश्मीर घाटी में आंतकवाद का मुद्दा वहॉ के जनरल से उठाने का न सिर्फ वायदा किया, अपितु अपनी पाकिस्तान यात्रा के दौरान उन्होने पाकिस्तान को कड़ी फटकार लगायी। यह निश्चित रूप से भारतीय राजनय की जीत कही जा सकती है। दृष्टिकोण पत्र मे दोनो देशो ने आंतकवाद को रोकने के लिये मिलकर प्रयास करने का भी अपना संकल्प दोहराया।

<u>सी0टी0वी0टी0 का मुद्दा –</u>

बहुचर्चित समग्र परमाणु परीक्षण निषेध सन्धि (CTBT) का भी मुद्दा भी प्रधानमंत्री बाजपेयी व राष्ट्रपति क्लिंटन के बीच उठा । परन्तु श्री वाजपेयी ने वार्ता के दौरान अमरीका से कोई वायदा नही किया। इस मसले पर सैद्धांतिक मतभेदो के बावजूद दोनो राजनेताओ ने सहमति व्यक्त की कि भारत न्यूनतम परमाणु एवं विश्वसनीय परमाणु प्रतिरोधक क्षमता बनाये रखते हुये अमरीका के साथ मिलकर परमाणु अप्रसार के लिये मिलकर प्रयास करता रहेगा।

कश्मीर समस्या पर मध्यस्थता का मसला संसद के केन्द्रीय कक्ष मे अपने सम्मान मे आयोजित समारोह मे श्री क्लिंटन ने यह स्पष्ट किया कि अमरीका , भारत और पाकिस्तान के बीच कश्मीर समस्या सुलझाने के लिये मध्यस्थता नही करना चाहता है। साथ ही उन्होने " कारगिल संकट " जैसी स्थिति आने पर सहयोग देने की तत्परता का भी वायदा किया उन्होने कहा कि वह आश्वस्त है। कि दोनो देश आपस मे मिलकर अपनी समस्याओ का हल

निकाल सकते है। परन्तु बाहरी मदद न लेने की स्थिति मे दोनो देशो को स्वयं इसके लिये वातावरण तैयार करना होगा।

द्विपक्षीय वाणिज्य समझौता –

भारत और अमरीका ने 23 मार्च 2000 को आपसी व्यापार और निवेश को बढ़ावा देने के लिये द्विपक्षीय वाणिज्यिक वार्ता की शुरूआत की भारतीय वाणिज्य मन्त्री मुरासोली मारन और अमरीकी वाणिज्य मन्त्री विलियम डेली के बीच उक्त आशय के लिये हस्ताक्षरित समझौते के अनुसार इस वार्ता के माध्यम से दोनो देशो के बीच व्यापार और निवेश के लिये अनुकूल वातावरण बनाया जा सके श्री मारन के अनुसार भारत अगले पॉच वर्षो मे अमरीका के साथ कम से कम 25 अरब डालर का वार्षिक व्यापार करने का लक्ष्य प्राप्त करने की दिशा मे काम कर रहे है। भारत के कुल निर्यात मे अमरीका 21.7 प्रतिशत हिस्सा रखता है। जबकि देश मे होने वाले कुछ आयात मे अमेरिका से होने वाले आयात का हिस्सा 8.7 है। इस प्रकार भुगतान संतुलन भारत के पक्ष मे है।

कृषि उत्पादों पर समझौता –

भारत और अमरीका के बीच कृषि उत्पादो पर भारत मे आयात शुल्क लगाने पर एक महत्वपूर्ण समझौता हुआ है। जिसके तहत भारत अमरीकी मक्का तथा दूध पाउडर जैसे कुछ कृषि उत्पादो जैसे वादाम या फल के रस पर आयात शुल्क कम करेगा यह समझौता विश्व व्यापार संगठन (WTO) की धारा 28 के तहत किया गया है।

भारत के राज्यो का भ्रमण –

अमरीकी राष्ट्रपति क्लिंटन की यात्रा में उल्लेखनीय है कि इस यात्रा मे उनके साथ उनकी पुत्री चेल्सिया भी शामिल थी। उत्तर प्रदेश के आगरा, जयपुर, (राजस्थान) हैदराबाद, (आन्ध्रप्रदेश) तथा मुम्बई, का भ्रमण भी शामिल था। आगरा के विश्व प्रसिद्ध ताजमहल को देखकर जहॉ क्लिंटन मन्त्रमुग्ध हो गये। वही नायला गांव जयपुर राजस्थान मे पंचायत राज संस्थाओ व ग्रामीण विकास से जुड़े कार्यक्रमो को देखकर अंचभित रह गए। नायला मे धावोलाई दुग्ध सहकारी समिति से जुड़ी महिलाओ को उन्होने कम्प्यूटर पर स्मार्ट कार्ड के जरिये लेन देन करते देखा। सहकारी समिति ने क्लिंटन को अपनी सदस्यता का सूचक "स्मार्ट कार्ड भेंट किया है। जो स्वीकार करते हुये क्लिंटन ने कहा कि वे इस कार्ड को व्हाइट

हाउस मे रखेगे और वह भारत मे नारी विकास का एक प्रतीक के रूप मे सब को नजर आता रहेगा। अमरीकी राष्ट्रपति के अनुसार इण्टरनेट का इस्तेमाल करके भारत दुनिया की सबसे बड़ी अर्थ व्यवस्था के रूप मे उभरेगा। अपनी हैदराबाद यात्रा के दौरान उन्होने ग्रामीण भारत मे इन्टरनेट के प्रसार के लिये 50 लाख डालर की सहायता की घोषणा की क्लिंटन ने हाईटेक सिटी मे कम्प्यूटर इंजीनियरो को भी संबोधित भी किया।

<u>21वी सदी का दृष्टिपत्र</u>–यह एक महत्व पूर्ण दस्तावेज है। इसके प्रमुख बिन्दु निम्न प्रकार है–

1. हम दुनिया के दो सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश है। हमारे राष्ट्र अनेक परम्पराओ और विश्वास के आधार पर निर्मित हुये है और वर्षो के अनुभव ने यह प्रमाणित किया है कि विविधता ही हमारी वास्तविक शक्ति है। अपने उद्भव और अनुभवो में काफी भिन्न होते हुये भी हम दोनो एक समान निष्कर्ष पर पहुचे है कि स्वत्रन्ता और लोकतंत्र ही शान्ति और समृद्धि का मजबूत आधार है और लोकतंत्र ही शान्ति और समृद्धि का मजबूत आधार है और यही सार्वभौमिक अभिलाषा। कि न तो संस्कृति को वाधित किया जाना चाहिये और न आर्थिक विकास को।
2. अतीत मे हमारे रिश्ते बिना किसी परिपक्व दृष्टि से बनते रहे हैं। अब तक हम भविष्य के प्रति एक नई दृष्टि के तहत अपने रिश्तो को उद्देश्यपूर्ण बनाने के लिये तैयार है।
3. भूमण्डलीकरण राष्ट्रो की संकुचित सीमाओं को समाप्त कर राष्ट्रो और जनता , अर्थ व्यवस्था और संसकृतियो के बीच नये रिश्तों का निर्माण कर रहा है। दुनिया के देश लोकतांत्रिक आदर्शो की छाया मे एक दूसरे के निकट आ रहे है। अब दो बड़े लोकतांत्रिक चैम्पियनों को भी निकट आना चाहिये।
4. 21वी शताब्दी मे सम्पूर्ण दुनिया हमारे शान्ति, समृद्धि, लोकतंत्र और स्वतंत्रता के लिये किये गये परस्पर सहयोग पर निर्भर करेगी। यह हमारे लिये अवसर भी प्रदान करती है। परन्तु इसके साथ ही हमें दस जिम्मेदारी का अनुभव भी कराती है कि हमें मिलकर एक साथ काम करना चाहिये।
5. हम एशिया और एशिया से बाहर शान्ति और स्थिरता के लिये कार्य करेगे तथा बढ़ते हुये आंतकवाद पर काबू पाने के लिये प्रभावी ढंग से मिलकर काम करेगे। हम

अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रयासो को मजबूती प्रदान करेगे तथा संयुक्त राष्ट्र के शान्ति प्रयासो को यथा संभव समर्थन देगे।

6. भारत और संयुक्त राज्य अमरीका दोनो परमाणु अस्त्रो को कम करने और यहा तक कि समाप्त करने के पक्षधर है। परन्तु हम दोनो इस समान लक्ष्य को हासिल करने के तरीके पर एक मत नही है। अमरीका चाहता है कि भारत अपने परमाणु अस्त्रो को समाप्त कर दे किन्तु भारत की सोच है कि वह अपनी सुरक्षा को ध्यान मे रखकर अपने साथ न्यूनतम परमाणु अस्त्रो को बनाए रखे।
7. हम दोनो अब किसी भी तरह के परमाणु परीक्षणो के विरूद्ध है। हम दोनो खतरनाक तकनीकी के फैलाव के विरूद्ध है।
8. हम दोनो अपनी जनता के बेहतर जीवन स्तर की आकांक्षा का सम्मान करते है। हम दोनो अपने अनुभवो का लोकतांत्रिक संस्थानो की रक्षा और आंतकवाद से मुकाबले कि लिये इस्तेमाल के पक्षधर है।
9. अमरीका भारत की अर्थव्यवस्था की उदारीकरण विज्ञान व प्रौघोगिकी मे उनकी सहायता और आर्थिक विस्तार के प्रयासो की सराहना करता है। और अपनी यह दृढ़ इच्छा जाहिर करता है कि भारत की सम्पूर्ण जनता तक इन आर्थिक सुधारो का लाभ पहुचे।
10. हम दोनो विश्व अर्थव्यवस्था के विकास को संरक्षित करने के लिये मिलकर काम करेगे और गरीबी के विरूद्ध भी मिल जुलकर कार्य करेगे हमारी कोशिश यह होगी कि नई अर्थव्यवस्था मे कोई भी देश पीछे न छूटे।
11. पर्यावारण सम्बन्धी नई चुनौतियो का सामना भी हम दोनो मिलकर करेगे।
12. कुछ ऐसी बीमारियॉ जो न केवल लोगो का जीवन हरण करती है। बल्कि अनेक देशो के विकास की गति को धीमा करती है के विरूद्ध भी हम संयुक्त लड़ाई लड़ेगे।
13. औद्यौगिक व्यापार और सांस्कृतिक क्षेत्रो मे भारत और अमरीका पहुचाने की हम कोशिश करेगे।
14. दोनो देश अपने सम्बन्धो को संस्थावद्ध रूप देने पर सहमत हुये इसमे उच्चस्तरीय राजनयिक वार्ताओ के साथ–साथ दोनो देशो के शीर्ष नेतत्व के बीच निरन्तर बातचीत शामिल है।

15. वर्ष 2000 के अन्त तक भारत के प्रधान मन्त्री अमरीकी राष्ट्रपति के निमन्त्रण पर वहाँ जायेगे।

स्ट्रोव टॉलवोट व जसवंत सिंह की पहली शिखर वार्ता –

14 जून 1998 यह पहली वार्ता भारत और अमरीका के बीच 14 जून 1998 को वाशिगंटन मे सम्पन्न हुई। भारत के योजना आयोग के उपाध्यक्ष व प्रधानमंत्री के विशेष दूत जसवन्त सिंह व स्टोब टॉलवोट के बीच हुई इस वार्ता का उद्देश्य भारत पर लगाये गये आर्थिक प्रतिबन्धों को हटवाना मुख्य उद्देश्य रहा है। भारत – अमरीका के बीच होने वाली शिखर वार्ताओ की कोई समय सीमा नही रखी गयी है। यह वार्ता पूर्णरूप से गोपनीय एवं रचनात्मक रखी गई । इसमे वाणिज्य सम्बन्धी आपसी मतभेदो को दूर करने का भी उद्देश्य रखा गया था। इस वार्ता मे निम्न बिन्दुओं पर बातचीत हुई है–

1. भारत पर लगाये गये आर्थिक प्रतिबन्धो के बारे में अवगत कराया गया।
2. परमाणु परीक्षणों के हालातों से अमरीका को अवगत कराना।
3. अमरीका भारत के रूख मे आपसी समझदारी को बढ़ाना।
4. अमरीका भारत के बीच तनाव को कम करना।
5. अमरीका भारतीय दृष्टिकोणों को स्पष्ट करना।
6. परमाणु परीक्षण के बाद पहली बार दोनो ही राष्ट्रो के बीच विचारो का आदान–प्रदान करना।
7. वार्ता लगभग 2.30 घण्टे चली जिसमे दोनो ही संन्तुष्ट पाये गये।

इस वार्ता मे अमरीका के विदेश मन्त्री मैडलिन अलब्राइट ने कहा कि भारत पाक के बीच गलत सूचनाओं और गलत आकलन की वजह से दक्षिण एशिया मे विनाश का खतरा बढ़ा है।" इस पर जसवन्त सिंह ने कहा " भारत के परमाणु हथियारो का निर्माण. तैनाती के लिये नही बल्कि सुरक्षा सुनिश्चित करने और भय का निराकरण करने के लिये किया है।"[23] भारत ने अनेक अवसरो पर कहा कि दक्षिण एशिया की सुरक्षा के मामलो में बाहरी ताकतो के हस्तक्षेप की जरूरत नही होनी चाहिये पाक – भारत वैसे भी अपनी – अपनी सुरक्षा करने मे समर्थ हैं दोनो ही राष्ट्रो का जन्म एक साथ हुआ है।दोनो ही सम्प्रभुता सम्पन्न है। इनकी चिन्ता अमरीका को नही करनी चाहिये थी । भारत के जसवन्त सिंह ने अपना स्पश्टीकरण

देते हुये कहा "भारत ने किसी को चुनौती नही दी है। न ही किसी को निशाना बनाकर परमाणु परीक्षण किये है। यह भारत की आत्म रक्षा के लिये है।"

स्ट्रोव टॉलबोट व जसवन्त सिंह द्वितीय वार्ता 9–10 जुलाई 1998

यह वार्ता दोनो के बीच फ्रेंचफर्ट (जर्मनी) मे द्वितीय स्तर की आयोजित हुई थी और 9–10 जुलाई 1998 तक सम्पन्न हुई। इस वार्ता की कार्यवाही को गोपनीय रखा गया। फिर भी यह वार्ता रचनात्मक एवं सकारात्मक ही रही थी।इस वार्ता के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार थे:–

1.भारत अमरीका सम्बन्धो को सुधारना

2.भारत चीन द्वारा पाक को परमाणु प्रौद्योगिकी के गुप्त हस्तान्तरण की जानकारी अमरीका को देना चाहते थे।

3. चीन–पाक परमाणु सहयोग की वजह से भारतीय खतरो से अमरीका को अवगत कराना

4. वार्ता के मुद्दो को गोपनीय रखा गया था।

यह वार्ता आयोजित तो हुई लेकिन इसका कोई ठोस परिणाम नही निकला इस वार्ता पर जर्मन विश्लेशकों की राय रही कि भारत द्वारा किये परमाणु परीक्षण के कारण लगे प्रतिवन्धो से क्षति सामने आने लगी है। इस कारण भारत के रक्षा विशेषज्ञ जसवन्त सिंह का कहना था कि भारत C.T.B.T. पर वार्ता के लिये तैयार है। वसर्ते उसे परमाणु सम्पन्न राष्ट्र की श्रेणी मे रखा जाय भारत पर लगाये गये परमाणु सम्पन्न राष्ट्र की श्रेणी मे रखा जाय। भारत पर लगाये गये प्रतिबन्धो को अमरीका द्वारा वापस लिया जाये। इस वार्ता मे जसवन्त सिंह ने स्टोव टॉलवोट को अवगत कराया कि भारत की बाजपेयी सरकार के लिये C.T.B.T. पर हस्ताक्षर करने की बात पर भारतीय जनता की सहमति का माहौल उत्पन्न करना होगा। फिर यह वार्ता अगली वार्ताओ के कम में एक कड़ी के रूप मे होगी।

स्टोव टॉलवोट व जसवन्त सिंह, तृतीय वार्ता, 21–22जुलाई 98

इस तृतीय स्तर की वार्ता का आयोजन भारत की राजधानी नई दिल्ली मे सम्पन्न हुआ जो कि 21–22 जुलाई को दो दिवसीय वार्ता हुई थी। भारतीय परमाणु परीक्षण के बाद टॉलवोट पहली बार भारत आये। यह वार्ता 90 मिनट तक चली भारत अमरीका के बीच कूटिनीतिक वार्ताए आयोजित होने से एक दूसरे के बीच आपसी मुद्दो पर व्यापक चर्चा हुई इस वार्ता के मुद्दे इस प्रकार रहे है:–

1. परमाणु निशस्त्रीकरण

2- परमाणु अप्रसार

3- सी0टी0वी0टी0 सन्धि

4- आर्थिक प्रतिबन्ध

5- भारत पाक के बीच तनाव कम करना।

6- भारत को N.P.T. सन्धि पर हस्ताक्षर के लिये सहमत करना इन बिन्दुओ पर बातचीत के दौरान अमरीका त्रिस्तरीय वार्ता (अमरीका–भारत – पाक) कराने का प्रयास कर रहा था जिसे भारत ने अस्वीकृत किया। अमरीका यह भी चाहता है कि भारत पाक के बीच शीघ्र वार्ता शुरू हो । जुलाई 1998 मे कोलम्बो मे आयोजित सार्क शिखर सम्मेलन मे विदेश सचिव स्तर की वार्ता शुरू होनी चाहिये । इस वार्ता से पूर्व दो वार्ता अमरीका भारत के बीच सम्पन्न हो चुकी थी।

इस तृतीय वार्ता में एक दूसरे पक्षो को बेहतर ढंग से समझा जा सकता है। इस वार्ता के अच्छे परिणामो की आशा भी की गयी थी । यह वार्ता सकारात्मक ही रही। इस वार्ता के सम्बन्ध मे विदेश मन्त्रालय ने एक विज्ञप्ति मे कहा कि साझा हितो के मुद्दे तलासने व दोनो के विचारो मे व्याप्त अन्तर को दूर करने की भावना इस वार्ता मे पाई गई थी। इस वार्ता मे दोनो के विदेश सचिवो, सेना प्रमुखो के बीच 45 मिनट तक वार्ता हुई थी। जिसमें कहा गया था:–

1. भारत सुरक्षा हितो पर कोई समझौता नही करेगा।
2. भारत परमाणु कार्यक्रम से पीछे नही हटेगा।

स्ट्रोव टॉलवोट इस वार्ता के बाद इस्लामाबाद की यात्रा पर गये इस कारण से वार्ता का महत्व और भी बढ़ जाता है। कोलम्बो मे नवाज शरीफ वाजपेयी वार्ता का प्रस्ताव का प्रस्ताव भी रखा गया था।

<u>चतुर्थ मनीला वार्ता, जुलाई 1998 –</u>

26 जुलाई 1998 को मनीला मे ''एशियाई क्षेत्रीय फोरम''(ए0 आर0 एफ0)की बैठक आयोजित हुई इस बैठक मे फिलीपीन्स के विदेश मन्त्री 'डोमिगो साइजोन
इसके अध्यक्ष रहे। इस फोरम मे 9 सदस्य थे इसकी बैठक मे जसवन्त सिंह को भेजे जाने के दो प्रमुख कारण थे:–

1.भारत को विदेश राज्य मन्त्री बसुन्धरा राजे कोलम्बों मे होने वाले (29–31जुलाई 1998)सार्क सम्मेलन मे व्यस्त होगी।

2. फिलीपीन्स , विनतनाम , सिंगापुर तीनो मिलकर मनीला बैठक मे भारत के परमाणु परीक्षण की निन्दा करने पर अड़े हुये थे। भारत इसे अध्यक्षीय भाषण के अंश से हटाना चाहता है। उससे एशियन तथा एशिया की सुरक्षा को खतरा बढ़ा है। भारत की निन्दा करने से रोकना ही मूल उद्देश्य रहा था।

3. जसवन्त सिंह विदेश मंत्रालय से जुड़े हुये नही है। यह प्रधान मन्त्री के विशेश दूत के रूप मे कार्य कर रहे है।

4. विदेश राज्य मन्त्री बसुन्धरा राजे फिलीपीन्स , वियतनाम, सिंगापुर की यात्रा करके भारतीय दृष्टिकोण से अवगत करा चुकी है।

स्टोव टॉलवोट व जसवन्त सिंह चतुर्थ वार्ता, (13 अगस्त 1998)–

यह वार्ता वासिंगटन मे 13 अगस्त को आयोजित हुई। इस सन्दर्भ में यह उम्मीद की गई थी कि यह श्री वाजपेयी के बयानो को आगे बढ़ाने मे सहायक होगी। इस वार्ता मे निम्न मुद्दो पर चर्चा की गयी–

1. विल क्लिंटन की प्रस्तावित भारत यात्रा।
2. N.P.T. व C.T.B.T. पर हस्ताक्षर करने सम्बन्धी।
3. निशस्त्रीकरण करने सम्बन्धी।
4. वार्ता के गतिरोध समाप्त करने के लिये ठोस प्रस्ताव नही रखा गया तो क्लिंटन की प्रस्तावित यात्रा रद्द हो सकती है।[24]

जसवन्त सिंह और टॉलवोट शिखर वार्ता, (पंचम 22 सितम्बर 1998)–

यह पॉचवे दौर की शिखर वार्ता इन दोनो के बीच मे 22 सितम्बर 1998 को वाशिंगटन मे आयोजित हुई। यह न्यूयार्क के कैनेडी हवाई अड्डे पर आयोजित हुई। यह औपचारिक वार्ता को इस कारण इस वार्ता को कार्य सूची मे प्रकाशित नही की गयी थी। फिर भी वार्ता के बिन्दु इस प्रकार थे–

1. निशस्त्रीकरण

2. परमाणु अप्रसार

3. पोखरण परीक्षण

4. अमरीकी आर्थिक प्रतिबन्ध

यह आर्थिक प्रतिबन्ध अमरीका ने भारत पर 13 मई को परमाणु अप्रसार अधिनियम 1994 के अन्तर्गत लगाये है।

5. भारत C.T.B.T. पर विना शर्त हस्ताक्षर करें।

यद्यपि भारत के जसवन्त सिंह इन शिकर वार्ताओं के माध्यम से भारतीय पक्ष को अमरीका के सामनें ही रखते रहे।[25]

फिर भी आशा जनक परिणाम नही आये भारत के अपने सम्बन्धो मे प्रगति नही हो सकी। जसवन्त सिंह ने इस वार्ता मे निम्न लिखित स्पष्टीकरण रखाः–

1. N.P.T. सन्धि दोषपूर्ण है। भारत इसे अन्तराष्ट्रीय नियमों के रूप मे स्वीकार नही करेगा।
2. जब तक परमाणु सम्पन्न राष्ट्र परमाणु प्रसार कार्यक्रमो के लिये सहायता उपलब्ध कराना बन्द नही कर देते तब तक N.P.T. निरर्थक है।
3. भारत ने सम्पूर्ण विश्व के लिये एक समान सुरक्षा मापदण्ड निर्धारित करने का आग्रह किया चीन,पाक के लिये N.P.T. का खुला उल्लघंन है।
4. भारत द्वारा किये गये मई 1998 के परमाणु परीक्षण किसी अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि या समझौते का उल्लघंन नही है।
5. चीन परमाणु हथियारो का विस्तार कर रहा है। क्लिंटन प्रशासन यह साबित करने मे लगा हुआ है कि अमरीका चीन को रोकने मे असमर्थ रहा है।
6. पाक भी N.P.T. व CTBT सन्धि पा हस्ताक्षर करने से मना कर रहा है। दोनो ही राष्ट्रो पर अर्थिक प्रतिबन्ध लगे हुये है।

इस तरह अब तक की वार्ताओ से यह सिद्ध होता है। कि जसवन्त सिंह आर्थिक प्रतिबन्धो का हटवाने के लिये प्रयासरत रहे है। यह वार्ता अनिर्णीत एवं सकारात्मक रही। अमरीका ने वाजपेयी सरकार की परमाणु नीति का स्वागत किया है। इस वार्ता का उद्‌देश्य क्लिंटन की भारत यात्रा का माहौल उत्पन्न करना ही रहा था। इस वार्ता मे प्रगति न होने के कारण क्लिंटन की भारत यात्रा रद्‌द कर दी गयी।

स्टोव टॉलवोट और जसवन्त सिंह शष्ठ वार्ता (9–10 नवम्वर 1998) –

भारत की राजधानी नई दिल्ली में 9–10 नवम्वर 1998 को भारत अमरीका के बीच विभिन्न मुद्दो पर बात चीत हुई इस वार्ता का नेतत्व भारत के संयुक्त सचिव आलोक प्रसाद एवं अमरीका के जान वार्कर ने किया। भारत अमरीका के बीच यह पहल अवसर था जब मई 1998 मे भारत ने परमाणु परीक्षण किया तो इसके विरूद्ध अमरीका ने भारत के विरूद्ध आर्थिक प्रतिबन्ध लगाये थे।

इस वार्ता से पूर्व अमरीका ने इन प्रतिबन्धो में छूट देने की भी घोषणा की थी। इस वार्ता मे निम्न लिखित विषय रखे गये थे।

1. आर्थिक प्रतिबन्धो को हटाना
2. निर्यात नियन्त्रण
3. वाणिज्य
4. सीमा शुल्क
5. ऊर्जा
6. रक्षा एवं विदेश
7. परमाणु मुद्दा

इस वार्ता मे अमरीका ने कहा कि भारत परमाणु बम बनाने के काम आने वाले विखडंनीय पदार्थ का उत्पादन बन्द करे। जबकि भारतीय प्रधानमन्त्री ने परमाणु नीति की स्पष्ट घोषणा की है। जिसमे कहा गया है। कि भारत किसी भी राष्ट्र पर इसका प्रयोग करने की पहल नही करेगा और न ही इसका प्रहार करेगा। भारत ने यह भी स्वीकार किया कि वह आगे परमाणु परीक्षण नही करेगा। भारत ने इस वार्ता में स्पष्ट किया है। कि वह C.T.B.T. सन्धि पर हस्ताक्षर नही करेगा। यह सन्धि भेदभाव पूर्ण सन्धि है।अमरीका भारत पाक के प्रति भी भेदभाव पूर्ण नीति अपनाता है। इस सम्बन्ध मे हम कह सकते है कि एक तरफ अमरीका आर्थिक प्रति बन्धो ढील देने की घोषणा की गई तो दूसरी तरफ उसने भारतीय कंपनियो और संस्थाओ की काली सूची मे 200 की संख्या दर्शाई गई। जिन पर व्यापार मे छूट नही दी गई जबकि पाक की 100 कंपनियो को छूट दी गयी इससे आर्थिक प्रति बन्धो की छूट की घोषणा कोई महत्व नही रखती है। जबकि अमरीका ने अर्थिक प्रतिबन्ध लगाते समय पाक को एक कुदृष्टि से देखा गया। फिर प्रतिबन्ध हटाते हुये भेदभाव क्यो रखा गया? इससे साफ जाहिर है

कि अमरीका की मंशा भारत के प्रति ठीक नही है। फिर भी इस बातचीत का मुख्य उद्देश्य रोम मे होने वाली जसवन्त सिंह व स्टोव टालवोट की वार्ता का आधार तैयार करना ही रहा था अब अमरीका भी भारत के साथ सम्बन्धो का सुधारने का इच्छुक है।

जसवन्त सिंह व स्टोव टालवोट वार्ता –सप्तम नवम्वर 1998

इन दोनो के बीच नम्वर 1998 मे सातवे दौर की वार्ता का आयोजन रोम मे हुआ। यद्यपि इस वार्ता की समस्त कार्यवाही को गोपनीय रखा गया था इस वार्ता का उद्देश्य अमरीका के लिये यह रहा है। कि वह भारत पाक दोनो को ही N.P.T. वा CTBT सन्धि मे शामिल करना चाहता है। इसलिये अमरीका निम्न 4 उद्देश्यो की पूर्ति करना चाहता है–

1. भारत CTBT हस्ताक्षर करे।
2. भारत परमाणु अस्त्रो के काम आने वाले विस्फोटक पदार्थ का निर्माण बन्द करे।
3. भारत प्रक्षेपास्त्रो के निर्माण मे संयम रखे।
4. भारत पाक मिलकर आपसी तनाव कम करे।

इस रोम वार्ता के आधार पर यह विश्लेषण किया गया कि अमरीका अब दक्षिणी एशिया मे विशेष रूचि लेना चाहता है। भारत एक क्षेत्रीय शक्ति के रूप मे उभर चुका है। उसे अमरीका नकार नही सकता है। स्टोव टालॅवोट ने यह स्पष्ट किया कि अमरीका भारत पाक को परमाणु शक्ति के रूप मे स्वीकार नही करेगा। यह दोनो ही राष्ट्र जब तक N.P.T. सन्धि की सुविधाओं से भी वांचित रहेगे। इससे इसका यही अर्थ लगाया जाता है कि उच्च श्रेणी की तकनीकी का आयात नही किया जा सकता है। इस वार्ता के अर्न्तगत अमरीका ने भारत के आर्थिक प्रतिबन्धो को आंशिक रूप से हटाये जाने की घोषणा की इससे अमरीका का रवैया यथावत ही माना जा सकता है।

स्टोव टालॅवोटव जसवन्त सिंह आठवी वार्ता (29–31 जनवरी 1999)–

यह वार्ता 29 – 31 जनवरी 1999 तक भारत की राजधानी नई दिल्ली मे आयोजित हुई वार्ता की विशेषता यह रही कि उसमे जसवन्त सिंह भारतीय विदेश मन्त्री के रूप मे शामिल हुये। इन्होने ही भारतीय प्रतिनिधि मण्डल का नेत्त्व किया। इस वार्ता मे विदेश मन्त्री जसवन्त सिंह के साथ विदेश सचिव आलोक प्रसाद संयुक्त सचिव अमरीका राकेश सूद संयुक्त सचिव निःशस्त्रीकरण, नरेश चन्द्रा अमरीका मे भारत के राजदूत आदि ने हिस्सा लिया। अमरीका की ओर से स्टोव टालॅवोट उप विदेश मन्त्री , कार्लइंडर फर्थ विदेश मन्त्री केरन

मैथ्यिसन मध्य पूर्व दक्षिण राष्टो के मामलो के निर्देशक मेथ्यू पी0 डाले दक्षिण एशियाई मामलो के विशेष सलाहकार , रिचर्ड सेलेस्टे भारत के अमरीका राजदूत आदि ने वार्ता में हिस्सा लिया।

इस वार्ता के पूर्व जारी एक वयान मे अमरीका के कार्ल इंडरर फर्थ ने कहा कि "हमें भारत और पाक की सुरक्षा चिन्ताओ को ध्यान मे रखते हुये इस प्रकार कदम उठाना चाहिये कि वे अन्तर्राष्ट्रीय अप्रसार सन्धि के दायरे मे आ सके।"

इन्होने वार्ता के सम्बन्ध मे कहा कि हमारी वार्ता की गति धीमी चलेगी, लेकिन हमें उम्मीद है कि भविष्य मे इस आत चीत मे और प्रगति होगी। अगर वार्ता मे सफलता नही भी मिलती है। तो ठण्डे वस्ते मे इसे नही डाला जाना चाहिये। हमें आशा है कि पिछले वर्ष की तुलना मे अधिक प्रगति होगी"

इन्होने आगे कहा " हमारी वार्ता का कार्यक्रम परमाणु अप्रसार से कहीं अधिक सम्बन्ध सामान्य बनाना है।" इसी तरह सीनेट के विदेश समिति के अध्यक्ष जेस हेल्टस ने बताया कि भारत ने C.T.B.T. पर हस्ताक्षर नही किये इस कारण यह सितम्बर 1999 से लागू नही होगी। अभी तक सीनेट ने इसका अनुमोदन नही किया है। जबकि अमरीका प्रशासन इसके अनुमोदन की मांग करता रहा है।"

नई दिल्ली के वार्ता के उद्देश्य –

1. भारत अमरीका के सम्बन्धो व सामान्य बनाना।
2. अमरीका चाहता है कि भारत बिना शर्त C.T.B.T व N.P.T. सन्धि पर हस्ताक्षर करें।
3. भारत विस्फोट पदार्थ पर प्रतिबन्ध लगाये।
4. भारत मिसाइलो पर संयम रखे।
5. भारत द्वारा विश्व बैंक से ऋण बहाल किये जाने पर जोर दिया गया।

वार्ता के उद्देश्य –

1. व्यापक परमाणु परीक्षण सन्धि सम्बन्धी।
2. विखंडनीय पदार्थ नियन्त्रण सन्धि सम्बन्धी।
3. निर्यात सम्बन्धी मामले पर।
4. रक्षा सम्बनधी मामले पर ।

वार्ता की संयुक्त विज्ञप्ति –

इस आठवें दौर वे वार्ता मे कोई निर्णय नही किया जा सका नवे दौर की वार्ता का आयोजन करना तय किया गया। इससे हर वार्ता मे मतभेदो के प्रति आम सहमत नही बन पा रही है। 29–31 जनवरी 1999 तक यह वार्ता आयोजित हुई फिर भी दोनो पक्षो ने सहयोग प्रकट किया। इस वार्ता मे विचार 7 विमर्श के अनेक मुद्दो पर अधिकारी स्तर की वार्ता करने के लिये एक कार्य योजना तैयार की गयी जिसके तहत निर्यात नियन्त्रण के मामले मार्च 1999 मे दोनो ही पक्ष पुनः वार्ता करेगे जिसके बारे मे यद्यपि कोई कार्यक्रम निर्धारित नही हुआ। इस वार्ता मे सुरक्षा समबन्धी मामलो को अच्छी तरह से समझने का प्रयास किया गया।
भारत द्वारा जेनेवा मे आयोजित होने वाले निःशस्त्रीकरण सम्मेलन मे शामिल होने की सहमति प्रकट की गयी यह वार्ता भी सम्पर्क करने का ही प्रतीक रही हैं वार्ताओ को आगे बढ़ाये जाने मे समय अधिक लगाया जा रहा है। फिर भी हम यह कह सकते है कि इन वार्ताओ के भावी परिणाम अच्छे ही होगे।[27]

5. जार्ज वाकर बुश काल मे अमरीका – भारत सम्बन्ध –

जनवरी 2001 में राष्ट्रपति जार्ज डब्ल्यू वुश अमरीका के राष्ट्रपति बने। इनके समय में आक्रामक विदेश नीति अपनाने के संकेत मिलने लगे। जार्ज वुश के कार्यकाल में निम्न घटनाओं व परिस्थितियों को भारत – अमरीकी सम्बन्धों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव की दृष्टि से उपेक्षित नही किया जा सकता क्योंकि वुश प्रशासन पूरी दुनिया पर अपनी राजनीतिक और आर्थिक नीतियां थोपने पर आमादा है। अमरीका के लिये नई विश्व व्यवस्था का मतलव गैर अमरीकी दुनिया को अमरीकी माल का बाजार अर्थात आर्थिक उपनिवेश बनाना है। सोवियत संघ के विघटन उसके साथ शीत युद्व की समाप्ति और इराक पर विजय के बाद वुश तथा क्लिटन प्रशासन की महत्वाकांक्षाए , अमरीका को पुरे विश्व का ठेकेदार ,चौधरी अथवा काजी और मानवाधिकारों का स्वयं भूरक्षक बनने के लिए उकसाने लगी। यूगों स्लाविया के सम्बन्ध में अमरीका ने जिस तरह नाटों को झोंक दिया यह अमरीकी उन्मादवादी , विस्तारवादी नीति का ताजा उदाहरण है। अमरीका मे अब यह सोच उभर रही है कि शीतयुद्व के बाद विश्व में व्यापार युद्व छिड़ने की जो सम्भावनाएँ बन रहीं हैं। उनमें अमरीका के लिए जरूरी है

कि वह एशिया प्रशान्त क्षेत्र में एक प्रथक आर्थिक ढाचा खड़ा करके सुरक्षा के साथ समृद्धि और स्थायित्व बनाये रखने की व्यवस्था करे। एशिया में आर्थिक विकास का जैसा विस्फोट हो रहा है। उससे अमरीका को चिन्ता है कि 21वी सदी में विश्व पर एशिया के दो देशों जापान और चीन अपना–अपना प्रभाव विस्तार कर सकते हैं।

अमरीका पॉलिसी का दूसरा अहम पहलू यह है कि दक्षिण एशिया मे आणविक हथियारो के माहौल को जल्द से जल्द अपने नियन्त्रण मे कर लेना चाहता है और अपने लिये इस्तेमाल करने की जल्दी मे है। तीसरे उसे राजनीतिक ढॉचे को अपने मुताबिक ढालना है। ताकि उस क्षेत्र के देशो के बीच आर्थिक आदान प्रदान होता रहे और अमरीका जैसा चाहे उनका इस्तेमाल कर सके। असल मे अमरीका बहुत आगे की सोच रहा है। वह इन तमाम प्राकृतिक संसाधनो और ऊर्जा के साधनों को अपने नियंत्रण में लेना चाहता है। चौथी कोशिश सुरक्षा इंतजामो को लेकर है। वह इलाके का भू–सामरिक नक्शा बदल देना चाहता है। इराक मे सद्दाम के जाने से पहले अमरीका सुरक्षा के मामले मे चार देशो को खास मानता था ये देश उसके लिये कुछ भी करने को तैयार थे तुर्की , इजरायल, सऊदी अरब और पकिस्तान ये चार देश थे , जहां अमरीकी सुरक्षा एजेंसिया अपने हिसाब से काम कर सकती थी। यही से अमरीका पश्चिम एशिया और खाड़ी के देशो की सुरक्षा पर नजर रख सकता था या रख रहा था।

यही बजह है कि अमरीका ने सैनिक तैनाती को लेकर ज्यादातर दक्षिण और दक्षिण पूर्व एशिया के देशो के साथ करार किया हुआ है। उन देशो मे बंगलादेश भी शामिल है। आने वाले समय मे नेपाल के साथ भी इस तरह की व्यवस्था हो सकती है। हालाकि इस क्षेत्र के देशो मे भीतर ही भीतर अमरीका को लेकर सन्देह का माहौल है। अन्दर ही अन्दर वे उसकी आलोचना भी करते है। लेकिन चुपचाप अमरीकी दाल को मान लेते है। उसे मानने के अलावा कोई चारा भी उनके पास नही है। जापान तो उसका सहयोगी है। रूस और चीन मे अमरीका को लेकर कुछ हिचक है। लेकिन वे भी धीरे धीरे सच्चाई को गले उतार रहे है। भारतीयों की समझ और सन्देह भी कुछ –कुछ रूस और चीन की तरह ही है। हालाकिं अपने आम लोगो की सोच अमरीका के मामले मे ज्यादा साफ है। भारत को अमरीका सम्बन्धो को लेकर अधिक उत्साह दिखाने की आवश्यकता नही है। हमें इस बात को दृष्टि रखना है। कि अमरीका चीन के विरूद्ध हमारा प्रयोग तो नही करना चाहता है।

भारत अमरीकी नागरिक परमाणु समझौता –

इसी आधार पर भारतीय प्रधानमन्त्री की अमरीका यात्रा के दौरान 18 जुलाई 2005 को डा0 मनमोहन सिंह अमरीकी राष्ट्रपति के बीच एक परमाणु समझौता हुआ जिसमे भारत द्वारा अपने असैन्य और सैन्य परमाणु सुविधाओ को अलग करने और असैन्य सुविधाओ को अन्तराष्ट्रीय निगरानी मे रखे जाने की बुनियाद पर नाभकीय साजो समान और ईधन की अपूर्ति का मार्ग प्रशस्त हो जायेगा।

लम्बे अर्से तक उभय पक्षो मे विमर्श जारी रहा। अमरीका चाहता था कि भारत अपने फास्ट ब्रीडर रिएक्टरो को भी नागरिक सूची मेडाले लेकिन भारत इस पर राजी नही हुआ। अन्ततः अमरीका को भारतीय पक्ष को स्वीकारना पड़ा । इसी तरह अमरीकी मंशा भाभापरमाणु अनुंसधान संस्थान (BARC) को असैनिक सुची मे डालने और उसकी निगरानी की थी लेकिन भारत इस पर राजी नही हुआ क्योकि मूलभूत नाभिकीय अनुसंधान तो यही पर होते है। और उसे निगरानी के दायरे मे लाने से अनुसंधान कार्यो की सारी गोपनीयता भंग हो जाती है। कई दौर की वार्ताओ के बाद इस समझौते पर मुहर तब लगी जब अमरीकी राष्ट्रपति ने भारत का दौरा किया और उभय पक्षों ने कुछ बिन्दुओ पर आम सहमति बनायी।

समझौते के महत्वपूर्ण बिन्दु–

यह समझना भारी भूल है कि भारत और अमरीका के बीच कोई नागरिक परमाणु समझौता हुआ है।,वस्तुतः यह अभी मात्र एक आम सहमति है। इसे लागू करने के लिये भारत ने अमरीका की इस शर्त को स्वीकार कर लिया है। [28]

कि भारत अपने सैनिक और असैनिक परमाणु प्रतिश्ठानों की पहचान करके बताये और इसी आधार पर अमरीका अपने यहॉ कांग्रेस के सदस्यो को आश्वस्त कर सकेगा कि अमरीका–भारत के असैन्य परमाणु कार्यक्रम से सहयोग करना चाहता है न कि परमाणु प्रसार को प्रोत्साहन देना चाहता है। और भारत को नाभकीय शक्ति के रूप मे चीन के मुकाबले खड़ा करना चाहता है।अमरीकी जन मानस और सीनेटरो की मुख्य आपत्ति भारत पर से परमाणु सहयोग की वंदिशें हटाई जा रही है। लेकिन यह मुद्दा काफी पहले तय हो चुका था। 1 मार्च 2006 को भारत यात्रा पर आये राष्टपति बुश ने कहा कि यह समझौता हमारे हित मे है। परमाणु अस्त्रो से लैंस देश होने के बाबजूद और N.P.T. पर बिना हस्ताक्षर बिना किये

भारत को परमाणु क्लब मे शामिल किये जाने के मुद्दे पर सिद्धान्ततः 18 जुलाई 2005 को ही वासिंगटन मे सहमति बन चुकी थी , अतः अब पीछे जाने का कोई अर्थ नही है।

दोनो देशो की वार्ता मे भारत ने अपने असैन्य और सैन्य परमाणु प्रतिशठानो की जो सूची दी, अमरीका ने उसे मान्यता प्रदान की।

भारत ने स्पष्ट किया कि निकट भविष्य मे भारत जो भी परमाणु केन्द्र स्थापित करेगा। उसे असैनिक या सैनिक सूची मे डालने का उसे सार्वभौमिक अधिकार होगा।

उक्त समझौते मे भारत ने इतना ही स्वीकार किया है कि परमाणु ऊर्जा के बदले भारत 2014 तक विभिन्न चरणो मे अपने परमाणु केन्द्रो के 65प्रतिशत हिस्से असैन्य परमाणु प्रतिशठानो की सूची मे डाल देगा जिन पर अन्तर्राश्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी की निगरानी होगी। लेकिन भारत ने यह भी शर्त रखी है। कि एक बार निगरानी मे आ जाने के बाद इन पर निगरानी हमेशा के लिये नही हो जायेगी।

भारत ने अपने परमाणु केन्द्रो मे 65प्रतिशत हिस्से को अन्तर्राष्ट्रीय निगरानी मे सौपने की जो बात कही है। उसका सीधा सा तात्पर्य यह है कि भारत अपने 22 रियक्टरो मेसे 14 रियक्टरो को ही निगरानी मे डालने पर सहमत हुआ है।[29]

भारत ने अपने परमाणु रिएक्टरो की स्थायी निगरानी की बात नही स्वीकार की है। भारत मे जो 15 थर्मल रिएक्टर कार्यरत है। उनमे से 6 पहले से ही अन्तर्राशटीय निगरानी मे है। इनमे तारापुर की दो इकाइयॉ (TAPS 1 AND 2)जो हल्के पानी वाले रिएक्टर है। और भारी पानी संचालित रावटभाटा के दो रिएक्टर (RAPS 1 AND 2)और (K.K. 1 AND 2)संयत्र सम्मलित है। शेश 11 रिएक्टर अन्तर्राशटीय निगरानी के दायरे मे नही है। जो इस प्रकार है।–

1. नरौरा के दोनो संयत्र (NAPS 1 AND 2:2x220 MW.)
2. कलपक्कम के दो संयंत्र (MAPS- 1 AND 2:2x220 MW.)
3. कलरापारा के दो संयंत्र (KAPS 1 AND 2:2x220 MW.)
4. कैंगा के दो संयंत्र (KAIGA 1 AND 2:2x220 MW.)
5. राजस्थान के दो संयंत्र (RAPS 3 AND 4:2x220 MW.)
6. तारापुर की चौथी इकाई (TAPS -4:540 MW.)

सात संयंत्र निर्माण के विभिन्न दौर से गुजर रहे है। परमाणु ऊर्जा विभाग NAPS 1 AND 2 तथा RAPS 3 AND 4 के साथ ही भावी संयंत्रो कैगा 3 AND 4 को निगरानी मे देने को तत्पर है।

इस प्रकार कार्यशील MAPS 1 AND 2], KAPS 1 AND 2, कैगा 1 AND 2 तथा TAPS 3 AND 4 निगरानी के दायरे से बाहर रहेगे

भारत ने यह भी स्पष्ट किया कि उसने अपना नाभिकीय अस्त्र बनाने का इरादा छोड़ा नही है। वह पहल नही करेगा लेकिन यदि कोई राष्ट्रपरमाणु प्रहार करता है तो भारत उसका नाभिकीय अस्त्रो से जबाब अवश्य देगा।[30]

इस समझौते से भारत को क्या मिलेगा? इस प्रश्न का जबाब यह है कि अमरीका भारत को परमाणु विधुत उत्पन्न करने के लिये यूरेनियम आयात करने मे सहयोग करेगा। बदले मे भारत को इस बात का आष्वासन दिलाना होगा कि वह आयातित यूरेनियम का इस्तेमाल परमाणु अस्त्र बनाने में नही करेगा।

और इसके लिये वह अन्तर्राष्ट्रीय ऐजेंसियो को अपने असैन्य परमाणु संयंत्रो की अन्तर्राश्ईाय परमाणु ऊर्जा एजेन्यी के सुरक्षा मानको के अन्तगर्त निगरानी की अनुमति प्रदान करेगा

अन्तर्राशटीय परमाणु ऊर्जा एजेन्सी के अधिकारी भारत के असैन्य परमाणु ऊर्जा एजेन्सी के अधिकारी भारत के असैन्य परमाणु संयत्रो की जाचॅ कर इस बात की पुष्टि करेगे कि आयतित यूरेनियम का इस्तेमाल परमाणु अस्त्रो के निमार्ण के लिये नही किया जा रहा है।[31]

भारत के सैन्य रिएक्टर किसी अन्तर्राशटीय निगरानी के दायरे मे नही आएगे और उनमे परमाणु आयुधो का उत्पादन यथावत जारी रहेगा।

भारत का परमाणु विधुत परिदृश्य

कार्यरत संयंत्र				
केन्द्र	रियक्टरो की स0	रियक्टरो की किस्म	ईधन	उत्पादनक्षमता(mw)मे0
तारापुर राजस्थान कलपक्कम	3 4 2	2BWR,1PHWR. PHWR PHWR	समृद्ध यूरेनियम प्राकृतिक	860 MW. 740 MW. 440 MW.

नरौरा	2	PHWR	यूरेनियम	440 MW.
ककरापार	2	PHWR	प्राकृतिक	440 MW.
कैगा	2	PHWR	यूरेनियम प्राकृतिक यूरेनियम प्राकृतिक यूरेनियम प्राकृतिक यूरेनियम	440 MW.
योग	15	2BWR;13PHWR		3360 MW.

निर्माणाधीन संयंत्र संभावित स्थापना

तारापुर	1	PHWR	प्राकृतिक यूरेनियम	540MW.जुलाई2006
कैगा	2	PHWR	प्राकृतिक यूरेनियम	2x220MW.दिस06जून–07
राजस्थान	2	PHWR	प्राकृतिक यूरेनियम	2x220 MW.मई07न0–07
कुदनकुलम	2	WER	समृद्ध यूरेनियम	2x1000 MW.07,08
कलपक्कम	1	PFBR	प्लूटोनियम–यूरेनियम आक्साइड	500 MW.2010

संकेत–

BWR = Boiling Water reactor

PHER =Pressurised Heavy Water Reactor

WER= PHWR का रूसी संस्करण

PFBR= Prototype Fast Breeder Reactor

भारत – अमरीका के मध्य हुये अन्य समझौते–

1. दोनो पक्ष द्विपक्षीय आर्थिक सम्बन्ध को व्यापार अवरोधो को कम करके आगामी तीन वर्षों में द्विपक्षीय व्यापार को दोगुना करने पर सहमति व्यक्त की है।
2. दोनो पक्ष इस बात पर सहमत है कि वर्ष 2006 मे एक उच्चस्तरीय सरकारी निजीनिवेश शिखर बैठक कर व्यापार तथा निवेश के बहाव को प्रोत्साहन दिया जाए।
3. द्विराष्ट्रीय विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी आयोग की स्थापना के माध्यम से एक ज्ञान भाग िदार कार्यक्रम पर विचार किया गया है।
4. कृषि शिक्षा संयु क्त शोध तथा क्षमता उत्पादक परियोजनाओ को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से संस्थानिक इंटरफेस का होना आवश्यक समण गया है। कृषि के क्षेत्र मे द्विपक्षीय व्यापार को बढ़ावा देने तथा वर्ष 2006 की समापित तक विश्व व्यापार संगठन के दोहा विकास एजेंडा को पूरा करने का लक्ष्य रख गया है।
5. 18 जुलाई 2005 को नाभिकीय सहयोग पर जारी संयुक्त घोषणा पर अमल किया जाए।
6. एच आई वी /एड्स की रोकथाम को प्रमुख समस्या मानते हुये चिकित्सा केक्षेत्र में सहयोग जारी रखने पर सहमति दी गयी।
7. छोनो देश एक क्षेत्रीय विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी आयोग के गठन पर सहमत हुए है।जो औद्यौगिक शोध एवं कवकास को प्रोत्साहन देगा।
8. नगरिक अंतरिक्ष नरसंहार के हथियारो पर रोक तथा वैश्विक आंतकवाद के विरूद्ध लड़ाई सहित कई दूसरे मुद्दो पर संयुक्त रूप से ध्यान देने पर सहमति जताई गई है।

संयुक्त राज्य अमरीका – एक परिचय [33] (समसामयिक परिदृश्य)

देश – संयुक्त राज्य अमरीका –(50 राज्यो का एक संघीय गणतंत्र राष्ट्र)

सीमाएँ– उत्तर मे कनाडा , दक्षिण मे मैक्सिको पूर्व मे अनध महासागर ,दक्षिण पूर्व में मैक्सिको की खाड़ी ,पश्चिमम` प्रशान्त महासागर

राजधानी– वाशिगटन डी0सी0

क्षेत्रफल – 95,18,323 वर्ग कि0 मी0

जनसंख्या – 287,602,000 व्यक्ति (2002)

जनसंख्या घनत्व – 30.2 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0

साक्षरता– 99% (1997 के अनुसार)

राजभाषा– अंग्रेजी

धर्म– ईसाई

प्रति व्यक्ति आय 35,040 डालर

मुद्रा– डालर

प्रमुख नदियां –मिसी सिपी –मिसौरी ,यूकन , ओहियो,कोलम्बिया, कोलेरेडो,

प्रमुख नगर – न्यूयार्क लॉस एजिल्स ,फिलाडेल्फिया, सिकागो,हयूटन, बोस्टन , एटलांटा , औहिया , कोलम्बियां

राष्टपति जार्ज डब्ल्यू बुश जूनियर

उपराष्टपति – डिक चैनी

अमरीकी संसद से मुहर लगने से पूर्व समझौते पर अमल नही – भारत अमरीकी परमाणु समझौते को लेकर उपजी आशंकाओ पर प्रधानमन्त्री डा0 मनमोहन सिंह 11 मार्च 2006 को संसद को आश्वस्त किया–"अमरीकी संसद की मुहर लगने से पहले भारत अपने सैनय और असैन्य रिएक्टरों को अलग करने की योजना पर अमल नही करेगा इस समझौते से भारत का परमाणु अस्त्र कार्यक्रम बिल्कुल प्रभावित नही होगा,साथ ही अनुसंधान और विकास कार्यक्रमो पर प्रतिकूल प्रभाव नही पड़ेगा।

इससे पूर्व 6 मार्च को सदन मे अपना वक्तव्य देते हुये प्रधानमन्त्री ने कहा था कि राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र हमारे लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अतः इस परिसर को अंतर्राष्ट्रीय निगरानी और दखलंदाजी से मुक्त रखा जायेगा। इस अनुसंधान परिसर में स्थापित दो रियक्टरों साइरस और अप्सरा मे से साइरस को 2010 तक स्थायी रूप से बन्द कर दिया जायेगा दूसरे रिएक्टर अप्सरा को परिसर से हटाकर अन्यत्र स्थापित किया जायेगा और यह प्रक्रिया 2016 तक सम्पन्न होगी तत्पश्चात उसे अन्तराष्ट्रीय निगरानी मे सौप दिया जायेगा।

लेकिन 11 मार्च को डा0 सिंह ने सदन को स्पष्ट किया कि भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र में स्थापित उक्त रिएक्टर से ईधन कोड को ही स्थांतरित किया जायेगा ,रिएक्टर को नही । उन्होने यह भी स्पष्ट किया कि भारत इस सामरिक प्रतिष्ठान पर किसी तरह की अंतर्राष्ट्रीय

निगरानी नही चाहता।साफ जाहिर है कि भारत ने अपने स्ट्रेटजिक हितो को तिलांजलि देकर समझौता नही किया है।

भारत का स्पष्ट नजरिया फैसला अमरीका पर–

भारत और अमरीका केबीच अभी परमाणु सहमति ही बनी है। इसे समझौता मानना भूल होगी क्योकि अमरीकी काग्रेस (संसद) से बिना पारित हुये इसे अमली जामा नही पहनाया जा सकता है। प्रधानमंत्री ने सदन के माध्यम से देश को आश्वस्त किया है कि उक्त समझौते से भारत का नाभिकीय अस्त्र कार्यक्रम कतई प्रभावित नही होगा।

प्रधानमंत्री ने यह भी स्पष्ट किया कि जिन रिएक्टरो को अन्तर्राष्ट्रीय निगरानी मे देने की बात भारत ने स्वीकारी है। वह इसी आष्वासन पर है कि अमरीका उनकी ईधन आपूर्ति बिना किसी बाधा के जारी रखेगा।

भारत ने भविष्य मे सभी थर्मल पावर रिएक्टरो को और असैन्य ब्रीडर रिएक्टरो को अंतर्राष्ट्रीय निगरानी मे रखने का फैसला किया है लेकिन किन असैन्य रिएक्टरो को निगरानी मे रखा जाये यह निर्णय भारत स्वंय करेगा उक्त समझौते के अर्न्तगत भारत स्वंय असैन्य और सैन्य परमाणु संयंत्रो को चिहिन्त और अलग करेगा। भारत ने यह भी स्पष्ट किया कि भविष्य मे स्वदेशी तकनीकि से निर्मित होने वाले रिएक्टरो को अन्तर्राश्ट्रीय निगरानी से सर्वथा मुक्त रखा जायेगा। भारत ने अमरीका को स्पष्ट रूप से बता दिया है कि वह संवार्धित यूरेनियम निर्मित करने वाले कलपक्कम स्थिति प्रोटोटाइप फास्ट ब्रीडर रिएक्टरो और फास्ट ब्रीडर टेस्ट रिएक्टरोको निगरानी की श्रेणी मे नही रखेगा क्योकि भारत नही चाहता कि किसी भी भारत से भारत के फास्ट ब्रीडर कार्यक्रम मे कोई बाधा उपस्थिति हो। इन रिएक्टरोमे उत्पादित प्लूटोनियम ईधन का इस्तेमाल भारत अपने नाभिकीय शस्त्रो के उत्पादन मे करते रहना चाहते है।

भारत अमरीका के बीच हुये उक्त समझौते को लेकर अमरीकी जनमत और संसद मे भी गतिरोध और विरोध जारी है। इसे पारित करने के लिये अमरीका को अपने परमाणु ऊर्जा अधिनियम 1954 मे बदलाव करना होगा। भारत चूकि नाभिकीय अप्रसार सन्धि N.P.T. पर न तो हस्ताक्षर किया है और नही उसकी ऐसी मेशा है। अतः यदि उक्त समझौता लागू हो जाता है। तो भारत को परमाणु क्लब मे अति विशिष्ट राष्ट का दर्जा प्राप्त हो जायेगा। इसी आधार

पर अमरीकी संसद को आपत्ति है और अमरीकी काग्रेस का यह भी आरोप है कि बुश ने उसे बिना भरोसे मे लिये भारत से ऐसा समझौता कर लिया।

पूर्व अमरीकी राष्टपति जिमी कार्टर ने भारत अमरीकी असैन्य परमाणु समझौते का विरोध करते हुये कहा है कि इससे इरान और उत्तरी कोरिया जैसे देशो को अनिश्चितता के संकेत गये है और इससे परमाणु हथियारो के प्रसार का रास्ता खुल जायेगा।

इसके पलट अमरीकी विदेश मन्त्री कोंडलीजा राइस ने सीनेट की विदेश मामलो सम्बन्धी समिति मे भारत –अमरीकी परमाणु समझौते की जोरदार अपील करते हुये 5 अप्रैल 2006 को कहॉ कि काग्रेस को इसे मंजूरी देनी चाहिये। उन्होने विरोधीयों की सारी आपत्तियो को दर किनारे करते हुये कहा कि इस समझौते से दक्षिण ऐशिया मे हथियारो की होड़ शुरू नही होगी। राइस ने स्पष्ट रूप से कहा कि – हमें मालुम है कि भारत ने न तो N.P.T. पर हस्ताक्षर किये है और नही करने वाला है। यही वह मुद्दा है जिस पर अमरीकी काग्रेस मे मतैक्य नही है। समझौता लागू हो जाने पर परिणति यह होगी कि भारत को एक विशिष्ट राष्ट का दर्जा मिल जायेगा और उसे एन0 एस0 जी0 समेत अंतर्राष्ट्रीय मदद मिलनी आरम्भ हो जायेगी।

अमरीका भारत को विशिष्ट दर्जा इसलिये देने पर सहमत है कि बिना N.P.T. का सदस्य होते हुये भी भारत ने कभी परमाणु अप्रसार का कभी उल्लंघन नही किया। समझौते से अमरीका को अपने परमाणु कारोबार का अच्छा खासा बाजार भी मिलने जा रहा है। उल्लेखनीय है कि 1973 के बाद से अमरीका ने कोई भी परमाणु रिएक्टर नही स्थापित किया वह अपने पुराने रिएक्टरो को भारत को निर्यात करेगा और सम्बद्ध उपकरणो/ईधन की आपूर्ति कर इस व्यवसाय मे इजाफा करेगा। कहना मुश्किल है कि कौन कितने नफे मे रहा और किसका कितना नुकसान हुआ? दोनो देशो ने अपनी – अपनी प्राथमिकताओ के हिसाब से समझौते किये है। परमाणु प्रौद्योगिकी मे भारतीय उत्कृश्टता की यह स्वीकृत है। कदाचित इसी नाते अमरीका ने भारत को यह वरीयता दी है। भारत और अमरीका के बीच परमाणु समझौते को लागू करने के लिये महत्वपूर्ण अप्रसार कानून मे परिवर्तन सम्बन्धी प्रस्ताव को अनेक विरोधो के बीच बुश प्रसासन ने अमरीकी काग्रेस को सौप दिया। समझा जाता है कि उसने अपने 1954 के परमाणु ऊर्जा अधिनियम मे संशोधन का प्रस्ताव पेश किया है ताकि अमरीकी संसद से भारत को परमाणु तकनीकि की बिक्री की अनुमति मिल सके। चूकि भारत

N.P.T. के दायरे से बाहर है अतः उक्त कानून मे संशोधन किये बिना भारत को परमाणु तकनीकी उपलब्ध नही करायी जा सकती है। राष्ट्रपति बुश को उम्मीद है कि इस समझौते को अमरीकी काग्रेस की अनुमति अवश्य मिल जायेगी। इधर प्रधानमन्त्री डा0 मनमोहन सिंह ने 29 मार्च को अपने एक वक्तव्य मे घोषित किया कि अब यह मामला अमरीकी कांग्रेस में है। और इस सम्बन्ध मे समर्थन जुटाना बुश प्रशासन की जिम्मेदारी है। हमे इससे कुछ लेना देना नही है।

स्वाभाविक है कि अब गेंद अमरीका के पाले मे है। यदि समझौता लागू हो जाता है तो भारत को अपना परमाणु विधुत कार्यक्रम जारी रखने मे मद्द मिलेगी। परमाणु ऊर्जा प्रदूषण मुक्त है, यद्यपि उसमे विकिरण शीलता क्षति विद्यमान है। अन्य ऊर्जा आवश्यकताओ की आपूर्ति कर सकेगा और अमरीका अपनी ऊर्जा श्रोतो की तुलना मे सस्ती होने के कारण भारत अपनी ऊर्जा आवश्यकताओ की आपूर्ति कर सकेगा और अमरीका समेत के सदस्य राष्ट्रो को एक अच्छा खासा बाजार मिल सकेगा।

लेकिन विशेषज्ञो की धारणा है कि यह समझौता अमली जामा नही पहन सकेगा अमरीकी प्रशासन भी अब यह मानने लगा है कि इसे असली शक्ल अख्तियार करने मे अभी वक्त लगेगा देखिये क्या होता है। यह सब भविष्य के गर्भ मे निहित है।[37]

भारत में भी संशय और गतिरोध –

भारत और अमरीका के बीच हुआ परमाणु समझौता तभी लागू हो सकता है जब दोनो देशो की संसदों से यह पारित हो जायेगा । यह ठीक है कि राष्ट्रपति बुश और विदेश मन्त्री कौन्डलीजा राइस अमरीकी सीनेटरों को अपने पक्ष में करने की जोरदार अपीलें और वहसें कर रहे है। लेकिन वहाँ भी गतिरोध चालू है। कमावेश ऐसे ही हालात भारत में भी बरकरार है । पूर्व प्रधानमंत्री अठल विहारी वाजपेयी ने अमरीकी संसद में प्रस्तुत भारत को रियायत देने सम्बन्धी प्रस्ताव का विरोध किया है। यदि यह प्रस्ताव पारित हो गया तो भारत कभी भी परमाणु परीक्षण नही कर पाएगा। यह प्रस्ताव व्यापक परमाणु प्रतिबन्ध सन्धि से भी कठोर है। यह ठीक है कि भारत स्वंय परमाणु परीक्षण नही करना चाहता लेकिन भविष्य में उसके लिए दरवाजे बन्द हो जायेगे।

पूर्व प्रधानमंत्री ने इस विधेयक के प्रावधान को पूरी तरह नामंजूर करते हुए कहा कि चीन को अमरीका के परमाणु ऊर्जा अधिनियम में बदलाव करने पर छूट दी गयी थी। जबकि

भारत के मामले में ऐसा नही है। वाजपेयी ने आपत्ति जताते हुए कहा कि विधेयक के अनुसार भारत द्वारा 7 शर्ते पूरी किये जाने पर ही प्रतिवन्ध हटाये जायेंगे पर विधेयक पारित होने पर इस मामले में भारत सरकार के भावी क्रिया कलाप भारतीय संसद द्वारा पारित कानूनी अथवा अन्तर्राष्ट्रीय समझौते के आधार पर नही बल्कि अमरीकी काग्रेस द्वारा सुनिश्चित किये जायेगे।[39]

पूर्व प्रधान मन्त्री ने भारत सरकार को सलाह दी है कि वह अमरीकी राष्ट्रपति से भारत के ऊपर लगे प्रतिबन्धो को हमेशा के लिये हटाने का अनुरोध करे जैसा कि चीन के मामले मे किया गया था। साथ ही यदि चीन, पाकिस्तान अथवा अन्य देश परमाणु परीक्षण करता है तो भारत के पास भी परीक्षण करने का अधिकार बने रहना चाहिये ।

जाहिर सी बात है कि भारत को अपनी सम्प्रभुता अक्षुण्ण रखनी चाहिए और इस संर्दभ में पूर्व प्रधानमंत्री का परामर्श युक्तियुक्त है लेकिन अभी भी तस्वीर पूरी तरह साफ नही है कि भारत को उक्त समझौता के लिए क्या कीमत चुकानी होगी?

उधर अमरीका में भी हालात ऐसे ही हैं कहना मुश्किल है कि अमरीकी संसद से उक्त विधेयक पारित हो जायेगा? सवाल यह भी है कि भारत एन0 पी0 टी0 का सदस्य नही है तो फिर अमरीका भारत से ऐसे समझौते किस बुनियाद पर कर रहा है। कांडलीजा राइस ने सीनेट और हाउस ऑफ रिप्रेजेंटेटिव की विदेश सम्बन्धी समितियों मे इसकी वकालत करते हुये कहा कि चूकि मौजूदा परमाणु अप्रसार व्यवस्था भारत पर रोक लगााने मे नाकाम रही है, अतः अमरीका को अपने रवैये मे परिवर्तन करना पड़ रहा है। इस परमाणु समझौते के द्वारा एक व्यापक अप्रसार व्यवस्था में भारत को सम्मिलित किया जा रहा है। इस समझौते से भारत की ऊर्जा जरूरते पूरी होगी तो अमरीका को आर्थिक लाभ मिलेगा।

अमरीकी सांसदो को राइस के इसी बयान का इन्तजार था क्योकि इसी के बाद विचार विमर्श आरम्भ होगा और सांसद अपनी राय कायम करेगें। राइस के उक्त वक्तव्य का सकारात्मक प्रभाव दिखायी पढ़ने लगा है। दो प्रभावशाली डेनो क्रेट सांसद –जानॅ कैरी और जोसेफ बिडेन ने इसे अपनी मौन स्वीकृति दे दी है।

अधिकांश अमरीकी सांसद भी यह मानने लगे है कि समझौता ना मंजूर होने से भारत पर तो अधिक प्रभाव नही पड़ेगा लेकिन अमरीका एक अवसर खो देगा। भारतीय प्रधानमंत्री डा0 मनमोहन सिंह पहले ही कह चुके है कि हमारे लिये खोने को कुछ नही है, अब सब

कुछ अमरीका पर निर्भर है। देखिये ,ऊंट किस करवट बैठता है। जहाँ तक जार्ज बुश कार्यकाल में भारत अमेरिका के मध्य राजनीतिक , आर्थिक एवं सामरिक सम्बन्धो का प्रश्न है। हमें बहुत ही सावधानी से इतिहास की परिघटनाओं एवं राष्ट्रीय हितों को ध्यान देते हुए फूंक – फूंक कर कदम आगे बढ़ाने की आवश्यकता है।

इतिहास ने बार–बार साबित किया है कि अमेरिकी सत्ता प्रतिष्ठान के मनसूवों को लेकर किसी तरह के भ्रम में रहना उचित नही है। दुनिया के दूसरे देशों के साथ छल करना उसकी फितरत भी है और जरुरत भी। वह दुनिया के तमाम देशों को अपने प्रभाव में लेने के लिए कोई भी हथकंडा अपनाने से नही चूकता। जब वह सीधा हमला नही कर रहा होता ,तब भी यह प्रक्रिया जारी रहती है। अपनी कुख्यात खुफिया एजेन्सी सी'0आई0ए0 की मदद से वह यह काम राजनीतिक , सामाजिक , आर्थिक , सामरिक और सांस्कृतिक सभी स्तरों पर करता है। कुछ साल पहले सी'0 आई0 ए0 ने जब अपने पुराने दस्तावेज सार्वजनिक किये थे तो यह बात खुल कर सामने आयी कि वह किस तरह अपने हितों के प्रचार के लिए दुनिया के तमाम देशों के नेताओं – बुद्विजीवियों का इस्तेमाल करती है। दस्तावेजो से यह बात साफ हो गई कि चर्चित उपन्यास जार्ज और वेल और तमाम अन्य बुद्विजीवी किसी न किसी रुप में सी'0 आई0 ए0 से पैसा लेते थे। कल्चरल फ्रीड़म और एनकाएंटर जेसी कम्युनिज्म के खिलाप प्रचार करने वाली बौद्धिक पत्रिकाऔ के पीछे सी'0 आई0 ए0 का पैसा था। उसी दौर में भारत में सी'0 आई0 ए0 का विगं मॉरल रिऑर्नमेंट की कमान संभालने का आरोप जिन लोगों पर लगा , उनमें हिन्दी के एक जाने माने साहित्यकार भी शामिल थे।

दरअसल दुनिया का यह स्वंय भू सरदार इन दिनों गहरे संकट में है। रोजगार के बाजार में उसके यहाँ मंदी गहराती जा रही है । उसका घरलू खाते का घाठा , दोनो भयावह रुप से बढ़ते जा रहे है। ऊपर से यूरो डॉलर के लिये चुनौती वनकर उभर रहा है।

अमेरिकी अब तक अपने घाटे की भरपाई दूसरे देशो से प्राप्त डॉलर से करता रहा है ,लेकिन अगर दुनिया के देशो ने यूरो को अपनाना शुरू कर दिया , तो उसकी अर्थव्यवस्था का क्या होगा? इसकी कल्पना की जा सकती है। चीन के आगे आज अगर अमेरिका की घिग्गी बंधी रहती है, तो इसलिये कि उसके पास दुनिया का 11प्रतिशत से अधिक विदेशी मुद्रा भंडार है। और अगर चीन ने यूरो को अपनाना शुरू कर दिया , तो अमरीकी अर्थव्यवस्था चरमराने लगेगी। भारत और एशिया लैटिन अमेरिका के तमाम देश अभी चीन की तरह इस

स्थिति मे नही आ पाये है किवे अमेरिका पर दबाब बना सके। पर अगर इन देशो का झुकाव यूरो की और हो गया, तो अमरीका के लिये मुश्किल खड़ी हो जायेगी । इसलिये जरूरी है कि वह इन देशो के सत्ता प्रतिश्ठानो पर अपनी पकड़ बनाये रखे। इसके अलावा एक बड़ा कारण यह भी है कि अमेरिका अर्थ व्यवस्था को बड़ा सहारा रक्षा उद्योग से ही मिलता है। एक मोटे अनुमान के मुताविक अमरीकी रक्ष विभाग और उसके ठेकेदारो के लिये वहॉ के एक तिहाई इंजीनियर काम करते है। दस बड़ी शस्त्र कंपनियो मे 10 लाख से अधिक मजदूरो को रोजगार मिला हुआ है। सैन्य उद्योग मे करीब 50 लाख लोगो को रोजगार मिला है। दुनिया मे घृणा और द्वेश का कारोबार चलता रहे तो अमेरिकी रक्षा उद्योग स्वतः फलता फूलता रहेगा।

इन वजहो से अमेरिका केवल यही नही तय करना चाहता कि हम क्या खाऐ क्या पहने ये भी तय करना चाहता है कि हम कैसे और क्या सोचे ? इसके लिए वह वैचारिक अधार भूमि तैयार करता है। अमेरिका मे पिछले सालो मे अफगानिस्तान और इराक मे जो किया, उसे पूंजी के दमन चक्र से जोड़ने के बजाय सैमुअल हटिंगटन जैसे लोग सभ्यताओं के संघर्ष के आधार पर प्रस्तुत कर रहें है।

इसे ईसाई और मुसलिम सभ्यताओ के बीच टकराव का नाम दिया जा रहा है। हटिंगटन की सभ्यताओं के संघर्ष की थ्योरी प्रकारांतर मे अमेरिकी हमलो को आदर्श और स्वाभावि क ठहराती है। अमरीका यह चाहता है कि दुनिया के लोग समस्याओ की तह तक न जाएं। इसलिये वह सभ्यताओ के संरक्षण की बात करके प्रतिरोध की ऊर्जा को दूसरी ओर मोड़ देता है। यह बात किसी से छिपी नही है कि अमरीका के नापाक मनसूवो को बौद्धिक आवरण मे प्रस्तुत करने वाले हटिंगटन जैसे अमेरिकी विदेश विभाग के कर्मचारी थे और फूकुयामा और रॉर्वट ग्रेटन जैसे लोग भी अमेरिकी विदेश विभाग को अपनी सेवाऍ देते रहे है।

भारत जैसे देशो की मुश्किल यह है कि ऊॅचे पदो पर बैठे लोग खुद ही अमेरिका के आगे बिछ जाने को तैयार है। इन लोगो का कहना है कि मौजूदा वैश्विक परिदृश्य मे अमेरिका को नाराज करना आत्महत्या करने के समान है। यह कहकर ये लोग अपनी कायरता को छिपाने की कोशिश करते है।

उपरोक्त तमाम आशंकाओ के मध्य प्रतिष्ठित पत्रिका टाइम ने पिछले माह के एक अंक में भारत के ऊपर आवरण कथा प्रकाशित की, जिसका शीर्षक था, 'इंडिया – विश्व का सबसे

बड़ा लोकतंत्र क्यों आगामी आर्थिक महाशक्ति है और अमेरिका के लिए उसका क्या महत्व है ?

एक अन्य प्रसिद्व पत्रिका फॉरेन अफेयर्स ने अपने अंको में भारत पर चार आलेख प्रकाशित किये है। जबकि दा इकॉनामिस्ट ने जून 2006 ही के एक अंक मे 'कैन इंडियाफलाई, अफेयर्स ने अपनी टिप्पणी मे लिखा है कि आर्थिक विकास और राजनीतिक आत्मविश्वास ने मिलकर भारत का पुर्ननिर्माण किया है।[43]

6. जार्ज वुश काल में आर्थिक सम्बन्ध –

अमेरिकी वाणिज्य अवर–सचिव केनेथ जस्टर के अनुसार अमेरिका के भारत को उच्च्व तकनीकी निर्यातों में बहुत तेजी आई है। यह भी कहा गया है कि अनिवार्य लाइसेंस हेतु अमेरिकी निर्यातको द्वारा किये जाने वाले आवेदनो को अस्वीकार करने के मामले कम हुए है।

अमेरिकी उड्डयन और परिवहन सहायक सचिव करण भाटिया ने फिक्की के सत्र को संवोधित करते हुए व्यापार एवं उद्योग जगत की हस्तियों को बताया कि उनकी सरकार भारत से मुक्त आकाश समझौता करने के लिए तैयार हैं। भारत एवं अमेरिका ने कृषि तकनीकी के अनुसंधान और विकास में सहयोग में बृद्धि करने के उद्देश्य से एक आषय पत्र पर हस्ताक्षर किये है।

वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की कुंजी आर्थिक निर्भरता होने जा रही है भारत आर्थिक एवं सामरिक दोनो रूप में विश्व की प्रमुख शक्ति बनने जा रही है। इसीलिए भारत और अमेरिकी आर्थिक सम्बन्ध परिवर्तित हो रहे है। भारत 2015 तक विश्व की प्रमुख आर्थिक शक्ति होगी। हालात का कारण बुश की घरेलू राजनीतिक मजबूरियाँ ही हैं। बुश द्वारा इस्पात उत्पादकों को

<u>मनमोहन सिंह–बुश समझौता:–</u> दोनों ने निम्न शर्तों में एक राय हुए:–

1– दोनों देश अन्तरिक्ष खोजों, सामरिक तथा विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्र में मिलकर प्रयास करेंगे। दोनों राष्ट्र सी0टी0बी0टी0 की शर्तों के प्रसार के लिए सम्मिलित प्रयास करेंगे। अमरीका अपने कानूनों तथा नीतियों को परमाणु समझौते को लचर बनायेगा।

भारत और अमरीका आपदा प्रबन्धन में आपसी सहयोग करेंगे।

भारत और अमरीका के बीच दस नये कदम शिक्षा प्रसार, ग्रामीण क्षेत्र विकास, कृषि विकास, आदि में अनुसंधान के क्षेत्र में उठाये जायेंगे। दोनों राष्ट्र एच0आई0वी0/ए0आई0डी0एस0 को वैश्विक स्तर पर समाप्त करने का प्रयास करेंगे। [44]

References:-

1. सिविल सर्विसेज टाइम्स (नई दिल्ली) नबम्बर 2004 पृष्ठ 40

2. इन्डिया, यू0एस0ए0 एण्ड द इमरजिंग वर्ल्ड आर्डर, दिलीप मोहते (कलकत्ता, 2003) पृष्ठ 219

3. ए.पी. राणा सम्पादक फोरडिकेड्स आफ इण्डो यू0 एस रिलेंशन्सः ए कम्मेमोरेटिव रिट्रोस्पेक्टिव, न्यू देहली, 1994– पृष्ट 213–230

4. ए.पी. राणा सम्पादक फोरडिकेड्स आफ इण्डो यू0 एस रिलेंशन्सः ए कम्मेमोरेटिव रिट्रोस्पेक्टिव, न्यू देहली, 1994– पृ0 263

5. बृजेन्द्र नाथ बनर्जी, फारिन एड टू इण्डिया (नई दिल्ली 1977) पृ0 128

6. वी.पी. दत्त इंडियन फारेन पालिसी (नई दिल्ली 1984) पृ0 414

7. एन. के. सिंह इम्पेक्ट आफ अमेरिकन ,ऑन इण्डियन इकोनॉमी पृ0 22–24

8. नार्मन डी. पामर, दी युनाइटेड स्टेट्स एण्ड इण्डिया दि डाइमेन्सन आफ इन्फ्लूएन्स (न्यूयार्क 1994) पृ0 159

9. एन स्टेक्ट ऑफ दी युनाइटेड स्टेट्स 1989 पृ0 170

10. डॉटाज यू0 एस. डिपार्टमेन्ट आफ कामर्स 1991 पृ0 230

11. रितु शर्मा, इण्डियाज ओटोनॉमी एण्ड अमरीकनफारेन आसिंस्टेस पालिटिक्स आफ अनईवेशन स्ट्रेटिजिक एनालिसिस अक्टूबर 1995 पृ0 833

12. इकानामिक सर्वे 1989–90 (नई दिल्ली 1990) पृ0 270

13. सर्वजीत जोहनल, इण्डियाज सर्चफार कैपीटल एब्राड दी यू0 एस0 रिलेशनशिप एशियन सर्वे वर्ष 29, अंक–10 अक्टूबर 1989, पृ0 971–72

14. योगेन्द्र पाल सुपर 301, स्पेशल 301 और भारत नव भारत टाइम्स 25 मई 1992, पृ0 16

15. पुष्पेशपंत श्री पाल जैन, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध (मेरठ 1991) पृ0 641

16. योगेन्द्र पाल सुपर 301, स्पेशल 301 और भारत नव भारत टाइम्स 25 मई 1992, पृ0 16

17. वाहे गुरूपाल सिंह , एनहान्सिंग इण्डोन्यू0एस0 स्ट्रेटजिक को ओपरेशन अडेलफी पेपर 313 पृ038

18. तिवारी, श्यामाचरण, बढ रहा है भारत अमेरिकी सहयोग समाचार जगत, 19 जनवरी 1995 जयपुर

19. टाइम पत्रिका, अमेरिका, जुलाई 1999

20. जे0 एन0 दीक्षित हिन्दुस्तान 6 जुलाई 1999

21. क्रानिकल (नई दिल्ली) मई जून 1998

22. यूथ काम्पिटीशन टाइम्स, वर्ष 2000, अंक 4 पृ0 34–37

23. सी0एम0 कोली, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, जयपुर 2000 पृ0 449

24. सी0एम0 कोली, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, जयपुर 2000 पृ0 451

25. सी0एम0 कोली, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, जयपुर 2000 पृ0 452

26. सी0एम0 कोली, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, जयपुर 2000 पृ0 453

27. दिलीप मोहते, यू0 एस. एण्ड द इमरजिंग क्लर्ड ऑर्डर पृ0 259

28. समसामयिक घटना चक्र। अप्रैल 2006 पृ0 53–53

29. समसामयिक घटना चक्र। अप्रैल 2006 पृ0 53

30. समसामयिक घटना चक्र। अप्रैल 2006 पृ0 54

31. समसामयिक घटना चक्र। अप्रैल 2006 पृ0 51

32. यूथ काम्पिटीशन टाइम्स 2006 अंक–4 पृ0 61

33. यूथ काम्पिटीशन टाइम्स 2006 अंक–4 पृ0 60

34. समसामयिक घटनाक्रम, अप्रैल 2006 पृ0 54

35. सम सामयिक घटनाक्रम, अप्रैल 2006 पृ0 54–55

36. अन्निदयो जे मजूमदार, न्यूक्लियर इण्डिया इन्दू न्यू मिल्लेनियम पृ0 91

37. अन्निदयो जे मजूमदार, न्यूक्लियर इण्डिया इन्दू न्यू मिल्लेनियम पृ0 91

38. समसामयिक घटनाक्रम,पत्रिका अप्रैल 2006 पृ0 57

39. सेलिग एस0 हैरिसन एण्ड जिऑफ्रे कैम्प इण्डिया एण्ड अमेरिका आफ्टर द कॉल्डवार यू0एस02006 पृ0 194

40. महेन्द्र वेद, अमर उजाला, 26 अप्रैल 2006

41. मनोज मिश्रा, अमर उजाला, 18 अगस्त 2006

42. मनोज मिश्रा, अमर उजाला, 18 अगस्त 2006

43. महेन्द्र वेद, अमर उजाला, 5 जुलाई 2006

44. साउथ एशियन पॉलिटिक्स, अगस्त 2005 अंक–4 पृ0 22

अध्याय चतुर्थ

भारत की विदेश नीति और महाशक्ति अमेरिका

भारत की विदेश नीति और महाशक्ति अमेरिका

1. गुटनिरपेक्ष आन्दोलन और भारत – अमरीका सम्बन्धः–

भारत और गुटनिरपेक्ष नीतिः–

गुटनिरपेक्ष नीति और भारत में विशेष सम्बन्ध रहा है। गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के प्रमुख जनक नेहरू, नासिर, और टीटों थे। भारत की ओर से गुट निरपेक्ष आन्दोलन को दिशा देने में नेहरू जी का विशेष योगदान रहा है। अतः अन्तराष्ट्रीय राजनीति में प्रारम्भ से ही गुट निरपेक्षता का दृष्टिकोण होने के कारण भारत की चर्चा करना अत्यन्तं प्रासंगिक है। गुट निरपेक्षता नीति का विश्व के किसी भी गुट के साथ द्विपक्षीय सम्बन्धों के आधार पर सैनिक समझौते में भाग न लेना है। इस नीति का पालन करने वाले राष्ट्र जहॉ एक ओर गुटबाजी की विश्व राजनीति से विलग रहते है। वहीं दूसरी ओर विश्व शान्ति और सुरक्षा में प्रगति हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों को भरपूर मदद देते है। इसका अर्थ कदापि "तटस्थता" की नीति नही हैं जैसा कि हम बता चुके है कि भारतीय प्रधानमंत्री नेहरू जी ने गुट निरपेक्ष नीति का अर्थ स्पष्ट करते हुये कहा था–"यदि स्वतंत्रता का हनन होगा, न्याय की हत्या होगी अथवा कही आक्रमण होगा तो वहॉ हम न तो आज तटस्थ रह सकते है। और न भविष्य में रहेंगे।" यह नीति गुट निरपेक्षता देशों की अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उठने वाली दैनदिन की ज्वलंत समस्याओं पर उनके गुणानुसार अपनी स्वतंत्र प्रतिक्रिया को व्यक्त करने क योग्य बनाती है।

भारत–सोवियत सहयोग व मैत्री सन्धि तथा गुट निरपेक्षताः–

9 अगस्त 1971 को भारत और सोवियत संघ के बीच की गयी मैत्री व सहयोग सन्धि को लेकर गम्भीर विवाद चलता रहा है कि इससे भारतीय गुट निरपेक्ष आन्दोलन का उल्लंघन हुआ है।या नहीं इस बात का मूल्यांकन करने से पहले यहॉ इस सन्धि के पूर्व भारत के समझ तत्कालीन वाहरी चुनौतियों का जिक्र कर देना प्रासंगिक होगा। 1970 में पूर्वी पाकिस्तान में पाकिस्तानी सरकार के (याहिया सरकार) के बर्बर दमन क खिलाफ विद्रोह हुआ और स्वतंत्र देश की मॉग उठी।पाकिस्तानी दमन से पीडित पूर्वी पाकिस्तान के करीब 90 लाख लोग भारत में शरणार्थियों के आवास भोजन एवं कपडों की व्यवस्था कर रही थी। वही दूसरी ओर

पाकिस्तान ने भारत के विरूद्ध सैनिक युद्ध छेडने की तैयारिया शुरू कर दी। अमरीका ने घोषणा की कि वह भारत पाक युद्ध में निश्क्रीय नही रहेगा और उसने चीन से घोषणा करवा दी कि वह भारत पाक में भारत के विरूद्ध पाकिस्तान की सहायता करेगा।इस प्रकार भारतीय सुरक्षा के समझ गम्भीर चुनौती उपस्थिति हो गयी। ऐसी अवस्था में सोवियत मैत्री एवं सहयोग सन्धि पर हस्ताक्षर करके गुट निरपेक्षता नीति का उलंघन किया है। दूसरी तरफ भारतीय एवं सोवियत शासकों और विद्वानों के मत में इस सन्धि से भाारतीय गुट निरपेक्ष नीति का किसी प्रकार का उल्लंघन नही हुआ है। उनका मानना है कि यह सन्धि भारत और सोवियत संघ के बीच बढती मैत्री व सहयोग का प्रतीक है।

अमरीका की दृष्टि में निर्गुट आन्दोलनः—

कुछ वर्ष पूर्व निवर्तमान अमरीकी राजदूत वेरनन ए0 वाल्टर्स ने कहा था कि संयुक्त राष्ट्र मंच पर उसे जितनी परेशानियाॅ सोवियत संघ या चीन से नही हुई उतनी निर्गुट आन्दोलन के राष्ट्रों से हुई हैं। राजदूत के अनुसार "उस समय 102 निर्गुट राज्य जिनमें अधिकाश विकासशील और समाजवादी देश है। अमरीका के खिलाफ एक जुट है" वे निर्गुट नही हैं। यह संयुक्त राष्ट संघ में 80 प्रतिशत मामलो पर अमरीका के खिलाफ मतदान करते थें। निर्गुट आन्दोलन सौम्य होता जा रहा है किन्तु इसमें अभी वर्षो लग जाऐगें।

गुट निरपेक्षता का भविष्यः—

गुट निरपेक्षता विश्व राजनीति में राष्ट्रों के लिये एक विकल्प के रूप में निश्चय ही स्थायी रूप धारण कर चुकी है।

भारत पर चीनी आक्रमण और गुटनिरपेक्षताः—

भारत की गुट निरपेक्षता नीति की चर्चा करते समय भारत पर 1962 में चीन द्वारा अचानक फौजी हमला करने के फल स्वरूप नीति प्राशंगिता के साथ साथ इस बात का विश्लेषण जरुरी है कि क्या भारत गुट निरपेक्षता की नीति से हट गया ? जब चीन ने भारत पर बर्बर हमला किया तो सोवियत संघ जैसै हमारे परम्पारिक मित्र ने यह तर्क देकर अपने हाथ खींच लिये कि भारत हमारा मित्र है तो चीन हमारा भाई उसने भारत को किसी भी प्रकार उस हमले से बचाने से इन्कार कर दिया। उधर अमरीका की प्रतिद्वन्दी शक्ति अमरीका ने भी

युद्ध के दौरान भारत की ठोस मदद नहीं की। उसने उल्टे भारत पर यह दबाव डाला कि वह अमरीका द्वारा प्रवर्तित सैनिक गठबन्धनों मे सम्मिलित हो जाये। या फिर अमरीका की परमाणु छतरी स्वीकार कर ले। अर्थात भारत पर आक्रमण होने पर अमरीका उसकी मदद करेगा। इन्ही तर्कों से प्रभावित होकर भारतीय संसद के अनेक सदस्यों ने यह मत व्यक्त किया था। कि यदि " भारत किसी महाशक्ति के सैन्य संगठन से जुडा होता तो उसे चीनी बर्बर हमले के दुर्दिन नही देखने पढते। इसी प्रकार के तर्क भारत द्वारा गुट निरपेक्षता नीति अपनाये जाने की प्रासंगिकता पर प्रश्न चिन्ह खडा कर देते है।

असल में गुट निरपेक्ष भारत पर किसी शत्रु देश द्वारा सैनिक आक्रमण करने से किसी नीति की असफलता नहीं मानी जा सकती। इस बात की भी कोई गारंटी नही हैं कि सैन्य संगठन में सम्मलित होने पर प्रवर्तक महाशक्ति सुरक्षा की गारन्टी देकर उसे शत् प्रतिशत व्यवहार में भी पूरा कर सके। भारत के पडोसी पाकिस्तान का ही उदाहरण लें। 1965 में भारत पाक युद्ध के दौरान अमरीका ने उसके द्वारा प्रवर्तित सेन्टो एवं सिएटो के सदस्य होने पर भी निरपेक्ष भारत के विरूद्ध अपने गुट में बॅधे पाकिस्तान को शस्त्रीय मदद भी रोक दी। गुट निरपेक्ष नीति का अर्थ गुटवाजी में शामिल न होकर स्वतंत्र विदेश नीति का निर्धारण करना है। संकट की घडियों में भी स्वतत्रं नीति निर्माण गुट निरपेक्षता की परिचायक है। कुछ आलोचकों का यह मानना है कि 1962 में भारत पर चीनी हमले के कारण भारत ने दूसरे देशों से पहली बार सैनिक सहायता स्वीकार की इससे पहले भारत अन्य देशों या महाशक्तियों से तकनीकी एवं आर्थिक मदद भी लेता था सैन्य सामग्री नहीं। इस कारण भारत ने गुट निरपेक्षता का रास्ता छोड दिया। वास्तव में यह आलोचना निरर्थक एवं असंगत हैं। जैसा कि प्रो0 के0 पी0 मिश्र ने लिखा है कि "भारत द्वारा चीनी आक्रमण के समय दूसरे देशों से सैनिक सामग्री स्वीकार करने से उसकी गुट निरपेक्षा नीति में कोई मूलभूत परिवर्तन नही हुआ। जिसके दो कारण है:—

1— साम्यवादी चीन के आक्रमण का मुकावला करने के लिये सैन्य सामग्री की सहायता दोनों गुटों से ली गयी।

2— गुट निरपेक्ष नीति का अर्थ कदापि यह नही हैं कि वह राष्ट्र अपनी सुरक्षा की उपेक्षा करे। अनेक देशों ने विगत में विदेशों से सैनिक सहायता ली है और अब भी गुट निरपेक्ष है।

युगोस्लाविया, इथियोपिया,घाना लीबिया अफगानिस्तान आदि के उदाहरण इस मत को पुख्ता करते हैं।

भारत पर चीनी आक्रमण का हमारी गुट निरपेक्षता पर यह सकारात्मक प्रभाव जरूर पडा कि पहले हम विश्व शान्ति और सुरक्षा के आदर्श की बात अधिक करते थे। परन्तु चीनी बर्बर हमले से मोह भंग होने के कारण भारत ने सुंरक्षा तैयारियॉ तेज कर दी। यह आदर्शवाद एवं यथार्थवाद का अच्छा मिश्रण है। जब चीनी हमले के बाद अनेक आलोचको ने भारतीय गुट निरपेक्ष नीति की आलोचना की तो नेहरू जी ने स्पष्ट रूप से कहा था कि " यदि भारत गुट निरपेक्षता छोड देता हैं तो यह भयंकर नैतिक विफलता होगी।" इस प्रकार स्पष्ट है कि चीनी हमले के बावजूद भारत गुट निरपेक्ष रास्ते पर डटा रहा। इसने विशेशतः राष्ट्र समाज के छोटे–2 और अपेक्षाकृत कमजोर सदस्यों के सन्दर्भ में राष्ट्रों की स्वतंत्रता और समता बनाए रखने में योग दिया है। इसने विश्व के पूर्व ध्रुवीकरण को रोककर विचार गत शिविरों के विस्तार को और प्रभाव को संयत करके तथा गुटों के अन्दर भी स्वतंत्रता की शक्तियों को प्रोत्साहन देकर अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा बनाए रखने तथा उसे बढावा देने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसने संयुक्त राष्ट्र संगठन के भीतर और बाहर दोनों जगह बहुत से कल्याणकारी क्षेत्रों में, जैसे कि उपनिवेशों को स्वतंत्र कराने प्रजातीय समता को दूर करने तथा अल्प विकसित देशों के आर्थिक विकास के क्षेत्र में बहुत बडा योगदान दिया है।

आज संयुक्त राष्ट्र संघ के दो तिहाई से अधिक देश गुट निरपेक्षता के दायरे में आ चुके है। संयुक्त राष्ट्र संघ के विभिन्न मंचों से गुट निरपेक्ष राष्ट्रों ने विश्व शान्ति उपनिवेशन वाद के अन्त, परमाणु अस्त्रों पर रोक निशस्त्रीकरण हिन्द महासागर को शान्ति क्षेत्र घोषित करना, नयी अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था के निर्माण आदि विषयों पर संगठित रूप से कार्यवाही की हैं और सफलता हासिल की है।

यह भी प्रश्न किया जाता हैं कि आज गुट निरपेक्षता का क्या औचित्य रह गया हैं? गुट निरपेक्षता की सार्थकता द्वितीय विश्व युद्ध के बाद शीत युद्ध के वातावरण में तो थी। किन्तु पहले 15–20 वर्शो में अन्तराष्ट्रीय राजनीति में बहुत सारे परिवर्तन हुये हैं शीतयुद्ध का अन्त हो चुका है सोवियत संघ का विघटन हो चुका है। पूर्वी यूरोप के देशों में साम्यवाद को कब्र में दफनाया जा चुका है। वारसा पैक्ट भंग कर दिया गया है। नाटों की भूमिका में परिवर्तन आ रहा हैं जर्मनी का एकीकरण हो चुका है गुट निरपेक्षता का उदय शीत युद्ध के सन्दर्भ मे हुआ

था। और आज शीत युद्ध का अन्त हो जाने के कारण गुट निरपेक्ष आन्दोलन अप्रांसगिक हो गया है। फरबरी 1992 में गुट निरपेक्ष राष्ट्रों के विदेश मंत्रियो की बैठक में मिश्र ने स्पष्ट तौर से स्पष्ट की थी कि इस आन्दोलन को समाप्त कर देना चाहिए। उसका तक यह था कि सोवियत संघ के विघटन, सोवियत गुट तथा शीट युद्ध की समाप्ति के बाद गुट निरपेक्ष आन्दोलन की प्रासंगिकता समाप्त हो गयी है। किन्तु बहुसंख्यक विदेश मंत्रियो ने इस विचार का विरोध किया था। उनका कहना था कि बडी संख्या में गुट निरपेक्ष देश अभी निर्धन एवं आर्थिक दृष्टि से पिछडे हुये है और सम्बद्ध राष्ट्रों तथा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा उनका नव औपनिवेशिक शोशण किया जा रहा है। उस स्थिति में उन्हें बचाने के लिये यह जरूरी हैं विकसित और विकास शील देशों के बीच आपसी सहयोग सुदृढ और सक्रिय किया जाये इसके लिये निर्गुट आन्दोलन एक अपरिहार्य मंच का कार्य करेगा।

आज संयुक्त राष्ट्र संघ को केन्द्र बनाकर नाम महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। निशस्त्रीकरण के क्षेत्र में गुट निरपेक्ष आन्दोलन विश्व की पुकार की भूमिका निवाह सकता है और उसे यह भी सुनिश्चित करना होगा कि महाशक्तियॉ तीसरी दुनियॉ के देशों में घातक हथियारों का जमावड़ा न करे।

1993 में आन्दोलन का सदस्य बनने लिये प्राप्त नये आवेदनो से यह सुस्पष्ट है कि सार्वभौम कार्या में गुट निरपेक्ष आन्दोलन की निरन्तर प्रासंगिकता वनी रही हैं और महत्व भी बढा है। थाई लैण्ड व हौण्डुरास को नये सदस्य के रूप में प्रवेश मिला मै सोडोनियों और स्लोवाकिया को अतिथि के रूप में प्रवेश मिला किरगिस्तान को पर्यवेक्षक के रूप में लिया गया।ऐसा कहा गया कि 21वीं सदी आर्थिक युद्ध की होगी। आर्थिक दृष्टि से समृद्ध राष्ट्रों के गुट उभर कर स्वयं ही प्रतिस्पर्धा कर लेगें। और इससे विकासशील राष्ट्रो की स्वतंत्रता और हितों को खतरा पहुॅचेगा। इस खतरे को नियंत्रित करने के लिये उत्तर दक्षिणी संवाद को बनाये रखने में दक्षिण सहयोग और नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था को बनाने के लिये गुट निरपेक्ष आन्दोलन और जी0 77 को एक होंकर कार्य करना पडेगा। आज निम्नलिखित क्षेत्रों में गुट निरपेक्ष आन्दोलन की प्रासंगिकता नजर आती है।

1– नई अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की पुरजोर कोशिश करना।

2– आणविक निशस्त्रीकरण के लिये दवाब डालनां।

3– दक्षिण सहयोग को प्रोत्साहन देना।

4– एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्था में अमरीकी दादागिरी का विरोध किया।

5– विकसित और विकासशील (उत्तर दक्षिण संवाद) देशों के बीच सार्थक वार्ता के लिये दबाव डालना।

6– अच्छी वित्तीय स्थिति वाले गुंट निरपेक्ष देशों जैसे ओपेक राष्ट्रों को इस बात के लिये तैयार करना कि वे अपनी फालतू धन पश्चिमी देशों के बैकों में जमा करने के बजाय विकास शील देशों में विकासात्मक उददेश्यों के लिये इस्तेमाल करे।

7– नव औपनिवेशक शोषण का विरोध किया जाए।

गुट निरपेक्ष नीति ने स्वतंत्र विदेश नीति का सिद्धान्त देकर और नवोदित देशों को एक मंच उपलब्ध कराके सैनिक टकराव की दिशा में सम्भावित व्यापक रूझान को रोक दिया और शीत युद्ध का तनाव कम करने तथा शान्ति स्थापना की दशा में प्रोत्साहन दिया। आपसी विचार विमर्श द्वारा समझा बुझाकर और जोरदार प्रचार करके आन्दोलन ने उपनिवेश वाद उन्मूलन की प्रक्रिया को भी गति प्रदान की। 1960 के बाद यह महसूस किया गया कि राजनीतिक उपनिवेश वाद का तो उन्मूलन हो रहा है। लेकिन नव स्वाधीन राष्ट्र आर्थिक दृष्टि से बहुत कमजोर है और औद्योगिक देशो पर निर्भर है। जिससे लगता है कि निर्धन देशो पर धनी देशों की चौधराहट बराबर बनी हुई है।अतःनई अन्तराष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था स्थापित करने की मॉग की जाने लगी। अब अन्तराष्ट्रीय चिन्ता के विषय आर्थिक समस्या और पर्यावरण प्रदूषण रोकने की समस्या रह गये। लुसाका और अल्जीयर्स सम्मेलनों में नई अन्तराष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था का प्रस्ताव रखकर आन्दोलन ने अब विश्व में प्रदूषण की समस्या पर ध्यान केन्द्रित किया है। इससे सिद्ध होता है। गुट निरपेक्ष आन्दोलन शान्तिपूर्ण समतावादी विश्व व्यवस्था स्थापित करने के विकाश शील देशों का भविष्य उज्जवल बनाने के प्रयासो में निरन्तर प्रयास करता है। लेकिन इतिहास गवाह है कि अमरीका भी यह प्रयत्न करता रहा कि कि वह गुट निरपेक्ष आन्दोलनों में घुसपैठ करे क्यों कि तृतीय विश्व युद्ध के समर्थन के अभाव में संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा व अन्य निकार्यो में उसे बहुत बार अपमानित होना पडता है। वैसे गुट निरपेक्ष आन्दोलन के रिश्ते अमरीकी गुट से कभी मधुर नहीं रहे। यह स्वाभाविक था क्यों कि पश्चिमी साम्राज्यवादी नेता के नाते उसे सदैव बदनाम साम्राज्यवादी शासकों का समर्थन करना पडा हैं अतः अमरीकी समर्थकों को गुटनिरपेक्षता आन्दोलन से कोई सैद्धान्तिक या अवधारणात्मक सहारा प्राप्त नही होता। अमरीका को जो समर्थन आन्दोलन में प्राप्त होते है। वे

या तो रूसी वादी गुट की प्रतिक्रिया में प्राप्त होते है। अथवा आर्थिक व सैनिक सम्बन्धों की कूटिनीतिपूर्ण क्षेत्रीय राजनीति के कारण प्राप्त होते हैं यह स्वाभाविक हैं कि अवधारणात्मक सहारा न होते हुये भी सोवियत वाद की प्रतिक्रिया में अमरीका को आन्दोलन के अन्तर्गत कुछ खास मित्र प्राप्त होने लगे है। यह गुट वादी क्रिया प्रतिक्रिया यदि आन्दोलन के भीतर जडें जमा लेगी। तो क्या निर्गुट वाद की जडें उधडने न लगेगीं।

सैनिक गुट वाद की राजनीति की पराजय के बाद सम्राज्य वादी गुटवादियों ने आन्दोलन को अन्दर से विभक्त कर उस पर अपनी ''लावी'' के अधिकार का प्रयत्न करने की रणनीति अपना ली थी। सैनिक गुट वाद अब राजनीतिक घडेबन्दी के रूप में आन्दोलन में घुसपैठ करने लगा। क्या यह निर्गुट आन्दोलन के लिये चुनौती पूर्ण नहीं है।

2. पंचशील और भारत अमेरिका सम्बन्धः–

भारत की विदेश नीति सदैव ही विश्व शान्ति की समर्थक रही है। भारत ने प्रारम्भ से ही यह महसूस किया कि युद्ध और संघर्ष नवोदित भारत के आर्थिक और राजनीतिक विकास को अवरूद्ध करने वाला हैं। अगस्त 1954 में पणिक्कर ने कहा था ''भारत को इस बात की चिन्ता नहीं है कि उसकी प्रगति को तथा सामान्य रूप से मानव जाति की उत्पत्ति को संकट में डालने वाला कोई युद्ध न हो। पंचशील के पॉच सिद्धान्तों का प्रतिपादन भी भारत की शान्तिप्रियता का द्योतक है। 1954 के बाद से भारत की विदेश नीति को ''पंचशील'' के सिद़्धान्तों ने एक नई दिशा प्रदान की। पंचशील से अभिप्राय है। आचरण के पॉच सिद्धान्त जिस प्रकार बौद्ध धर्म में यह ब्रत एक व्यक्ति के लिये होते है। उसी प्रकार आधुनिक पंचशील के सिद्धान्तों द्वारा राष्ट्रों के लिये दूसरो के साथ आचरण के सम्बन्ध निश्चित किये गये है। सिद्धान्त निम्न लिखित हैः–

1– एक दूसरे की प्रादेशिक अखण्डता और सर्वोच्च सत्ता के लिये पारस्परिक सम्मान की भावना।

2– अनाक्रमण।

3– एक दूसरे के आन्तरिक मामलों मे हस्तक्षेप न करना।

4– समानता एवं पारस्परिक लाभ।

5– शान्ति पूर्ण सह अस्तित्व।

अन्तराष्ट्रीय स्तर पर पंचशील के इन सिद्धान्तों का प्रतिपादन सर्वप्रथम 29 अप्रैल 1954 को तिब्बत के सम्बन्ध में भारत और चीन के बीच हुये एक समझौते में किया गया था। 28 जून 1954 को चीन के प्रधानमंत्री चाऊ एन–लाई तथा भारत के प्रधानंमंत्री नेहरू ने पंचशील में अपने विश्वास को दोहराया ऐशिया के प्रायः सभी देशों ने पंचशील के सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया। अप्रैल 1955 में वॉडुंग सम्मेलन में इन पंचशील के सिद्धान्तों को पुनः विस्तृत रूप दिया गया। बाण्डुंग सम्मेलन के बाद विश्व के अधिसंख्य राष्ट्रों ने पंचशील सिद्धान्तों को मान्यता दी। और उसमें आस्था प्रकट की।2 अप्रैल 1955 तक वर्मा लाओस, नेपाल, वियतनाम, यूगोस्लाविया और कम्बोडिया ने इस सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया। सन् 1955 में आस्ट्रिया, सोवियत संघ पोलैण्ड संयुक्त राज्य अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया ने भी पंचशील को मान्यता दी।14 दिसम्बर 1959 को 82राष्ट्रों की संयुक्त राष्ट्र की महा सभी ने भारत द्वारा प्रस्तुत किये गये पंचशील सिद्धान्त के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया गया। इस प्रकार पंचशील को सम्पूर्ण विश्व की मान्यता मिल गयी। पंचशील के सिद्धान्त अन्तराष्ट्रीय सम्बन्धो के लिये निः सन्देह आदर्श भूमिका का निर्माण करते हैं पंचशील के सिद्धान्त आपसी विश्वासों क सिद्धान्त हैं। प० नेहरू ने स्पष्ट कहा था कि यदि इन सिद्धान्तों को सभी देश मान्यता दे दें तो आधुनिक विश्व की अनेक समस्याओं का निदान मिल जायेगा। पंचशील के सिद्धान्त आदर्श है जिन्हें यथार्थ जीवन में उतारा जाना चाहिए। इनसे हमें नैतिक शक्ति मिलती है। और नैतिकता के बल पर हम न्याय और आक्रमण का प्रतिकार कर सकते है। पंचशील के सिद्धान्त की कुछ समय तक सर्वत्र भूरि भूरि प्रसंशा की गयी थी। श्री परदेशी का मत है कि इस पंचसूत्री सिद्धान्त ने शीत युद्ध के कोहरे को हटा दिया और विश्व जनता ने शान्ति कि सांस ली । इस प्रकार पंचशील जो भारतीय इतिहास और संस्कृति की अपूर्व देन है। स्वयं प्रधानमंत्री नेहरू ने 17 सितम्बर 1955 को लोकसभा में कहा था कि "भारत योगदान को सम्भवतः एक या दो शब्दों में व्यक्त किया जा सकता हैं पंचशील"

परन्तु पंचशील के सम्बन्ध में इतिहास का निर्णय कुछ दूसरे ही प्रकार का है। यद्यपि यह सत्य है कि पंचशील के सिद्धान्त अत्यन्त उच्च और श्रेश्ठ आदर्श है परन्तु वे अव्यवहारिक और भारतीय कूटनीति की हार सिद्ध हुये है पंचशील में इसके सिद्धान्तों का पालन करवाने के लिये किसी उपयुक्त व्यवस्था का या संस्था का विधान नहीं था। इस संबन्ध में पंचशील बहुत कुछ सन् 1928 में कैलॉग ब्रीआ पैक्ट के समान था। कैलॉक ब्रीयां पैक्ट के द्वारा संसार के

अधिकांश राज्यों ने युद्ध के परित्याग की घोशण की थी। परन्तु उन्होंने व्यवहार में अपने वचन का पालन नही किया। इसी प्रकार पंचशील को स्वीकार करने वाले राज्यों ने भी व्यवहार में उन्हें पवित्र आकाक्षांऐं ही समझा और उनका अनेक बार उल्लंघन किया। स्वयं चीन के प्रधानमंत्री जिस समय इस सिद्धान्तों की घोषणा कर रहे थे। उस समय भी चीन भारतीय क्षेत्र पर अधिकार करके पंचशील के सिद्धान्तों का उल्लंघन कर रहा था। सोवियत संघ ने इस सिद्धान्त को मान्यता देने के बावजूद हंगरी में हस्तक्षेप किया। इण्डोनेशिया ने पंचषील के प्रति अपनी निश्ठा की घोषणा के बावजूद मलेशिया के प्रति आक्रामक नीति अपनायी।

प्रारम्भ में पंचशील को भारतीय विदेश नीति की एक महान उपलब्धि माना जाता था। परन्तु बाद की घोशणाओं ने यह सिद्ध कर दिया कि पंचशील एक भ्रान्ति और भारतीय कूटनीति की एक महान पराजय थी। आलोचकों का कहना है कि भारत चीन सम्बन्धों की पृश्टभूमि में पंचशील एक अत्यन्त असफल सिद्धान्त साबित हुआ। इसके द्वारा भारत ने तिब्बत में चीन की सर्वोच्च सत्ता को स्वीकार करके तिब्बत की स्वायत्तता के अपहरण में चीन का समर्थन किया था। अक्टूबर 1962 में चीन ने भारत पर एक भयंकर आक्रमण प्रारम्भ कर दिया। पंचशील की मोह निन्द्रा में सोया भारत इस प्रकार से चौक कर उठ बैठा। उसने पाया कि पंचशील वास्तविकता नही भ्रान्ति थी। भारत की सफलता नहीं कूटनीति भूल थी।

<u>चीन द्वारा भारत पर आक्रमण एवं भारत द्वारा सैनिक सहायता के लिये अमेरिका से सम्बन्धः—</u>

अक्टूबर 1962 को चीन ने भारत पर अचानक आक्रमण कर दिया। भारत को चीन से ऐसी आशा नहीं थी। जिस देश ने "हिन्दी—चीनी भाई—2" का नारा दिया और भारत के साथ मिलकर पंचशील के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। वह उस पर अचानक आक्रमण कर देगा और सीमा के विवाद को सुलझाने के लिये शान्ति वार्ता को त्यागकर सैनिक साधनों का प्रयोग करेगा। ऐसी परिस्थिति में नेहरू जी ने कई देशो के नेताओं से सैनिक सहायता के लिये अपील की जिसमें राष्ट्रपति कैनेडी भी शामिल थे। अमेरिका से जो सैनिक सहायता तुरन्त मॉगी गयी थी। उसमें न केवल लडाकू विमान मॉगे गये थे। बल्कि अमेरिकी सैनिकों को भेजने के लिये अनुरोध किया गया था। ताकि चीनी सैनिकों को भारत भूमि से निकाल वाहर कर दिया जाए। अमेरिका और बिट्रेन दोनों से तुरन्त वायुयानों से भरकर शस्त्रास्त्र भेजे। इसके तुरन्त बाद अमेरिकी इंजीनियर्स भी भारत आये और उन्होने श्री नगर लेह सडके बनायी और लेह हवाई पट्टी को हवाई युद्ध के योग्य बनाया भारत ने 500,000,000 डालर्स के मूल्य की

सैनिक सहायता अमेरिका से मॉगी। जिसका उपयोग अगले पॉच वर्शो की अवधि तक किया जाता। राष्ट्रपति कैनेडी ने तो इस अनुरोध को शीघ्र ही स्वीकार कर लिया, किन्तु पेंन्टागन और विदेश विभाग ने इसे एक जटिल समस्या के रूप में प्रस्तुत किया। क्यों कि उन्होने डलेस के समय तर्को को इस सहायता पर लागू करने का प्रयास किया। मार्च1963 में बीजू पटनायक ने इस सम्बन्ध में अमरीका की यात्रा की। अपनी दो सप्ताह की अमरीकी यात्रा में बीजू पटनायक ने अमेरिका के राज्य विभाग तथा प्रतिरक्षा विभाग के अधिकारियों के साथ वार्ताऐं की।

अप्रैल 1963 में बाल्टर रोस्टोव जो कि विदेश विभाग में शीर्शस्थ परामर्श दाता थे। एवं राष्ट्रपति कैनेडी के व्यक्तिगत परामर्शदाता भी थे। ने भारत के विदेश मंत्री यशवंत वी चव्हाण के साथ भारत की तत्कालिक प्रतिरक्षा आवश्यकताओं पर बातचीत की। भारत की आवश्यकताओं का अन्तिम ऑकलन करने के लिये अमेरिका के विदेश विभाग के सचिव डीन रस्क भी भारत आये।

इन यात्राओं से भारत को दीर्घकालीन सहायताऐं मिलने की आषाऐं बधीं। परन्तु व्यवहार में वे अपेक्षाऐं मात्र ही सिद्ध हुई। नवम्बर 1963 में भारत में अमेरिका के राजदूत चेस्टर बाऊल्स, नेहरू जी ने अनुरोध पर भारत सरकार का एक आरम्भिक प्रस्ताव लेकर वासिंगटन गये। पश्चिमी राष्ट्रों से मिलने वाली सैनिक सहायता सशर्त थी जैसा कि थोडा आगे चलकर देखेंगे चीन के आक्रमण और अमेरिका द्वारा भारत को सैनिक सहायता देने के कदम में नई दिल्ली और वासिंगटन को ऐसी परिस्थिति में डाल दिया था कि उन्हें कई दृष्टिकोणों से विचार करने की आवश्यकता पडी जो कारण उनके निर्णयों का आधार बने वे निम्न लिखित थे:—

1—पश्चिमी राष्ट्रों द्वारा यह अपेक्षा थी कि भारत साम्यवाद के परिसीमन के लिये उनकी रणनीति का एक हिस्सा बनेगा तथा सोवियत संघ के साथ अपने सम्बन्धों को अधिक महत्व नही देगा।

2—अमेरिका को यह आषंका थी कि पाकिस्तान भारत को सैनिक सहायता देने का घोर विरोध करेगा। और यह तर्क देगा कि भारत को दी जाने वाली सहायता का प्रयोग चीन के विरूद्ध ने होकर उसके विरूद्ध होगा। यह आषंका निराधार सावित हुई। और वस्तुतः पाकिस्तान ने ऐसा ही किया वासिंगटन अपने सहयोगी पाकिस्तान विरोध की पूर्णरूप से अपेक्षा नही कर सकते।

3–पश्चिमी राष्ट्रों में यह एक पक्का विश्वास था कि भारत व पाकिस्तान अपने पुराने झगडों को जब तक सुलझा नही लेते तब तक पाकिस्तान चीन के प्रभाव में आने से नही बच सकता है।

3. दितान्त और भारत अमेरिका सम्बन्धः–

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के बदलते समीकरण में सोवियत संघ अमरीकी सम्बन्धों में 1962 के क्यूबा संकट के उपरान्त एक नया मोड आया। शीत युद्ध के वैमनस्य पूर्ण सम्बन्ध सौमनस्य और मधुर मिलन की दिशा में बढने लगे। परिवर्तित अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक परिस्थितियों में तनाव वैमनस्य मनोमालिन्य प्रतिस्पर्धा और अविश्वास के सम्बन्ध तनाव शैथिल्य,मित्रता, सामंजस्य, शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व और परस्पर विश्वास में परिवर्तन होने लगे। शीत युद्ध के नकारात्मक सम्बन्ध आपसी मेंत्री पूर्ण सहयोग की ओर उन्मुख होने लगे। अमरीका और सोवियत संघ के सम्बन्धों में इस नवीन परिवर्तन को तनाव शैथिल्य या दितान्त के नाम से जाना जाता है। 1962 के बाद अमरीका और सोवियत संघ के नेताओं के दृष्टिकोणों में व्यापक परिवर्तन आया। ख्रुश्चेव और जान कैनेडी जैसे नेतओं ने अपने–2 देशों के लोगों को मानसिक रूप से यह समझाने की प्रक्रिया प्रारम्भ की कि शीत युद्ध से कोई लाभ नही होता और शीत युद्ध को जारी रखना उसके राष्ट्रीय हितों के लिये घातक है। शीत युद्ध में कमी लाना और महाशक्तियों में मधुर सम्बन्ध स्थापित कर उनके राष्ट्रीय हितों के संरक्षण के लिये अपरिहार्य है। 1955 में दो ऐसी समझौता वादी उपलब्धियॉ उनके लिये ऐसा आदर्श थी जिन्होंने तनाव शैथिल्य का सूत्रपात किया था एक थी आस्ट्रिया के साथ शान्ति सन्धि करने में सोवियत संघ अमरीका ने आपसी विचार विमर्श से कार्य किया और दूसरा संयुक्त राष्ट्र संघ में नये सदस्यों के प्रवेश के सम्बन्ध मे पैकेज डील समझौता। ये दोनो मामले थें जिससे दोनों महाशक्तियों को यह बात समझते देर न लगी कि तनाव शैथिल्य के आपसी सम्बन्ध ही उनके लिये लाभ पूर्ण है।

महाशक्तियों का व्यवहार–दितान्त की प्रगतिः–

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के विद्धानों का मत है। कि शीत युद्ध के उन्नायकों में स्टालिन और ट्रूमैन प्रधान थे। तो दितान्त या सोवियत अमेरिकी मैत्री के सूत्रधार कैनेडी और ख्रुश्चेव थे। लेकिन उनके अचानक सत्ता से हटने के कारण दितान्त की प्रगति धीमी हो गयी अतः

दितान्त सम्बन्धों को नये सिरे से प्रारम्भ करके अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में मोड लाने का श्रेय अमरीकी राष्ट्रपति रिचार्ड निक्सन तथा सोवियत राष्ट्रपति लियोनिद ब्रेझनेव को है। आगे चलकर सोवियत नेता मिखाइल गोर्वाच्योव "ग्लेस्नोट" और 'पेरेस्ट्राइका' की नीति के माध्यम से दितान्त के सम्बन्धो को नया मोड देने में सफल हुये जिसकी परिणति शीतयुद्ध के अन्त में हुई। महाशक्तियों के दितान्त व्यवहार की प्रगति को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है।

1—दितान्त का निष्क्रीय काल(1953—1969):—

शीतयुद्ध के साथ—2 महाशक्तियों का व्यवहार अदृश्य रूप से स्टालिन की मृत्यु के बाद ही परिवर्तित दिखाई देने लगा था सर्वप्रथम 1953 में कोरिया युद्ध की समाप्ति हुई जब कि इससे पूर्व कोरिया में शान्ति स्थापित करने के भारतीय सुझाव को स्टालिन के रूप में ठुकरा दिया।"वास्तविकता यह थी कि कोरिया की स्थिति से स्टालिन पूर्णतया सन्तुश्ट था। यह उस प्रकार की स्थिति थी। जिसमें वह आनन्द लेता था। हजारों अमेरिकी चीनी और कोरियाई मर रहे थें। लेकिन किसी रूसी पर संकट नही आया था।" स्टालिन की मृत्यु के बाद सोवियत नेताओं ने विशाल हृदय दिखाकर भारतीय सुझावों को स्वीकार कर लिया।जिससे जून 1953 में कोरिया युद्ध बन्द हुआ।

फिर भी यह काल दितान्त सम्बन्धों की दृष्टि से निश्क्रीय काल ही कहा जा सकता है। चूकि इस काल में यू—2 विमान (1960) क्यूवा संकट (1962) जैसी घटनाओ ने शीतयुद्ध की चिनगारी में घी देने का काम किया फिर भी क्यूवा संकट के बाद दोनो ही महाशक्तियों को नेताओं को महसूस हो गया था कि बिना एक निर्णायक महायुद्ध के दूसरे गुट का दमन सम्भव नही हैं तब यदि ऐसा कोई युद्ध हुआ तो विश्व का सर्वनाष निश्चित है। इस अनुभूति ने दोनों ही पक्षों को सह अस्तित्व की अनिवार्यता में विश्वास दिला दिया।

दितान्त का सक्रिय काल (1970—89)तक:—

20 जनवरी 1969 को रिचर्ड निक्सन अमरीका के राष्ट्रपति बने। राष्ट्रपति बनने के बाद निक्सन ने अपने उद्घाटन भाषण में विश्व शान्ति की स्थापना के लिये अन्य देशों के साथ सहयोग करने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने स्पष्ट किया कि"हम प्रत्येक को अपना मित्र बनाने की आषा नही कर सकते। किन्तु यह प्रयत्न कर सकते है। कि कोई हमारा शत्रु न बने "
निक्सन ने शान्तिपूर्ण प्रतियोगिता और साझेदारी के सिद्धान्त पर जोर देते हुये कहा कि "हम साम्यवादी विश्व का अमरीका के साथ एक शान्तिपूर्ण प्रतियोगिता के लिये आवाहन करते हैं—

यह प्रतियोगिता प्रदेशों की विजय अथवा स्वामित्व के विस्तार के लिये नही अपितु मनुष्य के जीवन को अधिक सम्पन्न बनाने के लिये होगी।" निक्सन प्रसासन ने साम्यवादी विश्व की प्रति अमरीका की नीति को एक नई दिशा प्रदान की। इसी का परिणाम था कि सोवियत संघ–अमरीकी दितान्त सम्बन्धो में सक्रियता आ गयी।

दितान्त के सक्रीय काल तथा दितान्त के निश्क्रिय काल में भारत ने गुट निरपेक्ष धर्म का पालन करते हुये दोनो महाषक्तियों से समान दूरी बनाये रखते हुये दोनों क मध्य सेतु बन्ध का कार्य किया।

4. भारत चीन संघर्ष और भारत अमेरिका सम्बन्धः–

जब भारत चीन युद्ध शुरू हुआ तो देश के कई भागों में इस बात की मॉग होने लगी कि असंलग्नता की नीति पूर्णतयः असफल हो चुकी है और देश के हित में इसका जल्द से जल्द परित्याग किया जाना चाहिए। परन्तु 20 अक्टूबर 1962 को रेडियो से राष्ट्र के नाम सन्देश देते हुये प0 जवाहर लाल नेहरू ने स्पष्ट कर दिया कि भारत अपनी असंलग्नता की नीति का अनुशरण करता रहेगा इसके बाद चीन तथा भारत का युद्ध जारी रहा तथा नेफा में भारतीय सेना की पराजय हुई। युद्ध की स्थिति अत्यन्त गम्भीर हो गयी और भारत की सुरक्षा अत्यन्त खतरे में पड गयी। इस हालत में भारत सरकार ने पश्चिमी राष्ट्रों से सैनिक सहायता के लिये अपील की। अमरीका और बिट्रेन ने भारत को सहायता देने का निर्णय किया और इन देशों से बडी मात्रा में शस्त्रास्त्र भारत पहुॅचाये गये। नेहरू मानते थे कि असंलग्नता की नीति को छोडकर अमरीकी गुट में शामिल हो जाने के फलस्वरूप भारत चीन सीमा संघर्ष सीत युद्ध का एक अंग बन जाता। नेहरू ने व्यवहार वादी दृष्टिकोण अपनाते हुये निर्णय लिया कि भारत अपनी रक्षा के लिये सभी मित्र राष्ट्रों से सहायता लेगा। लेकिन असंलग्नता की नीति का परित्याग नही करेगा।

स्वतंत्रता के बाद भारत और चीन सम्बन्धो की कहानी भारतीय नेताओ की आदर्शवादिता, स्वप्नदर्शिता और अदूरदर्शिता तथा चीनी विश्वासघात की कहानी है। भारत की चीन सम्बन्धों नीति निम्नलिखित तथ्यों पर आधारित रही। प्रथम यह विश्वास था कि प्राचीन काल से ही भारत और चीन के मध्य घनिष्ट सांस्कृतिक एवं व्यापारिक सम्बन्ध विद्यमान थे। बौद्ध धर्म की जन्म भूमि भारत, चीन का एक प्रकार से धर्मगुरू है और चीन उसका सम्मान करेगा। दूसरे चीन को अपनी स्वतंत्रता और अखण्डता की रक्षा के लिये पाश्चात्य और जापानी

सम्राज्यबाद के विरूद्ध एक भीषण और दीर्घ कालीन संघर्ष करना पडा था। इससे भारत में उसके प्रति गहरी सहानुभूति उत्पन्न हो गयी थी। तीसरे यह माना जाता था कि चीन ने भारत पर कभी आक्रमण नही किया है और न ही करेगा। और वह कभी आक्रमण करना भी चाहेगा तो उत्तर के दुर्गम हिमालय पर्वत उसे कभी ऐसा नही करने देगा। चौथे भारतीय विदेश नीति के प्रधान पं0 नेहरू और उनके विश्वस्त परामर्श दाता रक्षा मंत्री कृष्ण मैनन चीन, विशेशतया साम्यवादी चीन के प्रति गहरी सहानुभूति रखते थे और चीन के साथ मेंत्री को असंलग्नता की नीति की आधार शिला मानते थे।

1 जनवरी 1979 को अमेरिका ने चीन को मान्यता देने की घोषणा की जिसमें एक चीन के स्वरूप को मानते हुये मान्यता दी गई थी। इसमें यह स्वीकार किया गया था कि ताईवान चीन का ही भाग है।इस वर्ष 1979 में चीन के उप प्रधानमंत्री तेंग सियाओ पिंग ने अमरीका की यात्रा की। इस यात्रा के दौरान चीन अमरीका में वैज्ञानिक सहयोग सास्कृतिक समझौते करते हुये सम्बन्ध स्थापित किये गये। इसके बाद अमरीका ने चीन को सर्वाधिक शक्तिशाली राष्ट्र का दर्जा देने का अनुमोदन भी किया था।

दिसम्बर 1979 में जब रूसी सेनाऐं अफगानिस्तान में उपस्थित हुई तो इसका प्रभाव चीन–अमरीका सम्बन्धो पर भी पडा था। दोनो ही इससे काफी नजदीक आये। इसी के साथ ईरान–ईराक युद्ध 1980 शुरू हो जाने से चीन की विदेश नीति को काफी अति पहॅुची थी। इस घटना से प्रभावित होकर चीन और अमरीका ने रूसी साम्यवाद के प्रसार को रोकने के लिये वर्ष 1981 में पीकिंग में समझौता किया गया। जिसमें दोनो की सुरक्षा करने वैसे चीन अमरीका के बीच सम्बन्धो की शुरूआत 1971 में सम्पन्न हुये पिंग कोंग(पॉच सूत्रीय) समझौते के माध्यम से सम्बन्धों की शुरूआत हुई थी। जिसमें पॉच मुख्य बातें इस प्रकार थी:–

1– चीन अमरीका के बीच व्यापार को बढाना।

2– चीन अमरीका में निर्यात को बढाना।

3– चीन अमरीका के बीच यात्रियों का आदान–प्रदान।

4– चीन को अमरीकी डालर की सुविधा उपलब्ध करना।

5– एक दूसरे का सहयोग करना।

अमरीकी राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन 20 जनवरी 1980 को अमरीका के राष्ट्रपति बने इन्होने द्वितीय शीतयुद्ध के दौरान ''स्टार वार्स'' का कार्यक्रम साथ लाकर रूस के साथ तनाव में बृद्धि

की गयी थी।इस कारण भी चीन अमरीका सम्बन्धों में निकटता आयी थी। अमेरिका ने एन0पी0टी0 व सी0टी0बी0टी0 सन्धि को लागू करने की नीति अपनायी। इसमें चीन ने भी सहयोग दिया। मई 1995 में एन0पी0टी0 सन्धि की अवधि अनिश्चित कालीन अवधि के लिये बढा दिये जाने के बाद जून 1996 में चीन ने N.P.T व C.T.B.T सन्धि की पुष्टि करके आणविक परीक्षणों पर एक तरफ स्वेच्छा से प्रतिबन्ध लगा दिया इस परिधि में भारत को भी लाया गया।

अमेरिका के राष्ट्रपति विलक्लिंटन की चीन यात्रा 25 जून 1998 से नौ दिवसीय सम्पन्न की गई। यह यात्रा चीन अमरीका गठबन्धन करने के उददेश्य से भी की गयी थी। अमरीका ने भारत से निम्न अपेक्षाऐं चाहता है। भारत–पाक परमाणु कार्यक्रम बन्द कर दें। भारत व पाक N.P.T व C.T.B.T पर बिना शर्त हस्ताक्षर करे भारत–पाक के मामलों में चीन मध्यस्थता करें। इसी तरह चीन का मानना है। कि दक्षिणी एशिया में भारत ने संकट उपस्थित किया है।

क्लिंटन की चीन यात्रा के दौरान निम्न मुददे् पर बातचीन हुई।

1– भारत पाक की परमाणु परीक्षणों से उपस्थिति स्थिति पर चर्चा।

2– कश्मीर समस्या पर चर्चा।

3– मानवाधिकार क्षेत्रीय सुरक्षा पर चर्चा।

4– परमाणु और प्रक्षेपास्त्र अप्रसार पर चर्चा।

5– ईरान–लीविया को चीन द्वारा प्रक्षेपास्त्र सहायता न देने पर विचार।

6– विश्व व्यापार संगठन में चीन के शामिल होने पर विचार।

7– नि:शस्त्रीकरण।

8– तिब्बत ताईबान पर विचार।

9– दक्षिणी एशिया के मुद्रा संकट पर विचार।

इस यात्रा के दौरान संयुक्त विज्ञप्ति जारी की गयी जो इस प्रकार है:–

1– अमेरिका चीन ने मिलकर भारत पाक से कहा कि परमाणु परीक्षण के बाद परमाणु हथियारों की तैनातगी एक दूसरे के खिलाफ न करने का समझौता कर लेते है तो उन्हें शस्त्रीकरण न करने, परमाणु हथियार और प्रक्षेपास्त्र तैनात न करने का द्रढ़ संकल्प करें।

2– दोनों नेताओं ने नई दिल्ली और इस्लामा से कहा कि वे आगे परमाणु परीक्षण नही करें। तुरन्त बिना शर्त व्यापक परमाणु परीक्षण सन्धि पर हस्ताक्षर करें।

3— भारत—पाक को परमाणु शक्ति का दर्जा देने से इन्कार किया गया।

4— भारत—पाक को प्रक्षेपास्त्र, प्रक्षेपास्त्र उपकरण या ऐसी सामग्री जिससे परमाणु अस्त्र ले जा सके वे नही देने का निश्चय किया गया।

चीनी अमरीकी गठबन्धनः— इस सम्बन्ध में निम्न बिन्दु हैः—

1— चीन व अमरीका ने मिलकर भारत—पाक को परमाणु परीक्षणों से रोकने के लिये दवाब डालने की रणनीति तैयार की।

2— क्लिंटन ने कहा कि दक्षिण एशिया में हथियारों की होड शुरू करने में भारत—पाक का हाथ है।

3— क्लिंटन का मानना है। कि घातक हथियार अगर गलत लोगों के हाथों में चले गये तो मानव जाति के लिये खतरा उत्पन्न कर सकते है।

4— मानवाधिकारों को लागू करने के लिये दोनो देशों में वचन बद्धता थी।

इस तरह चीन अमरीका गठबन्धन के बारे में क्लिंटन ने कहा कि जिस तरह से विश्व में परिवर्तन हो रहे है। और नई पीढी को जिस तरह चुनौतियों का सामना करना पडेगा। उससे यह पता चलता है कि इन देशो की भलाई एक साथ मिलकर काम करने में ही है। न कि अलग—अलग रहने में" इसी तरह अमेरिका ने चीन पर प्रतिबन्ध लगाने के लिये जापान से भी सुरक्षा सन्धि कर रखी है। इससे अमरीका चीन के प्रति दोहरी नीति रखता है।

5. भारत—पाक संघर्ष और भारत अमरीका सम्बन्धः—

भारत—पाक संघर्ष की प्रकृति को सही रूप से समझने के लिये भारत विभाजन में निहित तथ्यों का वस्तु निश्ठ अध्ययन अपरिहार्य है। विभाजन की घटना ने दो समुदायों के बीच घृणा अविश्वास और वैमनस्य को क्रूरतम ढंग से उजागर किया है। विभाजन के बाद सभी समस्याओं के स्वतः ही सुलझ जाने का सपना देखने वालों ने जब वास्तविकता पर नजर दौड़ाई तो उन्हें घोर निराशा हुई। पाकिस्तान के जन्म से समस्यॉऐं सुलझाने की अपेक्षा उलझ गयी और इस महाद्वीप में नये सघर्ष का सूत्रपात हुआ जो अपनी प्रकृति से कहीं अधिक गहरा और पेचीदा था। कुल्दीप नैयर के शब्दों में"विभाजन के लिये आप किसी को भी दोशी ठहरायें। वास्तविकता यह हैं कि इस पागलपन ने दो समुदायों और दो देशों के बीच दो पीढीयो से भी अधिक समय तक के लिये सम्बन्धो में कड़वाहट उत्पन्न कर दी। दोनों देशों मे हर विषय और हर कदम पर मतभेद बढ़ता गया और छोटी से छोटी बात ने बडे विवाद का

रूप धारण कर लिया'' माईकल ब्रेशर ने ठीक ही लिखा है ''भारत और पाकिस्तान हमेशा अघोषित युद्ध की स्थिति में रहे है।'' भारत पाक सम्बन्धों की चर्चा करते हुये पं0नेहरू ने भारतीय संसद में स्पष्ट कहा कि ''लोगों मे यह भ्रान्तिपूर्ण धारणा है। कि कश्मीर विवाद ही दोनों देशों क संघर्ष का कारण है।

हमारी मूलभूत विचार धारा ही भिन्न है। हम धर्म निरपेक्षता वाद में विश्वास करते है। किन्तु पाकिस्तान इस्लामबाद और द्विराष्ट्र सिद्धान्त में विश्वास करता है। इस सिद्धान्त के अनुसार कश्मीर में मुसलमानो का बहुमत पाकिस्तान के लिये एक असहनीय तथ्य है। भारत के प्रति शत्रुता का विचार पाकिस्तान की धार्मिक राजनीति का एक अनिवार्य अंग बन गया है।

भारत–पाक युद्ध 1965:–

अप्रैल 1965 में कच्छ के रन को लेकर भारत और पाकिस्तान के बीच संघर्ष हो गया। पाकिस्तानी सेना की दो टुकडियॉ भारतीय क्षेत्र में आ घुसीं और कच्छ के कई भागों पर अधिकार कर लिया। कच्छ के रन में उत्पात के साथ–2 पाकिस्तान ने कश्मीर में भी घुसपैठ प्रारम्भ कर दी थी। यह घुसपैठ पूर्णयोजना बद्ध थी। चीन की सहायता से हजारों पाकिस्तानी सैनिकों को छापामार युद्ध में प्रशिक्षित किया गया था। योजना के अनुसार छापामार दस्ता शस्त्रों से सज्जित होकर असैनिक वेश में कश्मीर में घुसने वाला था। कश्मीर में वास्तविक रूप से उपद्रव एवं तोड़फोड़ द्वारा ऐसी स्थिति उत्पन्न करने की योजना थी जिससे भारतीय सेना को कश्मीर से भागना पड़ा। पाकिस्तान का विश्वास था कश्मीर की जनता छापामारों का साथ देगी। किन्तु यह विश्वास अन्त में असत्य प्रमाणित हुआ। 4 व 5 अगस्त 1965 को हजारो पाकिस्तानी छापामार सैनिक कश्मीर में घुस आये। पाकिस्तानी घुसपैठ को सदैव के लिये रोकने के विचार से भारत सरकार ने उन स्थानों पर अधिकार करने का निर्णय किया जहॉ से होकर पाकिस्तानी घुसपैठिये कश्मीर के भारतीय हिस्से में आते थे। इसी बीच पाकिस्तान की नियमित सेना ने अन्तराष्ट्रीय सीमा रेखा को पार करके भारतीय भू–भाग पर आक्रमण कर दियां। और पूर्ण रूप से युद्ध प्रारम्भ हो गया। 4 सितम्बर 1965 को सुरक्षा परिशद ने एक प्रस्ताव पास कर भारत और पाकिस्तान दोनों से अपील की कि वे युद्ध विराम करें। 22 सितम्बर 1965 को दोनो देशो में युद्ध बन्द हो गया। भारत को युद्ध में 750 वर्ग मील भूमि मिली। जब कि पाकिस्तान को 210 वर्ग मील भूमि मिली। यह युद्ध भारत–पाकिस्तान के कटु सम्बन्धों की अन्तिम परिणति थी।

ताशकन्द समझौता:–

सोवियत प्रधानमंत्री ने पाकिस्तान के राष्ट्रपति अय्यूब खॉ और भारत के प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री को वार्ता के लिये ताशकन्द में आमंत्रित किया। 14 जनवरी 1966 को प्रसिद्ध सम्मेलन प्रारम्भ हुआ और सोवियत संघ के प्रयत्नों के फलस्वरूप 10 जनवरी 1966 को प्रसिद्ध ताशकन्द समझौते पर हस्ताक्षर हुये।

भारत–पाक युद्ध 1971 तथा शिमला समझौता:–

पूर्वी पाकिस्तान(बंगलादेश) में असन्तोष बढता जा रहा था। शेखमुजीब के नेतृत्व में बंगलादेश में स्वायत्तता का आन्दोलन प्रारम्भ हो गया। पूर्वी पाकिस्तान पूर्णतः मुजीब के साथ–साथ याह्या खॉ ने बंगालियों पर अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये। पूर्वी बंगाल के घोर अत्याचारों से घबराकर वंगाली घरवार, सामान छोड जान बचाने हेतु भारत की सीमा मे प्रवेश करने लगे।10 हजार शरणार्थी प्रतिदिन भारत आने लगे। शरणार्थियों की संख्या भारत में एक लाख तक पहुॅच गयी। इसी समय 2 दिसम्बर 1971 को पाकिस्तानी वायुयानों ने भारत के हवाई अड्डों पर भीषण बमबारी कर दी। 4 दिसम्बर 1971 को भारतीय सेना ने जबावी हमला किया भारत के विमानो ने पाकिस्तान के महत्वपूर्ण हवाई अड्डों पर बम वर्षा की। 16 दिसम्बर 1971 को ढाका में एक सैनिक समारोह में जनरल निया जी ने भारत के ले. जनरल जगंजीत सिंह अरोरा के सम्मुख आत्म समर्पण कर दिया। उनके साथ 93 हजार सैनिकों ने भी हथियार डाल दियें। और उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। बंगला देश स्वतंत्र हो गया तथा भारत ने एक तरफा युद्ध विराम कर दिया भारत ने इस युद्ध में पाकिस्तान की 6 हजार वर्ग मील भूमि पर अधिकार कर लिया। पाकिस्तान ने जनरल याहृव खॉ के स्थान पर सत्ता जुल्फीकार अली भुटट्ो के हाथ में आ गयी। भुट्टो और श्री मती गान्धी में पत्र व्यवहार हुआ और 28 जून 1972 को शिमला में दोनो देशों के मध्य वार्ता होना तय हुआ। 3 जुलाई 1972 को दोनों देशों के बीच एक समझौता हो गया। इस समझौते के निम्न लिखित मुख्य उपबन्ध थे।

1–दोनों सरकारों ने यह निश्चय किया कि दोनों देश परस्पर संघर्ष को समाप्त करते है। जिससे दोनों देशों में विगाड उत्पन्न हुआ था।

2–दोनों ही सरकारें अपनी ही सामर्थ के अनुसार एक दूसरे के प्रति घ्रणित प्रचार नहीं करेगीं।

3–आपसी सम्बन्धों में समानता लाने की दृष्टि से **(क)** दोनों राष्ट्रों के बीच डाक–तार सेवा,जल,थल,वायुमार्गो द्वारा पुनः संचार व्यवस्था स्थापित की जाएगी। **(ख)** एक दूसरे देश के नागरिक और निकट आयें इसलिये नागरिकों को आने जाने की सुविधाऐं दी जाऐगीं। **(ग)** जहॉ तक सम्भव हो सके व्यापारिक एवं आर्थिक मामलों में सहयोग का सिलसिला जल्द से जल्द शुरू होगा।**(घ)** विज्ञान एवं सास्कृतिक क्षेत्रों में आदान–प्रदान बढाया जायेगा।

4–स्थाई शान्ति कायम करने की प्रक्रिया का सिलसिला आरम्भ करने के लिये दोनों सरकारें सहमत है। कि **(क)**भारत और पाकिस्तान की सेनाऐं अपनी अन्तर्राष्ट्रीय सीमा में लौट जायेगी। **(ख)**दोनों देश बिना एक दूसरे की स्थिति को क्षति पहुॅचाये जम्बू कश्मीर में 17 दिसम्बर 1971 को हुये एक युद्ध विराम के फलस्वरूप नियंत्रण रेखा को मान्य रखेंगें। **(ग)** सेनाओं की वापसी इस समझौते के 30 दिन के भीतर पूरी हो जायेगी।

5–शिमला समझौते के क्रियान्वयन के लिये दोनों देशों के शासनाध्यक्ष परस्पर मिलते रहेंगें।

भारत–पाक सम्बन्ध रिश्तों को सुधारने के प्रयत्नः–

भारत पाक सम्बन्धों को सामान्य बनाने के प्रयत्न भी किये जाते रहे है। ताशकन्द समझौता तथा शिमला समझौता कुछ इसी प्रकार के प्रयत्न थे। 1974 में जो त्रिपक्षीय समझौता हुआ। उससे युद्धबन्दियों की समस्या का समाधान हुआ। नवम्बर 1974 में दोनों देशों में डाक,तार, यात्रा आदि विषयों के बारे में समझौता हुआ। नबम्वर 1974 में व्यापार समझौता हुआ। 1976 में दोनो देशों ने कूटिनीतिक सम्बन्धों को पुनः स्थापित करने का निश्चय किया। 14 अप्रैल 1978 को सलाल जल विद्युत परियोजना के सम्बन्ध में भारत और पाकिस्तान में एक सन्धि हुई जो सलाल जल सन्धि के नाम से प्रसिद्ध है। जब 1979 में पाकिस्तान ने सेंश्टो की सदस्यता त्याग दी तो उसे सितम्बर 1979 में हवाना शिखर सम्मेलन में गुट निरपेक्ष आन्दोलन की सदस्यता प्रदान कर दी गई और भारत ने उसका विरोध नही किया।17 दिसम्बर 1985 को प्रधान मंन्त्री राजीव गान्धी और राष्ट्रपति जिया उल हक के मध्य एक छः सूत्री समझौता हुआ जिसमे तय किया गया कि वे एक दूसरे के परमाणु ठिकानों पर हमला नहीं करेगें। 10 जनवरी 1986 को भारत और पाकिस्तान के आपसी आर्थिक सम्बन्धों में एक नये युग की शुरूआत हुई दोनों देशो के बीच मुक्त व्यापार पुनः शुरू करने के अलावा सार्वजनिक क्षेत्र के व्यापार को दुगना करने दोनों देशो के बीच सीधी डायल सेवा शुरू करने व वायु सेवा सुविधा बढाने पर सहमत हुई।

भारत–पाक सम्बन्ध वर्तमान स्थिति:–

कुलदीप नैय्यर के अनुसार ''आज भी भारत और पाकिस्तान दूर के पडोसी है''। पाकिस्तानी प्रेस भारत विरोधी प्रचार में निरन्तर लगा रहता है। द्विपक्षीय मुदद्दों को पाकिस्तान अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर उछालता रहता है। और अमरीका से सैनिक सामान घातक एफ 16 विमान हार्पून नामक जहाज आदि खरीद रहा है। इन दिनों लद्दाख क्षेत्रमें सियाचिन ग्लेशियर को लेकर चलने वाला संघर्ष भी दोनों ओर कटुता को ही बढावा दे रहा है। पिछले पॉच छः वर्शों में इस विवाद को लेकर दोनों देशों की सेनाओं के बीच कोई छोटी बडी झडपें हो चुकीं है। भारत में अस्थिरता पैदा करने के लिये पाकिस्तान सिख तथा जम्मू कश्मीर के आतंक वादियों को प्रेरणा, सहायता, और प्रशिक्षण दे रहा है। नबम्वर 1986 में पाकिस्तान ने सैनिक अभ्यास के बहाने भारत से लगी सीमा पर भारी संख्या में सेना तैनात कर दी थी। इसके परिणाम स्वरूप दोनों देशों में तनाव के हाल पैदा हो गये। सौभाग्य से दोनों देशो के बिदेश सचिवो के मध्य 5 दिन की बात चीत के बाद 4 जनवरी 1987 को एक समझौता हो गया और युद्ध का खतरा टल गया। पाकिस्तान द्वारा एटम बम बनाने का प्रयत्न भारतीय महाद्वीप में शान्ति और सुरक्षा के लिये एक नया खतरा उपस्थित कर रहा।

संक्षेप में दोनों देश आज भी एक दूसरे को अविश्वास की दृष्टि से देखते है। पाकिस्तान अपनी सैनिक शक्ति निरन्तर बढाता जा रहा है। जिससे भारत का परेशान होना स्वाभाविक है। गहन अविश्वास और परस्पर संन्देह के कारण भारत–पाक सम्बन्धों में भीषण कटुता आ गई है। पाकिस्तान से मैत्री पूर्ण सम्बन्ध बनाने के हर प्रयास का स्वागत किया जाना चाहिए। और चीन तथा पाकिस्तान में से पाकिस्तान को ही प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

6. कश्मीर की समस्या और भारत अमेरिका सम्बन्ध:–

कश्मीर की समस्या दोनों देशों के बीच एक ऐसे ज्वालामुखी की तरह है। जो समय–2 पर लावा उगलती रहती है। अलाप माइकल के शब्दों में''कश्मीर समस्या अनिवार्यता भूमि या पानी की समस्या नहीं यह लोगों और प्रतिष्ठा की समस्या है।''

कश्मीर की समस्या भारत और पाकिस्तान के बीच सबसे उलझी हुई समस्या हैं। स्वतंत्रता के बाद जहॉ भारत और पाकिस्तान दो नये राज्य बने वहॉ देशी रियासतों एक प्रकार से स्वतंत्र हो गयी। ब्रिटिश सरकार ने घोषणा कर दी थी कि देशी रियासतें अपनी इच्छानुसार

भारत और पाकिस्तान में विलय हो सकती हैं अधिंकाशं रियासतें भारत अथवा पाकिस्तान में मिल गयी और उनकी कोइ समस्या उत्पन्न नहीं हुई भारत के लिये हैदराबाद और जूनागढ ने अवश्य समस्या उत्पन्न कर दी थी। परन्तु वह शीघ्र ही हल कर ली गई। कश्मीर की स्थिति कुछ विशेश प्रकार की थी। भारत की उत्तर पश्चिमी सीमा पर स्थित वह राज्य भारत और पाकिस्तान दोनों को जोडता है। यहॉ की जनसंख्या का बहुसंख्यक भाग मुस्लिम धर्मो था परन्तु यहॉ का आनुवांशिक शासक एक हिन्दू राजा था। अगस्त 1947 में कश्मीर के शासक ने अपने विलय के विषय में कोई तत्कालिक निर्णय नहीं लिया। पाकिस्तान इसे अपने साथ मिलाना चाहता था। 22 अक्टूबर 1947 को उत्तर पश्चिम सीमा प्रान्त के कवायलियों ने एवं अनेक पाकिस्तानियों ने कश्मीर पर आक्रमण कर दिया। पाकिंस्तान ने अपनी सीमा पर भी अपने सैनिकों का जमाव कर लिया। 4 दिनों के भीतर ही हमलावर आक्रमण कारी श्री नगर से 25 मील दूर बारामूला तक जा पहुँचे। 26 अक्टूबर को कश्मीर के शासक ने आक्रमण कारियों से अपने राज्य को बचाने के लिये भारत सरकार से सैनिक सहायता की मॉग की और साथ ही कश्मीर को भारत में सम्मलित करने की प्रार्थना की। भारत सरकार ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। 27 अक्टूबर को भारतीय सेनाऐं कश्मीर भेज दी गई तथा युद्ध समाप्ति पर जनमत संग्रह की शर्त के साथ कश्मीर को भारत का अंग मान लिया गया।

भारत द्वारा कश्मीर की सुरक्षा के निर्णय के कारण और उधर पाकिस्तान द्वारा आक्रमणकारियों को सहायता देने की नीति के कारण कश्मीर दोनो राष्ट्रों के बीच युद्ध का क्षेत्र बन गया।प्रारम्भ में भारत सरकार ने पाकिस्तान सरकार से प्रार्थना की कि कवायलियों का मार्ग बन्द कर दें। जब इस बात के प्रमाण मिलने लगे। कि पाकिंस्तान की सरकार स्वयं इन कवायलियों की सहायता कर रही है। तो 1 जनवरी 1948 को भारत सरकार ने सुरक्षा परिशद में यह शिकायत की कि पाकिस्तान से सहायता प्राप्त करके कवायलियो ने भारत के एक अंग कश्मीर पर आक्रमण कर दिया है। जिससे अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा को खतरा है।दूसरी तरफ पाकिस्तान ने आरोप लगाया। कि कश्मीर का भारत में अवैधानिक है। सुरक्षा परिशद ने इस समस्या का समाधान करने के लिये पॉच राष्ट्रों चेकोस्लाविया, अर्जेन्टाइना, अमरीका, कोलम्बिया, और वेल्जियम को सदस्य नियुक्त कर मौके पर स्थिति का अवलोकन करके समझौता कराने के उददे्श्य से संयुक्त राष्ट्र आयोग की नियुक्ति की।

संयुक्त राष्ट्र आयोग के कार्यः—

संयुक्त राज्य आयोग ने तुरन्त अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया और मौके पर स्थिति का अध्ययन कर 13 अगस्त 1948 को दोनों पक्षों से युद्ध बन्द करने और समझौता करने हेतु निम्न आधार प्रस्तुत किये–

1– पाकिस्तान अपनी सेनाएं कश्मीर से हटाने तथा कवायलियो और सामान्य रुप से कश्मीर मे न रहने वाले विदेशियो को भी हटाने का प्रयत्न करे ।

2– सेनाओ द्वारा खाली किये गये प्रदेश का शासन प्रबंध स्थानीय अधिकारी आयोग के निरीक्षण मे करें।

3–जब आयोग भारत को पाकिस्तान द्वारा उपर्युक्त वर्णित शर्तो को पूरा करने की सूचना दे तो भारत भी
समझौते के अनुसार अपनी सेनाओ का अधिकांश भाग वहॉ से हटा ले।

4– अन्तिम समझौता होने तक भारत सरकार युद्व–विराम के अन्दर उतनी ही सेनाए रखे जितनी की इस प्रदेश में कानून और ब्यवस्था बनाये रखने के कार्य मे स्थानीय अधिकारियो को सहायता देने के लिये वांछनीय हो ।

इस सिद्धांत के आधार पर दोनो पक्ष एक लम्बी वार्ता के लिये बाद 1 जनवरी 1949 को युद्ध विराम के लिये सहमत हो गये । कश्मीर के विलय का अन्तिम फैसला जनमत संग्रह के माध्यम से किया जाना था । जनमत संग्रह की शर्तो को पूरा करने के लिये एक अमरीकी नागरिक एडमिरल चेस्टर निमित्ज की प्रशासक नियुक्त किया गया । उन्होने जनमत संग्रह के प्रश्न पर दोनो पक्षो से बात चीत की किन्तु उसका परिणाम नही निकला अन्त में उन्होने अपने पद से त्याग पत्र दिया।

युद्ध–विराम रेखा निर्धारित हो जाने पर पाक के हाथ मे कश्मीर का 32000 वर्ग मील क्षेत्रफल रह गया इसकी जनसंख्या 7 लाख थी। पाकिस्तान ने इसे क्षेत्र को "आजाद कश्मीर" कहा। युद्ध विराम रेखा के इस पार भारत के अधिकार में 53000 वर्ग मील क्षेत्रफल था जिसकी जनसंख्या 33लाख थी।

नेहरू जनमत संग्रह के लिये तैयार थे। संयुक्त राष्ट संघ ने यह शर्त लगा दी कि पाकिस्तान द्वारा हस्तगत क्षेत्र से जब पाकिस्तानी सेना एवं कयावली पूर्णतयाः हट जाएगी। तभी जनमत संग्रह होगा। पाकिस्तान आजाद कश्मीर से अपनी सेनाऐं हटाने के लिये तैयार न था और बिना सेनाऐं हटाये जनमत संग्रह हो नहीं सकता था। पाकिस्तान ने अमरीका से 1954

में सैनिक सन्धि कर ली। वह1955 में बगदाद पैक्ट (सेन्टो) का भी सदस्य हो गया। उसने कुछ अडड्े अमरीका को भी दे दिये। इससे भारत ने खतरा अनुभव किया। भारत का मत था कि पाकिस्तान कश्मीर लेने के लिये अपनी सैनिक शक्ति बढा रहा है। अतः परिवर्तित अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में जवाहर लाल नेहरू ने अपनी कश्मीर नीति में परिवर्तन कर लिया। उन्होने निश्चय कर लिया कि अब कश्मीर में जनमत संग्रह करना सम्भव नहीं है। इसी समय सोवियत संघ का कश्मीर के प्रश्न पर भारत को समर्थन मिल गया। जिससे भारत की स्थिति मजबूत हो गई। उनका भी अन्तर्राष्ट्रीय जगत तथा सुरक्षा परिशद में एक शक्तिशाली मित्र हो गया। 1950 में पं0 नेहरू ने पाकिस्तान से "युद्ध वर्जन सन्धि करने का प्रस्ताव रखा। परन्तु पाकिस्तान ने उसे ठुकरा दिया।

6 जनवरी 1954 को कश्मीर राज्य का विलय भारत में होने की पुष्टि कर दी। भारत सरकार ने एक प्रस्ताव पास कर जम्बू कश्मीर राज्य का विलय भारत में होने की पुष्टि कर दी। भारत सरकार ने भारतीय संविधान में संशोधन कर 14 मई 1954 को अनु0 370 के अर्न्तगत कश्मीर को विशेश दर्जा दे दिया। 26 जनवरी 1957 को जम्बू कश्मीर का सविंधान लागू हो गया। उसके साथ ही जम्बू कश्मीर भारतीय संघ का एक अभिन्न अंग बन गया।

इसके बाद भी पाकिस्तान बार–2 कश्मीर का प्रश्न उठाता रहा। 2 जनवरी 1957 को सुरक्षा परिशद में इस प्रश्न को उठाया गया। बिट्रेन, फ्रॉश, और अमरीका ने सुरक्षा परिशद में पाकिस्तान का समर्थन करते हुये कहा कि कश्मीर में संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में जनमत संग्रह कराया जाए और संयुक्त राष्ट्र संघ की आपात सेना वहाँ भेजी जाय। भारत ने इस प्रस्ताव का घोर विरोध किया भारत के समर्थन में सोवियत संघ ने इस प्रस्ताव पर अपने निशेधाधिकार का प्रयोग किया। भारतीय प्रतिनिधि कृश्णा मैनन ने अपने 7 घंटे 48 मिनट तक के लम्बे ऐतिहासिक भाषण में कहा कि मूल प्रश्न यह नहीं है कि जम्बू कश्मीर में संविधान लागू हो या न हो मूल समस्या यह है। कि जम्बूकश्मीर से पाकिस्तानी सेनाऐं अभी तक क्यों नहीं निकली। 1962 में सुरक्षा परिशद में पाकिस्तान ने कश्मीर में आत्म निर्णय की मॉग दोहरायी। इस प्रस्ताव को सोवियत सघ ने बीटो द्वारा समाप्त कर दिया जब–2 मौका मिलता है। पाकिस्तान कश्मीर के प्रश्न को उठाता रहता है। अप्रैल 1982 में जनरल जिया ने कहा कि कश्मीर एक अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दा है। मार्च 1983 में नई दिल्ली में आयोजित सॉतवे गुट निरपेक्ष सम्मेलन में भी जनरल जिया ने कश्मीर को एक विवादास्पद मुद्दा बताया। सितम्बर 1992 में

गुट निरपेक्ष शिखर सम्मेलन (जकार्ता) के पूर्ण अधिवेशन में पाकिस्तानी प्रधान मंत्री नवाज शरीफ ने कश्मीर का मुद्दा फिर से उठाया। पाक प्रधान मंत्री बेनजीर भुट्टो ने संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार सम्मेलन (जेनेवा 1994) में भारत के विरूद्ध आरोप लगाया कि वह कश्मीर में मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहा है।

वस्तुतः भारत और पाकिस्तान के बीच कश्मीर तनाव का मुख्य कारण है। यह कश्मीर को अब भी एक समस्या मानता है। एक पाकिस्तानी पत्रकार के अनुसार–" हमारी भावनाऐं अब भी कश्मीर के बारे में वैसी ही है। जैसी कि पहले थी। परन्तु एक बार याद रखनी चाहिए। कि हमने 1972 में शिमला सम्मेलन के दौरान भी कश्मीर देना स्वीकार नहीं किया।" भारत का मत था कि पाकिस्तानी कश्मीर तथा अन्य कोई द्विपक्षीय मुद्दा संयुक्त राष्ट्र संघ के मंच से कभी नही उठा सकता। लेकिन पाकिस्तान इस दृष्टिकोण को स्वीकार नही करता।

संदर्भ

1. आषोपा शील के 'राजस्थान पत्रिका' 8 जुलाई 1999, पाकिस्तानी आतंकवाद।
2. राजस्थान की पत्रिका, आव्हान, जुलाई 1999
3. महेश, तालिवान के सन्दर्भ में अमरीकी आपातकाल, राजस्थान पत्रिका 19 जुलाई 1999
4. दैनिक भास्कर, 11 जुलाई 1999, मानवता के लिए खतरा, ओसामा बिन लादेन रस रंग, जयपुर
5. बिन लादेन के खिलाफ फतवा जारी, पंजाब केसरी, 29 जून 1999
6. हिन्दुस्तान, भारत–अमरीका आतंकवाद के मुकाबले पर राजी, 5 सितम्बर 1999 दिल्ली
7. अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद और विश्व सुरक्षा (सं डेविड कार्लटन और कारलोशाफी) में क्रिया एम. जैकिस का लेख, अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादः– संघर्ष का एक नया ढंग, क्रोमहेलम, लन्दन 1975, पृष्ट 13
8. हान्स जे0 मॉर्डोन्जाऊ, राष्ट्रों के मध्य राजनीति पृष्ट 219–92
9. राजस्थान पत्रिका 20–3–1998 पेज 8
10. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार– वार्शिक रिपोर्ट 1998–99 पृष्ट 74
11. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार– वार्शिक रिपोर्ट 1998–99 पृष्ट 74
12. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार–वार्शिक रिपोर्ट 1996–97 पृष्ट 82–83
13. फेरिक डेविड, अन्तर्राष्ट्रीय कानून में आतंकवाद की परिभाषा व उसके निरोध पर अनुचिन्तन, त्रसेलस वि0 वि0 के संस्करण 1974

अध्याय पंचम

भारत अमेरिका सम्बन्ध विश्व समस्यायों के आलोक में

भारत अमेरिका सम्बन्ध विश्व समस्याओं के आलोक में

1. आतंकवाद :–

आज सम्पूर्ण मानवता आतंकवाद से त्रस्त है इसका खतरा और बढेगा क्योंकि हम तकनीकी का इस्तेमाल मनुष्य की सृजनात्मक ऊर्जा को जाग्रत और दिलों के फासले को दूर करने के बजाय केवल भौगोलिक दूरी को दूर करने के लिए कर रहे है। यही वजह है कि नस्ली मजहवी और सांस्कृतिक बर्चस्ववादी आतंकवाद बढ रहा है।

अपेक्षा थी कि 20वीं शताब्दी के दो–दो महायुद्धों की महाविभीशिका के इतिहास में दर्ज होने के साथ–साथ विश्व मानवता शान्त एवं सृजनात्मक युग में प्रवेश करेगी। लेकिन वीती सदी के अन्तिम चरण और नई सदी के शैशव काल का घटनाक्रम नई त्रासदियों की दिशा में घूमता दिखाई दे रहा है। आतंकवाद की शक्ल में दृश्य –अदृश्य छाया युद्धों का अन्तहीन सिलसिला चल पडा है। वेशुमार बद हालियों से जूझते पिछडे और विकाश शील देशों के अलावा अति अपवाद नही रहा। भारत सहित दक्षिण एशियाई देश तो इसमें लगातार झुलस ही रहे है। यह दावानल जल्दी थमेगा, इसके आसार फिलहाल दिखाई नही दे रहे हैं आज आतंक वाद का वैश्वीकरण हो गया है और यह एक "ट्रैड" की तरह कार्य करने लगा है।

भारतीय संस्कृति का तकाजा तो शालीनता और बसुधैव कुटुम्बकतम ही रहा है। भारत ने पडोसियों के साथ शिष्टता व सदभावना पूर्ण व्यवहार को ही पिछले 56 वर्शो में प्रदर्शित किया हैं व कर रहा हैं। लेकिन पडोसी देश जन्म से आतंकवादी विचारधारा को भारत के खिलाफ पनाह दे रहा है। भारत ने सदैव पाकिस्तान के साथ सद्भावना बढाने का प्रयास किया लेकिन उसने सदैव भारत के प्रति दोस्ती व सद्भावना का हाथ नही वढाया। उसने अपनी आतंक वादी गतिविधियों से हमेशा भारत को नुकसान पहुॅचाया है। पंजाब में उसने आतंकवादियों को भेजकर मानवता के क्रूर कार्य करवाये, जम्मू कश्मीर में उसके आतंकवादी सक्रिय है।इसके अलावा विश्व के अनेक आतंकवादी संगठनों तालिवान को भी पाकिस्तान को समर्थन प्राप्त है। तालिवान को अमरीका तथा पाकिस्तान ने ही सशस्त्र इस्लाम वादी बनाया था। यह तालिवान उग्रवादी संगठन भारत सहित विश्व अनेक देशों में अपनी मानव विनाश वादी आतंकवादी क्रिया में गतिशील रहा है। वह भारत के खिलाफ आज पाकिस्तान को प्रश्रय दे रहा है तालिवान ने पाकिस्तान में अपने पैर जमा लिये है और उसने कारगिल संघर्ष में भी अपनी सक्रिय भूमिका निभाई पाकिस्तान उनको मद्दगार मानता है। सोवियत संघ के पतन के

कारण अन्तर्राष्ट्रीय समीकरण बदल गये है। एक नया समीकरण उभरा है। जो अन्तर्राष्ट्रीय उग्र इस्लामावाद वनाम अमरीका। अतः जिस तालिवान को सोवियत आर्षीवाद वाली अफगान सरकार के खिलाफ अमरीका तथा पाकिस्तान ने ही शस्त्र बनाया उसी अमरीका का आज तालिवान से छत्तीस का आकडा है। क्यों कि हाल ही में तालिवान गुट ने अफगानिस्तान के बडे हिस्से पर अपनी सत्ता कायम रखी है। काबुल अभी तालिवान के कब्जे में है तथा पाकिस्तान का इसको समर्थन हासिल है तालिवान ने कट्टर इस्लाम वादी अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादी तथा अरबपति ओसामा बिन लादेन को अफगानिस्तान में रहने की अनुमति दी जिसकी आज अमरीका को बहुत व्यग्रता व वेताबी से खोज है। लादेन आज अफगानिस्तान में छुपा बैठा है इस सन्दर्भ में पाकिस्तान भी अमरीका की कोई मदद् नही कर रहा है। कारगिल में तालिवान ने पाकिस्तान को समर्थन दिया। अमरीकी राष्ट्रपति विल क्लिंटन ने तालिवान के सन्दर्भ में राष्ट्रीय आपात काल घोषित कर दिया। अमरीकी संविधान के भाग 204 वी के तहत " अन्तर्राष्ट्रीय आपात काल आर्थिक शक्तियॉ अधिनियम 1950 "(आई0 ई0 ई0 पी0 ए0)के अर्न्तगत राष्ट्रपति ने ये आदेश जारी किये। आदेशों की आवश्यकता के सन्दर्भ में राष्ट्रपति क्लिंटन ने प्रतिनिधि सभा तथा सीनेट के अध्यक्षों को एक लम्बा पत्र लिखा। राष्ट्रपति क्लिंटन ने अपने पत्र में लिखा कि–

कुख्यात आतंकवादी ओसामा बिन लादेन को सुरक्षित आश्रय तथा आतंकवाद प्रशिक्षित संस्था"अल कायदा" को प्रोत्साहन व संरक्षण प्रदान कर तालिवान ने अमरीका की राष्ट्रीय सुरक्षा तथा विदेशी नीति को चुनौती दे रही है। अफगानिस्तान अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद का गढ बन गया है। यह आतंकवादी अभियान मुख्यतः अमरीका के खिलाफ है। राष्ट्रपति ने लिखा कि तालिवान को समझने के हमारे सभी कूटनीति प्रयत्न विफल हो चुके है। हमारे इन प्रयत्नों के खिलाफ तालिवान ने लादेन की सुरक्षा को और अधिक कडा कर दिया। तथा अलकायदा की कार्यवाहियॉ और बढ रहीं है। यह स्पश्टतः अमरीकी सम्प्रभता का अपमान है। इस राष्टीय आपात काल की घोषणा के कारण जो–जो प्रतिबन्धात्मक कार्यवाहियॉ तालिवान के खिलाफ होगी। उनका भी खुलाषा क्लिंटन ने अपने पत्र मे किया। इस घोषणा के कारण तालिवान तथा तालिवान से सम्बन्धित व्यक्तियो की जो सम्पत्ति अमरीका में है। उसे जब्त कर लिया जायेगा। आपात कालीन कानूनों के कारण अमरीकी नागरिकों पर यह प्रतिबन्ध लगाया गया है। कि वे तालिवान लादेन एवं अलकायदा से सम्बन्धित कोई लेन देन सम्पत्ति एवं व्याज का

धंधा आदि न करें जिससे तालिवान व उनके साथियों को लाभ हो। अफगानिस्तान के साथ होने वाले आयात व निर्यात पर इन कानूनों के तहत कठोरता से प्रतिबन्ध लगाया गया है। 3 जनवरी 1999 ओसामा बिन लादेन ने चर्चित अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका टाइम्स को साक्षात्कार दिया अपने साक्षात्कार में उसने कहा कि'' वह अमरीका का घोर विरोधी हे। इसाई भी इस्लाम के वफादार नही हो सकते। वक्त आने पर वह अमरीका को वह बताएगा तथा उसकी सुपर मेसी को तवाह करेगा''4

बिन लादेन के पास मिसाइलें है तथा मानवता का विनाश करने क तमाम हथकंडे भी है। अकेला होते हुये भी उसके पास शक्ति बहुत बडी है। लादेन शायद विश्व का अकेला मनुष्य है जिसके अंगरक्षक दस्ते के सैनिकों के पास छोटी मिसाइलें है। और वारूदी सुरंग बनाने की चलित फैक्टरी भी है। भारत के एम टी परीक्षणों की लादेन व अमरीका दोनों ने निन्दा की लेकिन दोनों निन्दक आज एक दूसरे के खून के प्यासे है। भारत–पाक विवाद में इतने बडे इस्लामी आवरण के बावजूद लादेन ने कश्मीर मुद्दा नहीं उठाया। पाकिस्तान के समर्थन में खुलकर आवाज बुलंद नही की।

1–आषोपा शील के राजस्थान पत्रिका 8 जुलाई 1999 पाकिस्तानी आतंकवाद।

2–राजस्थान की पत्रिका आव्हान जुलाई 1999

3–महेश तालिवान के सन्दर्भ में अमरीकी आपात काल राजिस्थान पत्रिका 19 जुलाई 1999

4–दैनिक भास्कर 11 जुलाई 1999 मानवता के लिये खतरा ओसामा बिन लादेन रसरंग जयपुर

बिन लादेन का यह मानना है कि पाक यदि अपने हिस्से वाले कश्मीर की सीमा अफगानी व लादेन प्रायोजित छापामारों के लिये खोल दे, तो सारा मामला एक बार में ही सदा के लिये सुलझ सकता है। कारगिल संघर्ष के दौरान हो सकता है कि पाकिस्तान ने ऐसा ही कुछ किया हो बिन लादेन दिनों दिन अपना क्षेत्र फैला रहा हैं 7 अगस्त 1998को 12 बजे इस्लामी कट्टर पंन्थियों ने कीनिया की राजधानी नैरोवी में अमरीकी दूतावासों को विस्फोटों से उडा दिया था। नैरोवी से 275 किमी दूर तंजानियॉ में दार–इस–इस्लाम स्थिति अमरीकी दूतावास को भी विस्फोट से उडा दिया गया था। इन दोनों हादसों में लगभग 250 लोग मारे गये थें। और सैकडो घायल हुये थे। इन हादसों से अमरीका पर यह प्रतिक्रिया हुई कि विस्फोटों को निषाना निर्दोश नागरिक नहीं दुनियॉ की महाशक्ति के रूप में खुद को मानने वाला अमरीका ही है। 5 अमरीका किसी भी सूरत में लादेन को जिन्दा नही देखना चाहता। अमरीका ने

लादेन को पकडवाने के लिये पॉच मिलियन डालर का इनाम घोषित कर रखा है। लादेन अमरीका का सबसे बडा शत्रु है। और यही वह वजह है कि अमरीका भारत के पक्ष में यह युद्ध करना चाहता हैं और सच्चाई यह भी नहीं है कि लादेन के आतंकवादियों से वह भारत को निजात दिलाना चाहता है। इस पूरे प्रकरण में अपनी सोच हे कूटनीति है।

कारगिल व द्रास संघर्ष मे पाकिस्तानी सेना व घुसपैठियों के साथ–2 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद ओसामा बिन लादेन के करीब 500 निजी अंगरक्षक भी शामिल थें।

5–बिन लादेन के खिलाफ फतवा जारी पंजाब केशरी 29 जून 1999।

कारगिल मे चल रहे युद्ध में कुख्यात अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादी बिन लादेन व आई.एस.आई. (इण्टर सर्विसेइन्टेलीजेन्स) पाकिस्तानी खुफिया ऐजेन्सी द्वारा प्रत्येक आतंकवादी को करो या मरो के बदले 15 हजार डालर का भुगतान किया जा रहा है। कारगिल में लड रहे घुसपैठियों में अधिकांश आतंकवादी वे है। जिन्होने लादेन के 41 शिवरो में आतंकवाद का प्रशिक्षण लिया है। लडाई के दौरान मारे गये लोगों में ईरानी, अफगानी, सूडानी, और अन्य अरब देशों के युवकों के शब मिले।

उपरोक्त आतंकवादी गतिविधियों ने भारतीय लोगों के जीवन तवाह पर दिये निर्दोश लोगों की आये दिन हत्यायें की। धार्मिक जिहाद, राजनीतिक अस्थिरता अराजकता तथा भय का माहोल उत्पन्न कर दिया है। साथ में अमरीका को भी चुनौती दे दी उसके दूतावासों को आतंकवादियों ने उडा दिया। अतः वह आज आततंकवादी गतिविधियो से भयभीत हो रहा है। अतः आज भारत व अमरीका इस अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद से निजात पाने के लिये मिलकर मुकाबले को तैयार हो गये है। सितम्बर 1999 को भारतीय विदेश मंत्रालय में अमरीकी मामलों के संयुक्त सचिव आलोक प्रसाद ने ईरान, पाकिस्तान एवं अफगानिस्तान मामलों में संयुक्त सचिव विवेक काटजू के साथ अमरीकी विदेश विभाग अमरीकी राष्ट्रीय सुरक्षा परिशद और अमरीकी रक्षा विभाग पेटांगन के कई वरिष्ठ अधिकारियों से मुलाकात की। इस मुलाकात में आलोक प्रसाद ने अफगानिस्तान व पाकिस्तान में फैल रहे आतंकवाद को विश्व के लिये गम्भीर चिन्ता का विषय बताया। व भारत– अमरीका की आतंकवादी सोच से सम्बन्धित अनेक पहलुओं को एक जैसा बताया। आज दोनो देश समान रूप से मान रहे है। कि अफगानिस्तान से आतंकवाद फैल रहा है। और यह लगभग पूरे देशों को प्रभावित कर रहा हैं दोनों देश भविष्य में इस मुदद्दे पर सलाह मशविरा जारी रखने के लिये सहमत है। आतंकवाद से

मुकाबले के लिये भारत व अमरीका के बीच कुछ हद तक सहयोग का सिलसिला शुरू हो चुका है। दोनो ने प्रत्यर्पण सन्धि पर हस्ताक्षर भी कर दिये है दोनों देशो में यह सहमति हुई है कि दोनों देश आतंक वाद से जुडी सूचनाओं का आदान–प्रदान कर रहे है। अतः आज यह कहा जा सकता है कि भारत अमरीका दोनों के आतंकवाद से सम्बन्धित विचारों पर सहयोगात्मक रूप से आमादा है।6

आतंकवाद और अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्यः–

अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद के विख्यात अध्येता ब्रियां काजर के अनुसार 20वीं शताब्दी का आतंकवाद अपने स्वरूप में वैश्विक है। अर्थात विश्व भर के आतंकवादियों में आपसी भाई चारा है, क्यों कि वे मूलभूत विश्वासों और कार्य पद्यति में एक जैसे है। ये एक दूसरे को प्रशिक्षण एवं हथियारों की आपूर्ति में सहायता करते रहते है। साधारणतः आतंकवादी संगठन के सदस्य सुनिश्चित युवजन होती है। न्यूनाधिक रूप से ये मध्यम वर्गीय परिवारों से सम्बन्धित होते है।7 जैकिस का लेख अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादः– संघर्ष का एक नया ढंग, क्रोम हेल्म लन्दन 1975।

संयुक्त राज्य अमरीकाः–

पिछले दो दशकों में संयुक्त राज्य अमरीका, भारत,रूस, चीन, और श्री लंका जैसे देश आतंक वाद से पीडित रहे है। सन् 1983 में बेरूत में अमरीकी नौसैनिक ठिकाने पर कार बम विस्फोट में 240 से ज्यादा अमरीकी सैनिक मारे गये। 1988 में यूरोप में लॉकर्बी के ऊपर अमरीकी विमान पैन–एम उडान संख्या–103 में बम विस्फोट में 240 यात्री मारे गये। 1993 में न्यूयार्क के विश्व व्यापार केन्द्र में हुये बम धमाके में 6 मरे तथा 1000 घायल हुये। 1995 में अमरीका के ओल्काहामा शहर में बम फटने से 168 लोगों की मृत्यु हुई। 1996 में सऊदी अरब में एक ट्रक में हुये बम विस्फोट में 19 अमरीकियों की मृत्यु हुई। 1998 में केन्या और तंजानियॉ स्थिति अमरीकी दूतावास में बम विस्फोट में 224 लोग मरे और लगभग 5000 घायल हुये सन् 2000 में यमन में अमरीकी विमान वाहक युद्ध पोत पर हमले में 19 अमरीकी मारे गये।

अमरीका के दो प्रमुख शहरों व्यापारिक राजधानी न्यूयार्क तथा राजनीतिक राजधानी वाशिंगटन डी0 सी0 के दो महत्वपूर्ण ठिकानों पर 11 सितम्बर 2001 को आतंकवादी हमले किये गये। इन हमलों में बिल्कुल नया आत्मघाटी तरीका अपनाया गया। आतंकवादियों ने बोस्टन हवाई अडडे् से यात्री विमानो का अपहरण कर उन्हें पूर्व निर्धारित निशानों से टकराया।

चार विमानों में से दो को विश्व व्यापार केन्द्र के ट्विन टावर्स (दो टावर) से अलग–अलग 15 मिनट के अन्तराल पर टकराया गया। तीसरे विमान को पेंटागन (वासिंगटन डी0सी0) भवन जो कि अमरीका का रक्षा मुख्यालय है, से टकराया गया। चौथा विमान पेंनसिल्वानियॉ में दुर्घटना ग्रस्त हो गया। इन हमलों में विश्व व्यापार केन्द्र के दोनों टावर ढह गये तथा पेंटागन के विशाल क्षेत्रफल में बने पॉच मंजिला भवन के एक हिस्से को भारी नुकसान हुआ।

भारत में आतंकवाद–जम्मू कश्मीर राज्य के विशेष सन्दर्भ में:–

अप्रैल 2002 में ग्रह राज्य मंत्री सी0 एच0 विद्यासागर राव ने राज्य सभा में एक प्रश्न के उत्तर में बताया। कि भारत में लश्कर–ए–तौयवा, जैश–ए–मुहम्मद, लिट्टे, हरकत–उलमुजाहिद्दीन तथा सिमी समेत 31 प्रमुख उग्रवादी संगठन सक्रिय है। इनमें से कुछ ने पाकिस्तान अथवा पाक अधिकृत कश्मीर और अफगानिस्तान में अपने अडड्े बना रखे है। लिट्ठे जैसे उग्रवादी संगठन श्री लंका से अपनी गतिविधियॉ संचालित करते है। पूर्वोत्तर राज्यो के विद्रोहियों ने पडोसी देशों में अपने कैम्प स्थापित कर लिये है। उल्फा और नेशनल डेमोक्रिटिक फ्रॅट ऑफ बोडोलैण्ड, एन0डी0एफ0बी0 ने भूटान और बंग्लादेश में नेशनल लिवरेशन फन्ट ऑफ त्रिपुरा एन0एल0एफ0टी0 तथा आल त्रिपुरा टाइगर्स फोर्स ने बांग्लादेश में तथा नेशनल सोशलिश्ट काउॅसिल ऑफ नागालैण्ड और इसके सभी गुटों ने म्यॉमार और बॉग्लादेश में अपने कैम्प स्थापित किये हुये है।

पाकिस्तानी राष्ट्रपति जनरल जिला–उल–हक ने भारत के खिलाफ एक अघोषित युद्ध तब शुरू किया जब पाकिस्तान ने यह देख लिया कि परोक्ष युद्ध में उन्हें कोई सफलता नहीं मिल रही है। अघोषित युद्ध राज्य में असन्तुश्ट युवकों की भावनाओं को भडकाकर और उन्हें गुमराह करके चोरी छिपे शुरू हुआ इसके परिणाम स्वरूप 1989–90 के वर्ष में घाटी से पाकिस्तान को बडे पैमाने पर कश्मीरी युवकों को सीमा पार करायी गई। पाकिस्तान ने स्थानीय युवकों को बडे पैमाने पर कश्मीरी युवकों को विघटन कारी गतिविधियों में प्रशिक्षित किया, उन्हें अत्याधुनिक हथियार दिये और फिर उन्हें घाटी में उत्पात मचाने के लिये वापस भेज दिया। बाद में जब इन स्थानीय युवकों का मोह भंग हुआ और उन्हें स्थानीय समर्थन कम होने लगा तो पाकिस्तान को इस राज्य में पाकिस्तानी और भाडे के विदेशी सैनिकों की घुसपैठ कराने पर मजबूर होना पडा आज जम्मू और कश्मीर में सक्रिय आतंकवादियों में अधिकतर वे ही है। हॉलाकि अनुमान भिन्न–2 है। लेकिन जम्बू एवं कश्मीर में इस समय 1500–2000 भाडे

के विदेशी सैनिक सक्रिय है। जिसकी घुसपैठ पाकिस्तान ने राज्य में आतंकवाद को कायम रखने और उस पर अपना नियंत्रण बनाये रखने की चाल के लिये किया है। भाडे के ये विदेशी सैनिक मुख्यतः पाकिस्तान, पाक अधिकृत कश्मीर और अफगानिस्तान के है जो पॉन इस्लामिक रूढिवादी उग्रवाद के लिये एक केंन्द्र के रूप में पाकिस्तान द्वारा निभाई जा रही खतरनाक भूमिका को उजागर करता है।

पाकिस्तान का अस्तित्व इस बात पर निर्भर करता है कि वह कितनी कुटिलता से आतंकवाद को बनाये रखता है और भारत को परेशान कर सकता है। कश्मीर समस्या के समाधान से भारत सहज हो जायेगा और व्यापक विकास के रास्ते पर आगे कदम भरने में समर्थ हो सकेगा। यही भावना पाकिस्तान को घाटी में आतंकवाद की आग को भडकाये रखने के लिये विवश कर रही है।

ताजा ऑकडे यह इंगित करते है। कि सीमा पार से मिले प्रोत्साहन के कारण वर्ष 2000की तुलना में 2001 में विशेश रूप से जम्मू कश्मीर में आतंकवादी घटनाओं में बृद्धि हुई है। जहॉ वर्ष 2000 में आतंकवाद की 3074 घटनाऐं हुई जिनमें 762 आम लोग मारे गये। वहॉ 2001 में 4522 आतंकवादी घटनाऐं हुई जिनमें 919 आम लोग मारे गये।

जम्मू कश्मीर राज्य में सामान्य हालात बहाल करने के अपने प्रयास में भारत सरकार ने त्रिस्तरीय रणनीति अपनायी गयी जिसमें सम्मलित है।

1– पाक प्रायोजित आतंकवादी गुटों द्वारा सीमा पार से चलाए गये आतंकवाद से सुरक्षा बलों की सहायता से प्रतिकारक रूप से निपटना–

2– आर्थिक विकास को तेज करना और आम लोगों की शिकायतों को दूर करना।

3– जम्बू कश्मीर के ऐसे सभी लोगों के साथ बात–चीत करने को तैयार होना जो बातचीत करने के इच्छुक हो और हिंसा का राष्ट्र छोडने की मंशा रखते हों।

भारत के लिये सबसे बडी चुनौती पाक द्वारा प्रायोजित छाया युद्ध और आतंकवाद है। संसद और कश्मीर विधानसभा भवन पर हमला भारतीय लोकतंत्र की नींव पर हमला है।

2. निशस्त्रीकरण –परमाणु समझौता :–

शस्त्रों की प्रतिस्पर्धा के बावजूद निःशस्त्रीकरण के लिये द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अनेक प्रयास हुये है। इस दृष्टि से महाशक्तियों द्वारा अप्रचुरण सन्धि तथा साल्ट सन्धियॉ विशेश रूप से उल्लेखनीय है। फिर भी महाशक्तियो के आपसी मनमुटाव इतने गहरे थे। कि

समस्त मानव जाति की इच्छा के बावजूद वे निःशस्त्रीकरण पर कोई निश्चित कार्यवाही नही कर पायी।

निःशस्त्रीकरण का शाब्दिक अर्थ है कि शारीरिक हिंसा के प्रयोग के समस्त भौतिक और मानवीय साधनों का उन्मूलन। यह एक कार्यक्रम है। जिसका उददेश्य हथियारों के अस्तित्व और उनकी प्रकृति से उत्पन्न कुछ विशिष्ट खतरों को कम करना है। मार्गेन्थाऊ के अनुसार'' निशस्त्रीकरण कुछ या सब शस्त्रों में कटौती या उनको समाप्त करना है। ताकि निःशस्त्रीकरण की दौड का अन्त हो''8

मॉगेन्थाऊ के अनुसार निशस्त्रीकरण पर विचार करते समय दो मूल भेदों को ध्यान मे अवश्य रखना चाहिए वे है सामान्य और स्थानीय निशस्त्रीकरण मे भेद और मात्रात्मक और गुणनात्मक निशस्त्रीकरण में भेद।

1945 सें लेकर 1966 तक विश्व राजनीति में आणविक हथियारों का तेजी से निर्माण होने लग गया था हिरोसिमा और नागासाकी पर अमरीका द्वारा परमाणु बम का प्रयोग किये जाने से हथियारों को पाने की लालसा उन राष्ट्रों के पास में हथियारो को पाने के लिये कुछ भी नहीं था रूस, चीन, फ्रॅास, ब्रिटेन, अमरीका के बाद अन्य राष्ट्रों ने भी विज्ञान व तकनीकी में बमवारी करने के लिये आणविक हथियारों को पाने का प्रयास किया।

इसी क्रम में एशिया, अफ्रीका, लैटिन अमरीका में स्वतंत्र हुये राष्ट्रों ने भी अपनी सुरक्षा हथियारों के माध्यम से करने का प्रयास किया। 1960 के बाद विश्व के प्रत्येक राष्ट्र ने युद्ध सामग्री, सैनिक सामग्री परमाणु बम बनाने की कच्ची सामग्री, प्रक्षेपास्त्र आदि को किसी न किसी रूप में पाने का प्रयास किया था। इससे तीसरे विश्व युद्ध का खतरा और बढ गया था एन0पी0टी0 सन्धि की बात वे ही राष्ट्र करते है। जिनके पास हथियार होते है। ऐसा इसलिये भी करते है कि दूसरे राष्ट्रों को हथियारो से वंचित रखना चाहते है।

<u>सी0टी0बी0टी0 सन्धि व अमरीकाः–</u>

संयुक्त राज्य अमरीका शीत युद्धोत्तर विश्व स्थिति पर नियंत्रण स्थापित करने के लिये इस सन्धि को लागू करने को लालायित है। जिसका कारण यह है कि अनेक राष्ट्र चोरी छिपे परमाणु कार्यक्रम चला रहे है। अगर यह प्रतिबन्ध लग सकता तो विश्व में विकल स्थिति आ सकती है। इसके लिये व्यापक सम्पूर्ण राष्ट्रों से हस्ताक्षर कराकर परमाणु रियेक्टर को बन्द

करा देने की है। इस सन्धि पर वर्ष 1998 तक 149 राष्ट्रों ने हस्ताक्षर भी किये है। लेकिन ऐसे कुछ राष्ट्र है। जो हस्ताक्षर करने के लिये निरन्तर मना करते रहे। अमरीका के राष्ट्रपति विल क्लिंटन सितम्बर 1999 से इस सन्धि को लागू करना चाहते है मगर हमें नही लगता कि इसके कार्यकाल में यह सन्धि लागू हो जायेगी।

अमरीका इस सन्धि को लागू करके आणविक अप्रसार की प्रक्रिया को पूर्ण करना चाहता है। वर्ष 1996 में इस सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं करने की घटना सबसे ज्यादा चर्चित रही। अमरीका ने भारत व पाक द्वारा मई 1998 में परमाणु परीक्षण करने के कारण व्यापक आर्थिक प्रतिबन्ध भी लगा दिये थे। ताकि भारत पाक दवाब में आकर इस सन्धि पर हस्ताक्षर कर दें मगर भारत पर इन आर्थिक प्रतिबन्धों का विशेश असर नहीं रहा। भारत इन आर्थिक प्रतिबन्धों को हटाने के लिये निरन्तर अमरीका के साथ कुटनीतिक वार्ता आयोजित कर रहा है। जिसमें जसवंत सिंह एवं स्ट्रोव टॉलबोट के बीच व्यापक विचार विमर्श करके सहमति तक पहुँचने का प्रयास किया जा रहा है। जिसके परिणाम क्या होगें यह ठीक से कहा नहीं जा सकता है। यह प्रक्रिया लम्बी चल सकती हैं

वैसे अमरीकी शस्त्र नियंत्रण और निशस्त्रीकरण एजेन्सी के निदेशक जॉनहोलम ने स्पष्ट किया कि अभी तक अमरीका की सीनेट ने इस सन्धि का अनुमोदन नही किया है। अब अमरीका भारत द्वारा हस्तााक्षर नही करने के कारण भारत को अलग थलग छोड देना चाहता है। विलक्लिंटन अपने कार्यकाल में इस सन्धि को लागू करना चाहते है। सितम्बर 1999 काफी नजदीक है। वैसे भी सन् 2000 में अमरीका के नये राष्ट्रपति का चुनाव होगा। ऐसी स्थिति में क्लिंटन की भारत यात्रा भी अटकी हुई है। जिससे वार्ताओं का सार्थक परिणाम नही आ रहा है दोनों ही पक्ष अपने–अपने मुदद्दों पर विचार विमर्श कर रहे है। यद्यपि अमरीका ने आर्थिक प्रतिबन्धों में छूट भी दी है। अब अमरीका के सामने यह समस्या आ रही है। कि जिस तरह भारत मना कर रहा हैं उसी तरह पाकिस्तान मना कर रहा है। अब पाक भी परमाणु सम्पन्न राष्ट्र है। इसलिये इसके हस्ताक्षर के बिना सन्धि की प्रक्रिया अधूरी ही रह जाती है। अमरीका भारत से निम्न बिन्दुओं की पूर्ति कराना चाहता है:–

1– भारत एन0पी0टी0 एवं सी0टी0बी0टी0 पर तुरन्त हस्ताक्षर कर दें।

2– भारत अपना परमाणु कार्यक्रम बन्द कर दें।

मगर हमें नहीं लगता कि भारत आसानी से इस सन्धि पर हस्ताक्षर कर देगा। भारत के राष्ट्रीय हित व्यापक हैं भारत का कार्यक्रम शान्तिपूर्ण हैं इसलिये वैसे भी भारत सुरक्षा में अभी आत्म निर्भर नही हुआ है।

सी0टी0बी0टी0 और भारतः—

भारत इस तरह की सन्धि का विरोध 1963 से ही करता रहा है। इसके बाद में जब से अमरीका इस सन्धि को लागू करने का प्रयास कर रहा है तभी से भारत इस सन्धि का विरोध कर रहा है। भारत ने मई 1998 में पॉच परमाणु परीक्षण किये उसके बाद से तो अमरीका ने भारत के प्रति कडा रूख अपनाये हुये है। भारत राष्ट्रीय हितों को सर्वोपरि मानता हैं इस सम्बन्ध में भारत ने अनेक दलीलें पेश की है। भारत इस सन्धि को भेदभाव पूर्ण मानता है इस कारण से भारत इस सन्धि पर हस्ताक्षर करने से मना कर रहा है। अतः भारत सुरक्षा के मामले में आत्म निर्भर हो रहा है। इससे भी अमरीका नाराज हैं भारत द्वारा विरोध किये जाने के निम्न कारण हैः—

1— भारत स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व व इसके बाद भी शान्ति का समर्थक रहा हैं भारत इसे पूर्ण निशस्त्रीकरण के साथ जोडने की बात करता हैं इसके लिये विश्व स्तर पर पश्चिम के राष्ट्र तैयार नही है इससे भारत मना कर रहा है।

2— जैनेवा में निशस्त्रीकरण के बारे में चल रहे 61 देशों के सम्मेलन में भारतीय प्रतिनिधि मण्डल की नेता अरूंधती घोश ने स्पष्ट कहा है कि "भारत ऐसी सी0टी0बी0टी0 पर न अभी न ही बाद में हस्ताक्षर करेगा।

अमेरिका स्वयं इस तथ्य से परिचित है कि भारत नाभिकीय आयुध बनाने की दिशा में कोई कार्य नही कर रहा है। लेकिन मौजूदा परिस्थिति में इस विकल्प का पूरी तरह परित्याग भी नहीं कर सकता। भारत की चीन से तुलना करना भी बेमानी है हॉलाकि चीन ने परमाणु अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर करने का फैसला किया है फिर भी भारत अपनी इस धारणा पर टिका है। कि यह सन्धि परमाणु शक्तियों के मुकाबले गैर परमाणु देशों के साथ भेदभाव पर आधारित है। परमाणु अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर के बावजूद चीन एक ताकतबर परमाणु देश ही रहेगा। जब तक परमाणु शक्तियॉ अपने भण्डारों का समाप्त करने का फैसला नहीं करती तब तक अप्रसार सन्धि से सिर्फ उनक एक एकाधिकार की पुष्टि ही होगी।

जून 1996 में भारत ने सी0टी0बी0टी0 अर्थात व्यापक परमाणु परीक्षण रोक सन्धि पर हस्ताक्षर करने से स्पष्ट इंन्कार कर दिया। भारत के अनुसार सी0टी0बी0टी0 का प्रस्तावित दस्तावेज अपने वर्तमान स्वरूप में भेदभाव पूर्ण खामियों से भरा व बेहद अपूर्ण है। इससे भारत के व्यापक राष्ट्रीय व सुरक्षा हितों की पुष्टि नहीं होती। भारत के रूख से स्पष्ट है कि वह अपने राष्ट्रीय सुरक्षा हितों में अपने एटमीविकल्प को खुला रखेगा।

यह विशेश उल्लेखनीय है कि एक तरफ तो परमाणु राज्य निशस्त्रीकरण और परमाणु अप्रसार सन्धि का प्रचार करते है और दूसरी तरफ अपने परमाणु शस्त्रों के जखीरे में बृद्धि करते रहते है। मई 1998 तक ही अमरीका ने 1032, रूस ने 715, फ्रॉस ने 210, बिट्रेन ने 45, चीन ने 45 वहीं भारत ने केवल 6 और पाकिस्तान ने भी 6 परमाणु परीक्षण किये है।

परमाणु परीक्षण : एक नजर

सारणी–1

	अमरीका	रूस	फ्रॉस	बिट्रेन	चीन	भारत	पाकिस्तान
परीक्षणों की संख्या	1032	715	210	45	45	6	6
पहला विस्फोट	1945	1946	1961	1952	1964	1974	1998

श्रोतः– दैनिक भास्कर (कुमार अतुल), जुलाई 1998

9. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार, वार्शिक रिपोर्ट 1996–97 पृश्ट 82–83

सारणी–2

पहली बार हाइड्रोजन बम का परीक्षण

देश	दिनॉक और स्थान
अमरीका	31 अक्टूबर 1952, एनीविक्टोरिया द्वीप
रूस	12 अगस्त 1953, साइबेरिया
ब्रिट्रेन	15 मई 1957, क्रिसमिस द्वीप
फ्रान्स	24 अगस्त 1968, मुरूराओन्फन्गाताड़ ऐटोल
चीन	27 दिसम्बर1968, लोप नोर, पश्चिमी चीन
भारत	11 मई 1998 पोकरण, राजस्थान

सारणी–3

अन्तिम विस्फोट	1992	1990	1996	1991	1996	1998	1998
परमाणु हथियारों की संख्या	120,70	22,500	500	380	450	65 अनुमान	....

भारत की परमाणु नीतिः— भारत ने घोषणा की की उसकी परमाणु नीति निम्न लिखित होगी।

1— भारत एक न्यूनतम नाभिकीय निवारक बनाये रखेगा।

2— भारत की किसी खुले उददेश्य के कार्यक्रम अथवा शस्त्रों की किसी होड में शामिल होने की मॉग नही है।

3— भारत नाभिकीय हथियारों का पहले प्रयोग न करके और नाभिकीय हथियार सहित राष्ट्रों के विरूद्ध प्रयोग ने करने की नीति का अनुमोदन करता हैं।

4— 13 मई 1998 को नाभिकीय परीक्षणों पर एक स्थान की घोषणा की गयी अभी भारत व्यापक परमाणु परीक्षण सन्धि सहित व्यापक मसलों पर प्रमुख वार्ताकारों के साथ बातचीत कर रहा है। वह इन चर्चाओं को सफल निष्कर्ष पर पहुँचाने के लिये तैयार है ताकि व्यापक परीक्षण प्रतिबन्ध सन्धि के लागू होने में सितम्बर 1999 से अधिक बिलम्ब न हो।

5— भारत निशस्त्रीकरण सम्मेलन में सच्ची भावना से नाभिकीय हथियार तथा अन्य नाभिकीय विस्फोट यन्त्र के निर्माण के उद्देश्य से विखण्डनीय सामग्री के उत्पादन पर रोक लगाने के लिये एक सन्धि पर वार्ताओं में शामिल हैं

6— भारत अप्रसार के प्रति अपनी बचन वद्धता प्रदर्शित करने के लिये नाभिकीय हथियार निर्माण सामग्री एवं औद्योगिकी का हस्तान्तरण नहीं करेगा तथा निर्यात नियन्त्रण की एक कठोर प्रणाली का पालन करेगा।

7— भारत का नाभिकीय शस्त्रागार नागरिक अधिकार और नियन्त्रण में हें।

8— एक राष्ट्रीय परिशद की स्थापना की गई तथा इसे सामरिक प्रतिरक्षा की समीक्षा करने के लिये कहा गया हैं।

परमाणु बटन का प्रबन्ध(कन्ट्रोल कमॉड, कम्युनिकेशन कम्प्यूटिंग, इंटेलीजेंस एण्ड इन्फारमेशन) सी 4 आई 2 की घोशणाः—

भारत ने प्रतिरक्षा क्षेत्र में महत्वपूर्ण पहले करते हुये अपनी पहली सामरिक परमाणु व मिसाइल कमान प्राधिकरण का जन्म 4 जनवरी 2003 को हुआ प्राधिकरण में राजनीतिक परिशद व कार्यकारी परिशद शामिल होगीं। राजनीतिक के प्रमुख प्रधानमंत्री होगें तथा परमाणु हथियारों के इस्तेमाल सम्बन्धी अधिकार केवल इसी परिशद के पास होगें वस्तुतः परमाणु वटन अब प्रधानमंत्री के हाथ में रहेगा। परमाणु हथियारों का इस्तेमाल पहले हमले के बजाय जवाबी कार्यवाही के रूप में किया जायेगा।

भारत की परमाणु नीति में निरन्तर परिर्वतन होता रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत की नीति पूर्ण निशस्त्रीकरण के पक्ष में थी। उसने परमाणु शक्ति का विकास बम निर्माण करने के लिये नही, अपितु विकास कार्यो में परमाणु के प्रयोग के लिये किया श्री मती गान्धी का विचार था कि राष्ट्रीय हित में आवश्यक होने पर भारत सरकार शक्ति पूर्ण परमाणु विस्फोट करने में कोई संकोच नही करेगी। जनता सरकार ने शान्तिपूर्ण कार्यो में भी 1978 में संयुक्त राष्ट्र महासभा में स्पष्ट कहा था कि "भारत किसी भी हालत में परमाणु परीक्षण अस्त्र नही बनायेगा। भले ही विश्व के सभी देशों के पास अस्त्र हो जाये।" परन्तु चीन और पाकिस्तान के परमाणु कार्यक्रमों के कारण भारत की सुरक्षा खतरे में पडने लगीं। परमाणु अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर न करने का निर्णय हमने अपने आधार भूत उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये किया। उसके बाद आने वाली सरकारों ने भारत के परमाणु विकल्प को सुरक्षित रखने के लिये राष्ट्रीय इच्छा को ध्यान मे रखते हुये आवश्यक कदम उठाये। सी0टी0बी0टी0 पर परमाणु विकल्प खुले रखे थे। हमने केवल इस विकल्प का इस्तेमाल किया है।

सारणी–4

	अमरीका	रूस	फ्रॉस	बिट्रेन	चीन	भारत	पाकिस्तान
परीक्षणों की संख्या	1032	715	210	45	45	6	6
पहला विस्फोट	1945	1946	1961	1952	1964	1974	1998
अन्तिम विस्फोट	1992	1990	1996	1991	1996	1998	1998
परमाणु हथियारों की संख्या	120,70	22,500	500	380	450	65 अनुमान	....

3. विश्व व्यापार संगठन :–

विश्व व्यापार संगठन गैट का उत्तरवर्ती संगठन है। यह उरूग्वे दौर की बहुपक्षीय व्यापार वार्ताओं की समाप्ति के परिणाम स्वरूप 1.1.95 से लागू हुआ भारत 1947 में गैट का तथा 1995 में विश्व व्यापार संगठन दोनों का संस्थापक सदस्य था सन् 2002 की स्थिति के अनुसार विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता 144 थी। विश्व व्यापार संगठन के आदेश पत्र में वस्तुओं का व्यापार,सेवाओं का व्यापार, व्यापार से सम्बन्धित निवेश उपाय तथा व्यापार से सम्बन्धित बौद्धिक सम्पदा अधिकार शामिल है। विश्व व्यापार संगठन का पहला मन्त्रिस्तरीय सम्मेलन 9–13 दिसम्बर 1996 को सिंगापुर में हुये सम्मेलन में विचारणीय प्रमुख मुद्दों में श्रम मानकों निवेश प्रतिस्पर्धा को अन्तराष्ट्रीय व्यापार से जोडने के विषय सम्मलित किये गये थे। इसके अतिरिक्त टेक्सटाइल्स तथा सूचना प्रौद्योगिकी जैसे विषयों का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार भी विचारणीय मुद्दों में सामिल था भारत सहित विकास शील देश जहाँ श्रम मानकों को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से जोडने के विरोध में थे वही अमरीका सहित विकसित राष्ट्र इन्हें जोडने के पक्ष में थे। भारत का कहना था कि श्रम मानक विश्व व्यापार संगठन के वजाय अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की विषय बस्तु है। निवेश सम्बन्धी मामलों को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से जोडने का भी भारत ने विरोध किया है। इस सम्मेलन के घोषणा पत्र में श्रम मानकों को अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का विषय स्वीकार किया गया तथा स्वशट किया गया कि विकास शील राष्ट्रों के व्यापार को प्रतिबन्धित करने के लिये श्रम मानको का प्रयोग नहीं किया जायेगा। विकासशील देशों की तरह एक बडी उपलब्धि थी।

30 नबम्वर से 3 दिसम्बर 1999 को अमरीका के सिएटल नगर में विश्व व्यापार संगठन का तीसरा मन्त्रिस्तरीय सम्मेलन सम्पन्न हुआ। इसमें 135 देशों ने भाग लिया। इस सम्मेलन को लोगों के प्रदर्शन एवं विरोध का सामना करना पडा। प्रदर्शन कारियों का आरोप था कि मानवाधिकारों से लेकर पर्यावरण संरक्षण तक के अनेक मुद्दों पर नागरिक समाज के विचारों की यह संगठन अनदेखी कर रहा है। सम्मेलन की कार्य सूची में श्रम मानकों जैसे गैट व्यापारिक मुद्दों के समावेश का भारत सहित विकाशशील देशों ने कहा विरोध किया। इसके अतिरिक्त बाजार पहुँच, कृषि सेवाओं के व्यापार सम्बन्धी समझौते, आदि विवादास्पद मुद्दों पर सदस्य आम सहमति पर नहीं पहुँच सके। वायो टेक्नो लोजी को वार्ता में सामिल किये जाने के अमरीकी प्रयास का भी विरोध हुआ।

विश्व व्यापार संगठन का पॉचवा मंत्रिस्तरीय सम्मेलन कानकुन(मैक्सिको) में 10 से 14 सितम्बर 2003 को विकसित तथा विकास शील देशों के बीच भारी मत भेदों के कारण विफल हो गया सम्मेलन में पूरी दुनिया में कृषि का परिदृश्य बदलने के लिये 146 देशों के व्यापार व वाणिज्य मन्त्रियो के बीच गहन बातचीन चली।

इस बात चीत में किसी को आश्चर्य नही होना चाहिये कि बिना किसी नतीजे पर पहुँचे इस सम्मेलन की समाप्ति का विकाश सील देशों ने स्वागत किया दूसरी ओर कानकुन में अलग थलग पड गये यूरोपीय आयोग के व्यापार आयुक्त पास्कलन लेमी ने अपनी भडास निकालते हुये कहा कि" विश्व व्यापार संगठन संकीर्ण सोच वाला संगठन बनकर रह गया है। और इसके निर्णय लेने के तौर तरीकों में फेरबदल की जरूरत है। कानकुन की असफलता से अमरीकी व्यापार प्रतिनिधि रावर्ट जोएलिक ने भी निराशा व्यक्त की। विकसित देशों की झॅुझलाहट स्वाभाविक है। यद्यपि विकसित देशों ने वार्ता को अपने पक्ष में मोडने और विकाश शील देशों में फूट डालने के लिये भी सारे हथकन्डे अपनाये, किन्तु वे कृषि क्षेत्र में विकाश शील देशों को अपनी चतुराई से गुमराह करने में सफल नही हो पाये। अमरीकी और यूरोपियन चालों को धता बताते हुये भारत की अगुवाई में ब्राजील,चीन और दक्षिण अफ्रीका सहित 21 विकाश सील देशों ने कृषि पर भारी सब्सिडी के खिलाफ विकसित देशों की नीति के विरोध में अपनी बात बहुत तर्क संगत और मुखर रूप से सामने रखी। इससे पूर्व भी सिएटल बैठक में विकासशील देशों ने अपनी आवाज उठाई थीं। किन्तु कानकुन में पहली बार उनकी आवाज असरदार सावित हुई और सम्पन्न राष्ट्रों का एकाधिकार टूटा। कानकुन बैठक का एक और सकारात्मक पक्ष है। पहले विकसित देश अपनी चतुराई से अपने हितों को सर्वोपरि रखने वाले निर्णय पारित कराने में सफल हो जाते है। इस बार एक सन्तुलन की स्थिति देखने को मिली और विकसित देशो को विकाशशील देशों के हितों के सामने झुकने को बाध्य होना पडा। सम्पन्नता के मामले में एक दूसरे से समान होने के कारण धनी देशो में अकसर एक राय होती है। पहली बार कानकुन में बडे विकाश सील देशों ने साझा भूमि तैयार की और अपने हितों को ऊपर रखा।

वास्तव में विश्व अर्थ व्यवस्था की भलाई के नाम पर विकसित देश निर्धन राष्ट्रों का शोशण करने वाली नीतियॉ बनाना चाहते है। आयात निर्यात नीतियों से लेकर कृषि क्षेत्र में सम्पन्न राष्ट्र ऐसी नीतियॉ व शर्ते थोपना चाहते है। जिन्हें मानना तो विकाशसील देशों के

विकाश द्वार बन्द होने का खतरा हे। बहुत दिनों से विकसित देश दुनियॉ के अन्य विकाश शील देशों को जबर्जस्त्री व्यापार सन्धियों को कडवी खुराक निगलने को विवश कर रहे थे। कानकुन की विफलता से उनकी इस मनोवृत्ति पर रोक लगेगी। कानकुन का जो मसौदा बनाया गया था। उसमें विकाश सील देशों के हितों पर कोई ध्यान नही दिया गया था। कृषि सब्सिडी खत्म करने के अलावा कृषि उत्पादों की बाजार पहुॅच के मामले में भी यह मसौदा विकाश शील देशो के लिये काफी कठोर था साथ ही विकाश शील देशों में शुल्क दरों में कटौती के जिस त्रिस्तरीय पैकेज की पेशकश की गयी। उसके कारण कृषि शुल्क दरो में भारी कटौती करना पडती। कृषि क्षेत्र पर निर्भरता के कारण विकाश शील देशों की अर्थ व्यवस्था पर इससे बुरा असर पडता। पश्चिमी जगत को यह बताना बहुत जरूरी था कि जब तक कृषि पर एक निश्चित समयावधि के भीतर सभी देश सब्सिडी खत्म नही करते, तो किसी तरह की भावी वार्ता या उसके परिणाम तक पहुॅचने की आषा व्यर्थ है। उरूग्वे दौर के बाद के दस वर्शो में अमरीका और यूरोपीय महासंघ में कृषि सब्सिडी मे कमी आने के बजाय और अधिक बृद्धि ही हुई हैं इस अन्तराल में दोनों क कुल कृषि सब्सिडी 180 अरब डालर से बढकर 300 अरब डालर हो गई है। विकाश सील देशों को मुक्त व्यापार और खुले बाजार के लिये वाध्य करने के कारण तीसरी दुनिया के लाखो किसान भुखमरी के कगार पर पहुॅच गये है।

कानकुन मसौदा स्वीकृति हो जाने का अर्थ था कि विकसित देश कृषि पर सब्सिडी जारी रखते वे निर्यात पर सब्सिडी खत्म करने के प्रतिबद्धता से छूट जाते वहीं विकाश सील देशों पर और अधिक आर्थिक शुल्क लगाया जाता। जी 21 के देशों की अपूर्व एकता के कारण अमरीका और यूरोपीय महासंघ अपनी मनमानी करने मे विफल रहे। भारतीय वाणिज्य मंत्री अरूण जेटली का यह कहना अक्षरतः सत्य हैं कि एक खोटे सौदे से अच्छा है कि कोई सौदा ही न हो। बहुपक्षीय व्यापार आपसी लेन देन पर ही टिका है। पश्चिम की कृषि को भारी सब्सिडी दिया जाना उन्मुक्त व्यापार की सबसे बडी बाधा है सबकी उन्नति व प्रगति के समान अवसर के लिये स्वस्थ्य प्रतियोगिता का होना आवश्यक है। साझा हितों की रक्षा की उम्मीद अब जिनेवा बैठक पर ही टिकी हुई हैं किन्तु भविष्य की वार्ताऐं सिएटल और कानकुन के रास्ते न जाये, इसके लिये विकसित देशों को अपनी हटधर्मिता का त्याग कर वैश्विक अर्थ व्यवस्था के हितों को सर्वोपरि रखना होगा।

इस सम्मेलन में नेपाल और कम्बोडिया को सदस्यता प्रदान की गई इस प्रकार अब विश्व व्यापार संगठन के सदस्यों की कुल संख्या 146 हो गयी है।

आलोचकों के अनुसार विश्व व्यापार संगठन एक असाधारण और अपूर्व संगठन है। यह विश्व व्यापार के पुलिस मैन की भूमिका अदा करता है। यह एक ऐसा मंच है। जो तथा कथित नियम आधारित व्यवस्था के तहत किसी भी और प्रत्येक व्यापारिक मामले पर विचार कर सकता हैं और अपना विवाद निपटान प्रणाली के तहत जवाबी कदम उठा सकता है। यह एक विकराल व्यवस्था है। जिसको विकसित देशो और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने अपने हथियार के रूप में कायम किया है। विश्व व्यापार संगठन के अर्न्तगत जिस अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था का निर्माण हो रहा है। उसमें बहुराष्ट्रीय निगमों के अधिकार और कार्य क्षेत्र की असीमित बढोत्तरी अन्तर्निहित है। परम्परागत"गैट" प्रावधानों में बहुराष्ट्रीय नियमों पर विकाश सील देशों के अर्थ तंत्र, समाज और राजनीति पर प्रभुत्व जमाने का माध्यम है।

विश्व के 49 पिछडें देशों में विश्व की 10.7 प्रतिशत आवादी रहती है। परन्तु विश्व के कुल उत्पादन मे उनका हिस्सा सिर्फ 0.5 प्रतिशत है और विश्व व्यापार संगठन के पक्ष में दलीलो के बावजूद विश्व व्यापार में उनका हिस्सा गिरता गया है। और आज 0.4 प्रतिशत के बराबर है।

4. फिलीस्तीन–इजराइल संघर्षः–

पश्चिम एशिया जिसे मध्यपूर्व भी कहते है। अर्न्तकलह का घर बना हुआ है।

फिलीस्तीन का विभाजन तथा इजराइल का जन्मः–

फिलीस्तीनी समस्या और इजराइल का जन्म इस संघर्ष का मूल है। भूमध्य सागर के पूर्वी तट पर स्थिति पश्चिमी एशिया का यह भू भाग लगभग 4000 वर्शो का इतिहास लिये हुये है। जो ईजील, हिबू क्रूसेडर मामलूक, तुर्क , अरबों व अंग्रेजो के अधीन रहकर 1948 में अरब व इजराइल राज्यों में विभक्त हो गया। फिलीस्तीन का हृदय स्थल यरूशलम 2000 वर्शो से यहूदी ईसाई व मुसलमानों का सबसे बडा धार्मिक केन्द्र रहा है। और इस महत्ता से तीनो धर्मों ने समय–समय पर इस पर अधिकार करने के अथक प्रयास किये। फिलिस्तीन प्रथम विश्व युद्ध के बाद इसे राष्ट्र संघ के तत्वाधान में मैण्डेट बना दिया गया। ब्रिटिश नियंत्रण के पष्चात इस क्षेत्र में यहूदी लोग अधिक संख्या में आकर बसने लगे तथा उनका अनुपात 1920 में 16 प्रतिशत से 1947 में 24 प्रतिशत हो गया। बाहर से आये यहूदी स्थानीय अरब लोगों से अधिक

शिक्षित सम्पन्न एवं कर्मठ थे अतः उन्होंने कृशि, उद्योग, आदि में प्रगति की और समस्त व्यापारिक प्रतिश्ठानों को अपने नियंत्रण में कर लिया। फल स्वरूप अरब निवासियों में प्रतिरोध की भावना जाग्रत हुई। उन्होने 1939 में बाहर से आने वाले यहूदियों की संख्या प्रति वर्ष 15 हजार करने की मॉग की किन्तु यूरोप के यहूदी फासिज्म के शिकर होने के कारण यहॉ आने को इच्छुक थें। ग्रेट ब्रिट्रेन ने फिलीस्तीन में अपने अधिकारों का उपयोग दोहरी राजनीति के अर्न्तगत किया। उसने प्रथम विश्व युद्ध के समय अरबों से वायदा किया कि युद्ध में विजय के पष्चात फिलीस्तीन को अरब राष्ट्रों के साथ मिला दिया जायेगा। और अरब तुर्क सासन से मुक्त हो जायेगा इसी समय धनी व सम्पन्न यहूदी समाज को भी ग्रेट विट्रेन ने फिलीस्तीन में बसने का निमंत्रण दे दिया बिट्रेन ने ऐसा इसलिये किया क्यों कि उस पर संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार व उसके यहूदी समाज का दवाब पड रहा था वैसे तो 2 नबम्वर 1917 को बिट्रिश विदेश मंत्री बेलफोर ने यहूदियों के राष्ट्रीय घर की स्थापना की घोषणा की थी यह बेलफोर घोषणा कहलाती है जिससे कहा गया था कि ब्रिटिश सरकार फिलिस्तीन में यहूदियों के लिये एक राष्ट्रीय ग्रह का निर्माण करना चाहती है। विश्व के यहूदियों ने इस घोषणा को फिलीस्तीन उन्हें सौपने का ब्रिटिश वायदा मान लिया और दुनियॉ भर से यहूदी फिलीस्तीन में आकर बसने व वसाये जाने लगे अप्रैल 1920 में मित्र राष्ट्रों से बिट्रेन को फिलिस्तीन का मैण्डेट मिला था और जून 1922 में ब्रिटिश सरकार ने सरकारी घोषणा कर फिलिस्तीन में यहूदी राष्ट्रीय घर स्थापित करने की पुष्टि कर दी। जून 1922 में अमरीका ने भी इसकी पुष्टि कर अपने राज्य के यहूदी समाज का विश्वास जीत लिया। ग्रेट बिट्रेन ने घोषणा के बाद विश्व के सभी भागों से और मुख्यतः यूरोपीय राज्यों से यहूदियों को यहॉ तेजी से बसाया और अरबों की भूमि उन्हें हस्तान्तरित कर दी इससे धार्मिक द्वन्द्ध ने राजनीतिक संघर्ष का रूप ग्रहण कर लिया और अरबों तथा यहूदियों में मार काट बढ गयी। संघर्ष दिन प्रतिदिन नियोजित रूप से बढता गया। और 1937 तक स्थिति इतनी खराब हो गयी कि ब्रिटिश सरकार इसे अपने अधिकार के अर्न्तगत अनुशासित रखने में असमर्थ हो गयी इस समस्या के समाधान हेतु निर्मित'' मील कमीशन'' ने फिलीस्तीन को अरब व यहूदी सम्भागों में ब्रिट्रेन ने फिलिस्तीन समस्या संयुक्त राष्ट्र संघ को सौप दी। संयुक्त राष्ट्र महासभा ने इस समस्या के समाधान हेतु मई 1947 में 11 राज्यों की एक समिति गठित की जिसमें भारत भी एक सदस्य था इस

समिति के मील कमीशन के निर्णयों की पुष्टि करते हुये फिलिस्तीन को तीन भागों मे विभक्त करने की सिफारिश की–

1–यहूदी राज्य

2–अरब राज्य

3–यरूशलम जिसे अन्तर्राष्ट्रीय न्याय परिशद के अधीन रखना था। 29 नबम्वर 1947 को इसे महासभा ने दो तिहाई बहुमत से स्वीकार कर लिया और 1 अगस्त 1948 से पूर्व ब्रिटिश शासन समाप्त करने का निर्णय दिया। यहूदियों ने इस निर्णय को स्वीकृति प्रदान कर दी। परन्तु अरबों ने इसे ठुकरा दिया। अरब इस बात पर तुले हुये थे कि उनकी मात्रभूमि में कोई विदेशी राज्य स्थापित न हो। दूसरी ओर यहूदी लोग अपना दोनों ही पक्षों ने अपनी इच्छा की पूर्ति के लिये संघर्ष का सहारा लिया और फिलिस्तीन गृह युद्ध का अखाड़ा बन गया।

अब तक अरब व इजराइल के बीच चार युद्ध हो चुके हैं तथा आज भी वही स्थिति बनी हुई हैं जो पहले थी।

<u>फिलिस्तीनी राज्य की घोषणा (नबम्वर 1988):–</u>

15 नबम्वर 1988 को बहरीन में फिलिस्तीनी मुक्त संगठन के नेता यासर अराफात ने इजराइल अधिकृत इलाके में स्वतंत्र फिलिस्तीनी राज्य की स्थापना की घोषणा की फिलिस्तीन राष्ट्रीय परिषद की तीन दिन तक चली बैठक के पष्चात श्री अराफात ने घोषणा की कि इजराइल अधिकृत पश्चिमी तट और गाजा पट्टी इस राष्ट्र में शामिल किये रहे है। जिसकी राजधानी यरूशलम बनायी गयी है। अराफात की इस घोषणा के बाद ट्यूनीशिया, इराक, मलेशिया, अल्जीरिया, सऊदी अरब, कुवैत तथा भारत ने इस नये फिलिस्तीनी राज्य को मान्यता प्रदान कर दी।

<u>पश्चिम ऐशिया में शान्ति की खोज:–</u>

खाडी युद्ध की समाप्ति के बाद मैड्रिड (अक्टूबर 1991 तथा वासिंगटन जनवरी–मई 1992) में अरब इजराइल समस्या के समाधान के लिये शान्ति सम्मेलन आयोजित किये गये। इसे अमरीका और सोवियत संघ दोनों ने संयुक्त रूप से प्रायोजित किया।मैड्रिड सम्मेलन का महत्व इस तथ्य में है कि 40 वर्शो के विरोधियों को बातचीत के लिये आमने सामने लाने में सफल रहा। इसमें इजराइल और लेवनान, सीरिया, जोर्डन के अरब प्रतिनिधि मण्डल तथा फिलिस्तीनियों ने भाग लिया। सम्मेलन में अरबों ने तीन प्रमुख्य माँगें सामने रखी।

फिलिस्तीनीयों के लिये सार्वभौमिक राज्य की स्थापना,पवित्र शहर यरूशलम पर अरबों का नियंत्रण और गाजा–पटटी व पश्चिमी किनारा क्षेत्रों में यहूदियो की और वस्तियॉ बसाने पर रोक और गोलन पहाडी क्षेत्रों की सीरिया को वापसी। शुरू में इजराइल ने सभी मॉगों को नामंजूर करते हुये कहा कि मुख्य प्रश्न अरब देशों द्वारा इजराइल को मान्यता देने का है। सम्मेलन समाप्त हो गया और अरबों एवं इजराइल के बीच गहरे मतभेद बने रहे।

जनवरी 1992 में वाशिंगटन में फिर प्रारम्भ हुई जिसमें इजराइली तथा फिलीस्तीनी प्रतिनिधि मण्डलों ने विवादास्पद मामलों पर आमने सामने बैठकर चर्चा की। इजराइल को अधिकार दिये जाने अथवा उन्हें राज्य का दर्जा दिये जाने पर विशेश रूप से विचार विमर्श हुआ। फिलीस्तीनी समस्या के संदर्भ में इजराइल ने अनाधिकृत क्षेंत्रों में वस्तियों की यथास्थिति बनाये रखने की फिलीस्तीनी मॉग को अस्वीकृत कर दिया। इजराइल और सीरिया के बीच चीत भी इस आधार पर रूक गई। कि सीरिया पहले गोलन हाइट्स के मामले पर विचार करना चाहता था जब कि इजराइल पहले शान्ति के समग्र प्रश्न पर चर्चा करना चाहता था।

वाशिंगटन में अरब इजराइल वार्ता का चौथा दौर मार्च 1992 में सम्पन्न हुआ किन्तु वार्ता में गति रोध उत्पन्न हो गया क्योकि इन्ही दिनो शिया मुसलमानो के संगठन के अध्यक्ष शेख अस्वास मुसावी की हत्या कर दी गई । वे एक इजराइली हैलीकोप्टर से किये गये हमले में मारे गये थे।

मई 1992 में वाशिंगटन में सम्पन्न पश्चिम एशिया शान्ति वार्ता के इस दौर में भारत ने हिस्सा लिया। वाशिंगटन दौर की वार्ता पॉच हिस्सों में होने वाली शान्ति वार्ता का एक अंग है। जो विभिन्न देशों की राजधानियों मे शुरू हो रही है। सुरक्षा निःशस्त्रीकरण सरणार्थी समस्या, जल संसाधन, और आर्थिक मुदद्ों पर होने वाली सभी बैठकों में भारत मौजूद रहेगा। पश्चिमी एशिया शान्ति वार्ता को सफल बनाने के लिये संयुक्त राज्य अमरीका को ईमानदार मध्यस्थ की भूमिका लगातार निभानी पडेगीं। जो उसने मैड्रिड और वाशिंगटन में निभाई है। वस्तुतः मैड्रिड सम्मेलन का बुलाया जाना बडे स्तर पर अमरीकी राजनीति का परिणाम था और अमरीकी ने ईमानदार मध्यस्थ की भूमिका निभाई। वार्ता में आये गतिरोध को दूर करने और शान्ति प्रक्रिया वहाल करने के एक प्रयास के रूप में 19 जुलाई 1992 को अमरीकी विदेश मंन्त्री जेम्स ब्रेकर ने पश्चिम एशिया का पॉच दिन का दौरा किया राष्ट्रपति बुश ने सार्वजनिक तौर से अरबों की एक प्रमुख मॉग का समर्थन किया था जिसमें इजराइल से कहा गया कि

वह पश्चिमी किनारे और गाजापटटी के अधिकृत क्षेत्रों में यहूदियों की वस्तियाँ बसाने से बाज आये शान्ति के लिये समझौते की तत्परता दिखाना इजराइल की भी विवशता बन गयी है। क्यों कि वहाँ संसाधनों का निरन्तर ह्रास होता जा रहा है। नवनिर्वाचित इजराइली प्रधानमंत्री राविन ने स्पष्ट कहा कि ''मैं शान्ति प्रक्रिया को तेज करना चाहता हूँ।'' अपने चुनाव अभियान के दौरान भी रोविन ने घोषणा की थी कि वे एक वर्ष की अवधि में फिलीस्तीनियों को सीमित स्वशासन का अबसर प्रदान कर देंगें।

13 दिसम्बर 1993 को वाशिगटन में फिलीस्तीन को सीमित स्वायत्तता देने सम्बन्धी समझौते पर हस्ताक्षर हुये। समझौते पर हस्ताक्षर के बाद यासर अराफत और इजराइली प्रधानमंत्री रॉविन ने हाथ मिलाए। समझौते के तहत फिलीस्तीन मुक्त संगठन ने इजराइल को और इजराइल ने फिलीस्तीनी मुक्त संगठन को मान्यता दे दी। इस समझौते के तहत इजराइल अधिकृत गाजा पटटी और पश्चिमी तट जेरिको में फिलीस्तीनियों को सीमित स्वतत्रता देने का भी प्रावधान है। इजराइली प्रधानमंत्री राविन के शब्दों में ''यह समझौता ऐतिहासिक है और इससे समूचे पश्चिम एशिया क्षेत्र की परिस्थतियाँ बदलेंगीं।

अरब – इजराइल विवाद अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर गहरा प्रभाव डाले हुये है।

1– अरब–इजराइल तनाव के कारण ही मध्य पूर्व के भूमध्य सागरीय क्षेत्र में महा शक्तियाँ अपनी नौसैनिक शक्ति के विस्तार के लिये प्रतिस्पर्द्धा करती रही है।

2– अरब इजराइल तनाव से विश्व के अन्य देशों की बिदेश नीतियाँ भी प्रभावित है। उदाहरणार्थ–भारत चाहते हुये भी इजराइल को लम्बे समय तक राजनयिक मान्यता नहीं दे सकता।

3– मध्य पूर्व के संकट से शीतयुद्ध में उग्रता आती रही।

4– तेल कूटनीति ने समूचे विश्व को प्रभावित किया और विश्व आर्थिक संकट का प्रमुख कारण यही है।

5– मध्य पूर्व समस्या ने विश्व राजनीति में मजहब की भूमिका का उभारा है।

<u>इजराइल फिलीस्तीनी समझौता(1994):–</u>

लगभग आधी सदी से स्वतंत्र फिलीस्तीनी के लिये खून बहा रहे फिलीस्तीन मुक्त संगठन (P.L.O.) का सपना जो मई 1994 की आधी रात के बाद मिश्र की राजधानी कहिरा में सम्पन्न हुये राविन अराफात करार के बाद साकार हुआ। इस दिन से गाजा पटटी और

जोर्डन नदी के पश्चिमी तट पर अवस्थिति जेरिको नगर के आस–वाला कुछ क्षेत्र एक स्वायत्त फिलिस्तीनी क्षेत्र वन गया।

फिलिस्तीनी को जो मिला है वह मात्र एक शुरूआत है और अव अगर वह चाहे तो इसे धीरे –2 और भी आगे बढा सकता है ।लेकिन उसे इसके लिये इजराइल के प्रति वृद्धमूल हो चुकी हो अपनी शत्रु भावना से मुक्ति पानी होगी ।1948 में इजराइल के अस्तित्व में आने के बाद से ही अरबो में जिनमे फिलिस्तीनी भी आते हैं यह शत्रु भाव गहरे बैठा हूआ था । इसी का परिणाम था सितम्बर 1967 का वह छः दिनी युद्ध जिसमे अरवो का गाजा पट्टी , गोलन पहाडियां और पश्चिमी तट की काफी भूमि गवानी पडी थी इसके बाद भी उन्होने इजराइल के अस्तित्व को नहीं स्वीकारा और गुत्थी उलझती ही गई। फिलिस्तीनियो ने इसके उपरान्त भी खून खराबे की नीति जारी रखी और दोनो में दुश्मनी गहरी होती गई मिश्रजो इजराइल को कभी फूटी आंखो से भी देखना पसन्द नही करता था सबसे पहले सही राह पर आया और उसने कैम्प डेविड सन्धि हस्ताक्षर कर के इजराइल को एक ठोस वास्तविकता के रूप मे स्वीकार कर लिया हालाकि उसके इस कार्य से अरब जगत उससे नाखुश हो गया परन्तु उसने इसकी ज्यादा परवाह नही की। बहरहाल यासिर अराफत भले ही एक अग्निमुख कमाण्डो नेता रहे हों लेकिन आधुनिक इतिहास के संकेतों को उन्होंने भली–भॉति समझा है। और एक परिपक्व राजनीतिज्ञ की भॉति उसी के अनुरूप अपनी राह भी चुन ली है। आधे–अधूरे स्वशासी क्षेत्र पर उनका यों राजी हो जाना इसका प्रमाण है। बदली हुई परिस्थितियों में उनके सामने और कोई विकल्प ही नहीं रह गया था फिलिस्तीनी मुक्त संगठन का सबसे बडा समर्थक मित्र था सोवियत संघ जो समाप्त हो चुका है। और अमरीकी जो इजराइल का अंघोषित संरक्षक है। अकेली विश्व शक्ति बन चुका हैं। ऐसे में अराफत के आगे सारे रास्ते बन्द हो चुके है। यह उम्मीद जगी है। कि लगभग आधा शदी तक भंयकर रक्तपात और उथल पुथल के बाद मध्य पूर्व में शान्ति लौट आई है। पर सभी विशेषज्ञ इस बारे में एक मत नहीं है।

अब तक इस क्षेत्र में रहने वाले फिलीस्तीनी कट्टर पंथी यहूदियों के हाथों उत्पीडित थें उन्हें घेर बाड कर जिस तरह की मलिन वस्तियों में जीवन यापन के लिये विवश किया गया था वह स्थिति पाशविक और अमानवीय ही कही जा सकती थीं। किशोर फिलीस्तिनियों की एक पीडी इन यहूदियों को अपना शत्रु समझती थी। सम्प्रदायिक वैमस्य और जातीय

वैमस्य के बीज गहरे बोये जा चुके है। स्वशासन का अर्थ स्वयं मेव यह नही लगाया जा सकता कि स्थिति सामान्य हो गयी है। इस भू भाग को स्व शासित या स्वायत्त घोषित कर देने से विकास की समस्याऐं हल नही हो जाती संसाधनों को जुटाना अभी भी बचा रह जाता है। मुक्ति संग्राम का छापामारी और बडे अनौपचारिक राजमय में फिलिस्तीनी कितना ही कुशल क्यों न सिद्ध हुये हो अभी उन्हें यह प्रमाणित करना है। कि रोजाना काम आने वाले उवाऊ कौशल उन्हें हासिल है। इस प्रदेश में रहने वालों की अपेक्षा अब यासिर अराफत और उनके सहयोगियों से दूसरी तरह की होगी, रोटी,कपडा,और मकान,स्वास्थ्य सेवाऐं और स्कूल सुलभ करवाने वाली।

जहॉ एक ओर इजराइल में कुछ लोग इस वात से निश्चिंत हुये है। कि समस्या के समाधान की दिशा में कम से कम पहला कदम तो उठाया गया है। वही ऐसे लोगों की भी कमी नही जिन्हें लगता है कि सरकार ने बहुत गलत कदम उठाया है। अनेक इजराइली नेताओं ने वेहिचिक यह बात कही कि उन्हें लगता है कि उनके पुरखों का खून–पसीना व्यर्थ ही बहाया गया था उनकी नजर में अराफत जैसे फिलीस्तीनी हत्यारे अपराधी है। जिन्हें दडिंत करने के स्थान पर पुरस्कृत किया गया है।

और भी पेचीदगियॉ है मध्य पूर्व का समस्या का सबसे अहम पहलू भले ही फिलिस्तीनियों की शरणार्थी समस्या और क्रान्तिकारिता रही हो पर यह समझना गलत होगा कि मध्य पूर्व में अशान्ति सिर्फ इनके कारण रही है। अनेक अरब राज्यों का संस्कार सामंती कट्टर, धार्मिक और मध्य युगीन है। जिनकी छवि (जैसे ईराक कमोवेश धर्म निरपेक्ष है वे भी निरंकुश तानाषाही के कारण अस्थिर या असहज जान पडते है।) फिलीस्तीनी अरब और इजराइलियों के बीच जो समझौता हुआ वह इस समस्या के छोटे से हिस्से को छूता भर है।

एक ओर फिलिस्तीनी सैनिक दृष्टि से अक्षम दूसरी ओर उनकी शरण और सहायता देने वाले अरब राष्ट्र संकट ग्रस्त है। तीसरे सोवियत संघ के विघटन के बाद अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य नाटकीय ढंग से बदल चुका है। ऐसी परिस्थिति में जब पूरी रोटी मिलने की कोई गुंजाइश न हो तब आधी को ग्रहण करना ही बुद्धिमानी ही कहा जा सकता है। यासिर अराफत के सामने कोई और विकल्प नही बचा था।

समझौता(1997):–

जनवरी 1997 में इजराइल के प्रधानमंत्री बेंजामीन नेतान याहू और फिलिस्तीनी मुक्ति मोर्चे के चेयर मैन यासर अराफत ने एक समझौते पर हस्ताक्षर किये जा हिबरोन(HEBRON) के बारे में था परन्तु इससे यह बात स्पष्ट नहीं हुई कि फिलिस्तीनियों को भूमध्य सागर और जार्डन नदी के बीच की भूमि मिलेगी। या नहीं अब स्थिति यह है कि एक लाख चालीस हजार अरब जेरूशलम में और बीस हजार हिबरोन में इजराइली अधिपत्य के नीचे रहेंगे हिबरोन वह जगह है। जहॉ सन् 1929 में अरबों ने साठ यहूदियों को मार दिया था। यही 1994 में एक यहूदी ने 29 अरबों की हत्या कर दी थी। हिबरोन का यह स्थान अरब और इजराइल दोनों के नागरिकों के लिये विशेश महत्व रखता है। वहॉ अल इब्राहिमी मस्जिद हैं जिसे यहूदी लोग कुल गुरूओं का मजार कहते है। लगता है कि बात इस पर अटक गयी है कि हिबरोन में फिलिस्तीनियों को कितनी आजादी दी जाये और वहॉ के यहूदी उपनिवेश की कहॉ तक सुरक्षा का प्रबन्ध किया जाये। इस मजार मस्जिद के बारे में क्या किया जाए उधर इजराइली मंत्री मण्डल के सदस्यों ने नेतान याहू और यासर अराफत के इस समझौते पर नाराजगी जाहिर की इधर अरबों को बराबर इस बात की चिन्ता बनी हुई है कि जेरूशलम में कब्जा कब मिलता है?

5. हिन्द महासागर :—

19वीं शताब्दी के आरम्भ में अमरीकी नौ सेना विशेषज्ञ अल्फ्रेड माहन ने कहा था। कि जो भी देश हिन्द महासागर को नियंत्रित करता है। वह एशिया पर वर्चस्व स्थापित करेगा। यह महासागर सात समुन्द्रों की कुन्जी है। 21वीं शताब्दी में विश्व का भाग्य निर्धारण इसकी समुद्री सतहों पर होगा। माहन का यह कथन अमरीका के लिये ही नही, बल्कि सभी विश्व शक्तियों के लिये नौसैनिक नीति निर्धारण करता रहा है। अमरीका और सोवियत संघ दोनों हिन्द महासागर में अपना नौसैनिक वर्चस्व कायम करने के लिये आज कटिबद्ध प्रतीत होते है।

यों तो हिन्द महासागर 18वीं शताब्दी में भी यूरोप के उपनिवेश वादी देशों की प्रतिस्पर्धा का केन्द्र रहा था कि 18वी से 20वीं शताब्दी के अधिकांश काल में यह वस्तुतः ब्रिटिश झील बना रहा। हिन्द महासागर में शक्ति शून्यता की स्थिति तब पैदा हुई जब ग्रेट बिट्रेन ने स्वेज पूर्व के सैनिक ठिकानों से हट जाने की योजनाओं को क्रियान्वित करने का निश्चय कर लिया। 1967 में जब उसने इसकी घोषणा की तो सामरिक विशेशज्ञों ने यह सहज ही अनुमान

लगा लिया कि बिट्रेन स्वयं हिन्द महासागर से हटकर वहाॅ अमरीका का नौ सैनिक अड्डा वर्चस्व स्थापित कराने के लिये प्रयत्नशील हैं। शायद इसीलिये एक वर्ष पूर्व ही उसने डिएगो गार्सिया वांशिंगटन को सौप दिया।

लन्दन और वाशिंगटन की इन चालों से सोवियत संघ वौखला उठा। उन दिनों मास्कों के नौ सैनिक हलकों में सर्वाधिक चर्चित व्यक्ति एडमिरल मारशकोव हुआ करता था जो यह मानता था कि कोई भी राष्ट्र समुचित नौ सैनिक शक्ति के बिना विश्व शक्ति नहीं बन सकता। उसने सोवियत नौ सेना के लिये एक बडी योजना तैयार की जिसके अर्न्तगत 10 वर्ष में ही सोवियत संघ को नौ सैनिक शक्ति के क्षेत्र में अमरीका के समकक्ष हो जाना था। इसके साथ ही सोवियत पनडुब्बियाॅ और लडाकू जहाज हिन्द महासागर के तल में और सतह पर मचलने लगें। इन गतिबिधियों ने अमेरीका के लिये हिन्द महासागर की रिक्तता को शीघ्रता शीघ्र भरना आवश्यक बना दिया और इस प्रकार डिएंगोगार्सिया हिन्द महासागर में अमरीकी नौ सैनिक शक्ति का एक मात्र लंगरगाह बन गया।

<u>डिएगो गार्सिया विषयक अमरीकी रणनीतिः—</u>

डिएगोगार्सिया को लेकर पिछले डेढ दशक से जितने समाचार प्रकाशित हुये है। उनसे विश्व के भावी घटनाक्रम में इसके सामरिक महत्व को समझा जा सकता है। यह द्वीप चागोस द्वीप समूह का अंग्रेजी ''वी'' आकार का द्वीप है। और 15 मील लम्बा तथा 4 मील चौडा है। इस द्वीप का नाम करण 1932 में इसे खोजने वाले पुर्तगाली नाविक के नाम पर किया गया है यह द्वीप 1815 तक फ्रान्स के अधीन रहा, किन्तु बाद में बिट्रेन ने हिन्द महासागर स्थिति अन्य फ्रासीसी द्वीपों के साथ—साथ इसे भी अपने अधिकार में लिया।

डिएगोगार्सिया यद्यपि मारीशस से 1987 किमी0 उत्तर पूर्व में स्थित है। तथापि 1965 से पहल तक इसका प्रशासन इसे मारीशस का हिस्सा मानकर ही चलाया जाता रहा। 1965 में बिट्रेन ने मारीशस के अर्ध—स्वतंत्र शासकों से एक समझौता करके डिएगोगार्सिया समेत सम्पूर्ण चागोस द्वीप समूह पर अधिकार कर लिया। इधर 1968 में मारीशस को पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हुई किन्तु इसके एक वर्ष पूर्व ही बिट्रेन ने डिएगोगार्सिया और अन्य द्वीप भारी मुनाफे पर अमरीका को सौप दिया। बदले में अमरीका ने 115 लाख डालर के शस्त्रास्त्र बिट्रेन को मुफ्त में सौप दिये अमरीका और बिट्रेन के बीच हुये समझौते के अनुसार उपरोक्त द्वीपों का स्वामित्व

बिट्रेन के पास रहेगा। किन्तु दोनों देशों की सुरक्षा की दृष्टि से अमरीका वहॉ सैनिक अड्डे बनाने और सैनिक साज–सामान तथा सैनिकों का जमाव करने के लिये स्वतंत्र होगा।

वस्तु स्थिति यह थी कि अमरीका डिएगोगार्सिया पर एक सैनिक अड्डा बना चुका था और केवल उसे विकसित करने का काम रह गया था। शायद यही कारण था कि 1970 और 1973 के बीच वहॉ निर्माण कार्य में खर्च की गयी राशि को गुप्त रखा गया। यद्यपि अधिकारिक तौर पर अमरीका ने स्वीकार कर लिया था कि वहॉ 800 फुट लम्बी हवाई पट्टी और एक रेडियो स्टेशन का निर्माण पूरा कर लिया गया है। इसके लिये 174 नौ सैनिक तकनीशियन नियुक्त किये गये।

दूसरे दौर (1974) में अमरीका ने डिएगोगार्सिया के विस्तार का कार्य किया। वहॉ नौ सैनिक अड्डा बनाने के लिये पहले उसने 2.90 करोड डालर राशि खर्च करने की धोशणा की 1975 में हिन्द चीन में अमरीका की पराजय और पश्चिम एशिया की बिगडती हुई राजनीतिक स्थिति ने अमरीकी प्रशासकों के सम्मुख डिएगोगार्सिया पर एक विशाल सैनिक अड्डे के औचित्य को सावित कर दिया।

अमरीकी बन्धकों को ईरान से छुडाने और तेल आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिये अमरीका ने जो व्यूह रचना की उसका एक आवश्यक अंग डिएगोगार्सिया में सात विशाल तैरते हुये शस्त्रागार बनाना था।

<u>भारतीय नीतिः</u>–

यहॉ एक सवाल उठता है कि हिन्द महासागर में बडी शक्तियों की प्रतिस्पर्धा को देखते हुये भारत क्या नीति अपनाये इस सन्दर्भ में के0 एम0 पाणिकर की टिप्पणी उसके लिखे जाने के 3 दशक बाद भी सार्थक है। उनका कहना था। " हिन्दमहासागर के विषय भारत की दीर्घ कालीन और अल्प कालीन दोनों तरह की नीति जरूरी है। इस क्षेत्र में अपने हितों की रक्षा के लिये भारत एक समर्थ नाविक शक्ति के रूप में विकास अनिवार्य है। इस उददे्श्य की प्राप्ति तभी हो सकती है।, जब भारत एक प्रमुख औद्योगिक शक्ति के रूप में उभरे और उसकी वैज्ञानिक व तकनीकि उपलब्धियॉ अन्य विकसित देशों की बराबरी करने वाली हो।

कुछ वर्ष पहले जब मालद्वीप में गय्यूम सरकार के खिलाफ तख्तापलट की साजिश की गयी थी। तब भारत ने ही नाकाम किया था। आज भी भारतीय नौ सैनिक यदि मन्नार की खाडी में तैनात नही रहते तो लिट्टे उग्रवादियों की गतिबिधियों के और भी घातक परिणाम

तमिलनाडू और भारत पर पड सकते है। अरब सागर मे भी दुबई और अन्य खाडी राज्यों से बडे पैमाने पर तस्करी होती है जो अप्रत्यक्ष परन्तु घातक रूप से देश की आर्थिक क्षमता का क्षय करती है। भारत के साथ शत्रुता का भाव रखने वाला कोई देश हजारों मील फैले भारतीय सागर तट का दुरूपयोग, विघटन कारी घुस पैठ या अलगाव वादी प्रवृत्तियों को वढावा देने के लिये कर सकता है।

यह बात भी अनदेखी नही की जा सकती कि भारतीय भू भाग के सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण कुछ हिस्से हिन्द महासागर स्थिति द्वीप समूह है।। इनमें अंडमान, निकोवार, लक्षद्वीप भारतीय भू भाग से काफी अलग थलग है हम उनकी ओर से अपनी ऑखे नही मूँद सकते। 1951 में खाद्यान ऋण पाने के लिये जब भारतीय राजदूत श्री मती विजय लक्ष्मी पण्डित ने अमरीका के सामने हाथ पसारे तो उन्हें बुरी तरह अपमानित– तिरस्कृत होना पडा।

कोरिया हो या स्वेज संकट, हिन्द चीन हो या वर्लिन में तनाव 1950से 1954–55 के बीच हुये हर महत्व पूर्ण अनतराष्ट्रीय घटनाक्रम में भारत और अमरीका एक दूसरे के विरूद्ध खडे दिखायी दिये। पंचशील समझौते पर हस्ताक्षर के बाद भारत स्वयं को चीन के मित्र हितैशी के रूप में पेश कर रहा था और स्टालिन की मृत्यु के बाद सोवियत संघ के साथ नेहरू सरकार के सम्बन्ध सहज और मधुर हुये। अमरीका के लिये ये बातें सहज नहीं थी।

6. संयुक्त राष्ट्र संघ का भविष्य :–

4 से 11 फरबरी 1945 को काला सागर में स्थिति क्रीमिया द्वीप के याल्टा नामक स्थान पर हुये सम्मेलन में अमरीकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट, बिट्रिश प्रधानमंत्री चर्चिल और सोवियत प्रधानमंत्री स्टालिन ने भाग लिया। इस याल्टा सम्मेलन ने निर्णय लिया कि विश्व संगठन की स्थापना के सम्बन्ध में 25 अप्रैल 1945 को सेन फ्रासिस्को नगर में राष्ट्रों का एक सम्मेलन बुलाया जाय। 1 मार्च 1945 तक जर्मनी के विरूद्ध युद्ध घोषित करने वाले समस्त राष्ट्रों को इसमें निमंन्त्रिण किया जाये। पॉच देशों संयुक्त राज्य अमरीका, बिट्रेन , सोवियत संघ फ्रॉस और चीन को इसकी सुरक्षा परिशद में स्थायी स्थान और निशेधाधिकार प्रदान किया जाये।

25 अप्रैल से 26 जून 1945 को सेन फ्रॉसिस्कों सम्मेलन हुआ। जिसमें 50 देशों को निमंन्त्रित किया गया। इस सम्मेलन के द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ के संविधान का निर्माण हुआ 26 जून 1945 को उसमें भाग लेने वाले राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने उसके संविधान को अन्तिम रूप से स्वीकार कर उस पर अपने हस्ताक्षर किये राष्ट्रों द्वारा स्वीकृत चार्टर की कमियों की

ओर इशारा करते हुये पामर एवं परकिंस ने कहा। कि " हॉलाकि प्रतिनिधियों ने इस चार्टर के कुछ प्रावधानों की आलोचना की। फिर भी उन्होनें समझौता वादी रूख अपनाया और कई अपूर्णताओं को स्वीकार करते हुये अंन्ततः संयुक्त राष्ट्र संध का निर्माण कर डाला। यहाँ पर उल्लेखनीय है कि हस्ताक्षर कर्ताओं में से अनेक राष्ट्रों द्वारा संयुक्त राष्ट्रसंघ की सदस्यता ग्रहण करने के लिये उनकी संसद की स्वीकृति आवश्यक थी। यह प्रक्रिया 24 अक्टूबर 1945 को पूरी हो गई और इसी दिन संयुक्त राष्ट्र संघ की ऑपचारिकत रूप से स्थापना हुई। इसी कारण 24 अक्टूबर 1945 को संयुक्त राष्ट्र संघ का जन्म दिवस कहा जाता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ में अमरीका की भूमिकाः–

भारत इस अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के प्रारम्भिक सदस्यों में से एक था। 1945 में भारत यद्यपि स्वतंत्र नही था पर द्वितीय विश्व युद्ध के समय मित्र राष्ट्र(बिट्रेन)के उपनिवेश होने के कारण उसने सेन फ्रान्सीसिकों सम्मेलन में भाग लिया 1947 में बिट्रिश उपनिवेश वाद के पंजे से मुक्त होने के बाद उसने संयुक्त राष्ट्र संघ में स्वतंत्र सदस्य राष्ट्र के रूप में प्रवेश किया। स0 रा0 संघ विषयक अध्ययन के विशेषज्ञ के0 पी0 सक सेना का मानना है। हे। विदेश नीति के उददेश्यों की दृष्टि से गुट निरपेक्ष भारत के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ उसकी विदेश नीति के मुख्य उपकरण और साधन समझा जाता रहा है। भारत उन गिने चुने सदस्य राष्ट्रों में है जिसका क्रिया कलाप यह स्पष्ट दर्शाता है। कि वे संयुक्त राष्ट्र संध को सबल बनाना चाहते है।

गुट निरपेक्षता एवं शान्तिपूर्ण सह– अस्तित्व भारतीय विदेश नीति के आधार भूत सिद्धान्त रहे है। जिनके जरिये हम दुनिया में शान्ति एवं सुरक्षा लाना चाहते है। भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज पर इस उददेश्य को प्राप्त करने के लिये रंगभेद, जातिभेद, नस्लभेद, आर्थिक शोशण उपनिवेशवाद, नव उपनिवेश बाद एवं सम्राज्यवाद का आरम्भ से ही डटकर विरोध किया है। इन लक्ष्यों में सफलता पाने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ में सदैव आवाज उठाई है।

भारत में आरम्भ से ही संयुक्त राष्ट्र संघ में अफ्रो– एशियाई एवं तातीनी अमरीकी महा द्वीप के देशों में विद्यमान उपनिवेश वाद की कडी आलोचना की और उसे मानव गरिमा के अपमान की संज्ञा दी। उसने कहा कि उपनिवेश वाद विश्व शान्ति एवं प्रगति में बाधक ही नही अपितु संयुक्त राष्ट्र संघ चार्टर का उल्लंघन है।

संयुक्त राष्ट्र संघ का भविष्यः—

संयुक्त राष्ट्र संघ के भविष्य के बारे में विद्वानों के मौटे तौर पर दो प्रकार के विचार हैं कुछ विद्वानों का मानना है कि यह संगठन अधिक तर अन्तर्राष्ट्रीय संकटों के हल में असफल रहा है जिससे उसका भविष्य उज्जवल नही माना जा सकता। किन्तु अधिकॉश विद्वानों का विचार है कि उसका भविष्य उज्जवल है वे यह बात संयुक्त राष्ट्र संघ की असफलताओं का हवाला देते हुये तुलनात्मक मूल्यॉकन करके प्रकट करते है। इस बारे मे क्लार्क एम0 आईखेल वर्जर का कहना है कि " राष्ट्रो ने भले ही कुद क्षणों के लिये इसकी उपेक्षा की हो किन्तु प्रायः वे इसमें लौट आते है। क्यों कि यही एक ऐसा माध्यम है। जहॉ विश्व की समस्याओं का समाधान निकाला जा सकता है।

1— प्लानों एवं रीग्स के अनुसार" अनेक बार तो संयुक्त राष्ट्र संघ की उपस्थिति मात्र ने ही प्रतिद्वन्द्वियो को संतुलित किया है और घटनाओं की दिशाओं पर प्रभाव डाला है।

2— पामर एवं परकिंस का मानना है। कि संयुक्त राष्ट्र संघ ने अपने आप को राष्ट्रों के जीवन में अपरिहार्य बना दिया है।

3— इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ अन्तर्राष्ट्रीय समाज में एक कार्यात्मक वास्तविकता बन गया है।

असल में संयुक्त राष्ट्र संघ के भविष्य को खराब बताने वाले विशेषज्ञ अनेक बातों को भूलते है। वे संगठन की इन मर्यादाओं— सीमाओं को नजर अंदाज करते है। जिस कारण वह विश्व शान्ति एवं सुरक्षा स्थापित करने में अपेक्षित सफलताऐं हॉसिल नही कर पाया। उसकी प्रमुख सीमाऐं— मर्यादाऐं निम्नांकित है:—

क— राष्ट्रीय सरकार की तरह संयुक्त राष्ट्र संघ कोई विश्व सरकार नही हैं जिस कारण वह अपने निर्णय मानने के लिये राष्ट्रों को बाध्य नही कर सकता।

ख— राष्ट्रीय सरकार के समान उसके पास अपनी सेना नही है जो कही आक्रमण होने पर उचित सैनिक कार्य वाही कर सके।

ग— महा शक्तियों को वीटो का अधिकार दे देने से वह अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संकटों में असमर्थ हो जाता है।

घ— संयुक्त राष्ट्र संघ विश्व सरकार न होकर राष्ट्रों के मध्य वाद—विवाद के लिये एक अन्तर्राष्ट्रीय मंच की सुविधा प्रदान करता है।

इस प्रकार यदि संयुक्त राष्ट्र संघ की उपरोक्त मर्यादाओं को मदद् नजर रखते हुये। उसकी असफलताओं और सफलताओं का मूल्यॉकन किया जाए तो निसंकोच कहा जा सकता है कि उसका भविष्य उज्जवल है अनेक असफलताओं के बाबजूद उसकी सफलताऐं भी कम नही है। जिससे आषा की जा सकती हैं कि वह अपनी स्थापना के घोषित उदद्श्यों की प्राप्ति में सफल होगा। यदि हम चाहते है कि संयुक्त राष्ट्र संघ 21वीं शताब्दी मे महत्व पूर्ण भूमिका निभाये और तीसरी दुनिया के देश इसकी गतिविधियों में महाशक्तियों का पिछ लग्गू भर न बने रहे तो नवोदित राष्ट्रों के नेताओं को अपने दिलों दिमॉग अच्छी तरह टटोलने होंगें। तथा उन्हें अपना अधिगम अनुशासित, मानवाधिकारों का पोशण करने वाला और जनतांत्रिक रखना होगा।

नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था और भारत अमरीका सम्बन्धः—

भारत के प्रधानमंत्री नेहरू जी ने एक बार कहा था कि आर्थिक स्वाधीनता के बिना राजनीतिक आजादी कोई अर्थ नही रखती। वस्तुतः अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का मूल विषय राष्ट्र के आर्थिक हितों का सम्पादन ही है। सांस्कृतिक एवं सामरिक राजनय की सतरंजी चालें इस राष्ट्रीय हित के सन्दर्भ में ही समझी जा सकती हैं हाल के वर्शो में आर्थिक राजनय का क्रमशः बढता महत्व अन्तर्राष्ट्रीय में स्वीकार करता रहा है।

नई विश्व अर्थ व्यवस्था की पृष्टभूमिः—

ऐतिहासिक दृष्टि से अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का आर्थिक आयाम द्वितीय विश्व युद्ध के बाद तब उद्घाटित हुआ, जब अमरीका ने मार्षल योजना के तहत युद्ध से ध्वस्थ यूरोपीय देशों के पुर्ननिर्माण के लिये आर्थिक सहायता कार्यक्रम आरम्भ किया। इसके साथ ही जब अमरीका ने बडे पैमाने पर विदेशी सहायता को अपनी विदेश नीति के एक कारगर अस्त्र के रूप मे प्रयोग किया तो इस क्रिया कलाप के साथ शीत युद्ध के तमाम कुतर्क जुड गये द्वितीय विश्व युद्ध परिणति के साथ पारम्परिक उपनिवेशवाद की सम्पत्ति भी स्पष्ट हुई दर्जनो नवोदित राष्ट्र उपनिवेशवाद से सम्प्रभु राष्ट्र में बदल गये परन्तु इनमें से अधिकांश देश अपने पैरो पर खडे होने में असमर्थ थे। और आत्मनिर्भर विकास द्वारा सुदूर भविष्य में भी स्वावलम्बी बनने के लिये इन्हें बडे पैमाने पर विदेशी पूजी और प्रोद्योगिकी की आवश्यकता थी। 1945 के बाद के 10—15 वर्शो में इन नवोदित देशों का पश्चिमी पूँजीवादी समर्थ खुशहाल राष्ट्रों के साथ एक ऐसा रिश्ता विकसित हुआ जिसे नव उपनिवेशवादी ही कहा जा सकता है। सुकार्णो और

एन्कूमा जैसे अफ्रो एशियाई नेता समीर अमीन जैसे अर्थ शास्त्री और फ्रान्स फेनोन जैसे समाज शास्त्री नव उपनिवेशवाद के इसी घातक संकट के प्रति तीसरी दुनिया को सचेत करते रहे है। औपनिवेशिक काल में अधिकतर यूरोपियन देशों ने बहुत बडे पैमाने पर शेश विश्व के विस्तृत भूभाग की प्राकृतिक सम्पदा का निर्मम दोहन किया गया था इससे उनको ऐसे उपभोग की आदत पड गयी कि आज तक कच्चे माल के आयात से ही उनका व्यापार तीसरी दुनिया के साथ असन्तुलित रहा है। इस असन्तुलन पर काबू पाने के लिये उन्होने व्यापार की ऐसी शर्त रखी कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार कमजोर देशों पर प्रभुत्व स्थापित करने का एक जरिया भर बनकर रह गया है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने 1974 में अपने एक विशेश अधिवेशन में नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था हेतु एक घोषणा पत्र जारी किया और एक कार्यक्रम अंगीकार किया। समाज वादी देशों ने इसका समर्थन किया। इसमें उपर्युक्त सभी मुदद्ों मॉगों का समावेश किया गया था स्पष्ट है कि कुल मिलाकर नई विश्व अर्थ व्यवस्था की खोज दो तीन प्रमुख मुद्दों तक सिमटी है। जब कि अन्य मॉगें उन्हीं का विस्तार या परिश्कार है। गरीब राष्ट्रों को उनके संसाधनां की वाजिब कीमत मिले, उसके द्वारा खरीदी जाने वाली सामग्री संयंत्र आदि में अन्धाधुँन्ध मुनाफाखोरी न हो तथा प्रोद्योगिकी का हस्तान्तरण इस तरह से किया जाये कि अन्ततः अफ्रो एशियाई देशों के स्वावलम्बी बनने की सम्भावना पुश्ट हो इसके माध्यम से दम घोटू नव उपनिवेश वादी शिकन्जा न जकडा जाये। जाहिर है कि यह सभी लाभ तब तक प्राप्त नही हो सकते, जब तक कि विदेशी सहायता के फलस्वरूप और अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं के क्रिया कलाप बुनियादी तौर पर परिवर्तित नहीं होते। अन्तराष्ट्रीय मुद्रा सुधार भी इससे जुडा हुआ प्रश्न है।

<u>भारत की महत्वपूर्ण भूमिकाः—</u>

नई विश्व अर्थ व्यवस्था की तलाष में भारत की महत्वपूर्ण भूमिका रही हैं अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक व्यवसथा के जनतात्रिकी करण में भारत का सार्थक योगदान रहा हैं इसके अतिरिक्त स्वदेश में सुनियोजित विकाश और बहुमुखी और बहुआयामी अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्धों के भारतीय अनुभव से अनेक उपयोगी सबक सीखे जा सकते है। संस्थानों की संगठन हो या प्रक्रियाओं का परिश्कार भारत इस बारे में सतर्क रहा है कि उस जैसे नवोदित राष्ट्र को आर्थिक दृष्टि से आत्म निर्भर एवं स्वावलम्बी ही बने रहना चाहिए इसके अभाव में राजनीतिक

स्वतंत्रता निरर्थक है इसी कारण नई विश्व अर्थ व्यवस्था की प्रमुख मॉगों को भारतीय प्रवक्ताओं ने सबसे अधिक कारगर ढंग से मुखर किया है।

भारत की ओर से अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक परामर्श में लम्बे अर्से से भाग लेने वाले राजनयिक के0 बी0 लाल ने यह टिप्पणी गलत नही की कि भारतीय उपमहाद्वीप में बेशुमार अमीरी और लज्जा स्पद दरिद्रता का जो सह अस्तित्व देखने को मिलता है वहीं अन्तर्राष्ट्रीय यथार्थ में भी प्रतिबिम्बित होता है। धैर्यपूर्ण शोध हो या परामर्श का कौशल, बिना सहानुभूति और सहकार के कुछ हासिल नहीं हो सकता। इस स्थिति मे भारत का यह कर्तव्य हो जाता हैं कि वह अपने अन्य विकाश शील भाई बन्धुओं को इस अभियान में दिशा दे। यह ठीक है कि नई विश्व अर्थ व्यवस्था की तलाष का एक पहलू विकसित देशो के साथ जुझारू संवाद वाला है परन्तु यह अनदेखा नही किया जा सकता कि इस बारे में तब तक प्रगति असम्भव है। जब तक कि विकाश शील देश स्वयं पारस्परिक सम्बन्धो में वॉछित परिवर्तन वित्तवितरण, व्यापार सन्तुलन, प्रौद्योगिकी के हस्तान्तरण आदि के विषय में नही लाते है।

निष्कर्षः–

नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था के लिये गरीब और स्वल्प विकसित देशों का यह संघर्ष वस्तुतः आर्थिक स्वाधीनता का संघर्ष है। इस संघर्ष में धीरे–2 तीसरी दुनियॉ के राष्ट्र संगठित होते जा रहे है और उपनिवेश वाद विरोधी रूख अपना रहे है। इस संघर्ष में विकाश शील देशों को यह आषा है कि औद्योगिक दृष्टि से विकसित देश कई प्रकार की रियायतें देने के लिये मजबूर होगें और दुनिया के धन का वितरण इस प्रकार से होने लगेगा कि जो विकसित देश तीसरी दुनिया में नव उपनिवेश वादी वर्चस्व कायम करने में लगे है। उनका मुकाबला जी 77 के विकासशील देश मिलकर ही कर सकते है।

इस आन्दोलन की सबसे बडी कमजोरी यह है कि यह पूॅजीवाद की आधार शिला को ठुकराये बिना, छोटे मोटे सुधार अर्थ व्यवस्था में करना चाहता हैं (जैसे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में परिवर्तन लाना आदि) जब कि सारी कठिनाइयों की जड पुरातन पूॅजीवादी अर्थ व्यवस्था का प्रचलित ढॉचा है। संक्षेप में नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था की खोज की अवधारण अभी भी शैशवावस्था में है इसके आयामों ने निश्चित स्वरूप धारण नही किया है।

उत्तर–दक्षिण संवाद और भारत अमरीका सम्बन्धः–

अमीर और गरीब देशों के बीच संवाद स्थापित करने को उत्तर दक्षिण संवाद कहते है। भूगोलवेत्ताओं के अनुसार हमारी प्रथ्वी दो गोलार्द्धो में विभाजित है उ0 गोलार्ध में अधिकांश उत्तरी अमरीका और यूरोप का क्षेत्र आता है तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में लैटिन अमरीका और अफ्रीका का क्षेत्र आता है उत्तरी गोलार्द्ध में उन्नत संग्रह विकसित और आद्यौगिक देश अधिक है। जब कि दक्षिणी गोलार्द्ध मे निर्धन,पिछडे विकास शील और शोशित देश अधिक है। आगे चलकर अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की शब्दावली में जब उत्तर और दक्षिण संवाद शब्द बन्ध का प्रचलन हुआ तो स्पष्ट मायने थे। उत्तर से तात्पर्य था। पश्चिमी विकसित देश जिनकी अर्थ व्यवस्था पूॅजीवादी विचार धारा पर आधारित है। जिन्हौने तकनीकि एवं औद्योगिक क्षेत्र में चहुमुखी प्रगति कर ली है। जहॉ बचत एवं पूॅजी निर्माण की दर बहुत ऊॅची है तथा जहॉ राजनीतिक तथा वित्तीय स्थिरता है संयुक्त राज्य अमरीका, कनाडा, इंग्लैण्ड, फ्रान्स, जर्मनी आदि उत्तर के देश माने जाते है। इसके विपरीत दक्षिण में अधिकांशतया वे देश है जिन्हें विकास शील तीसरी दुनियॉ के देश कहा जाता है। इन देशो की विशेषताऐं है पूॅजी की कमी, जनसंख्या विस्फोट, निर्धनता, वेरोजगारी, कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था, तकनीकी ज्ञान का अभाव एवं रूढिवादिता। संवाद से तात्पर्य है परस्पर ''विचार विमर्श''

दक्षिण के विकाश सील देश यह भी महसूस करने लगे कि आर्थिक सहायता के नाम पर उत्तर के समृद्ध देश उनकी सहायता नही करते अपितु ऐसा व्यूह तैयार कर देते है। जिसमें उत्तरोत्तर विकाशशील देशो पर ऋण बढ़ता जाता हैं। विकसित देशो के उदासीनता पूर्ण दृष्टिकोण के कारण विकासशील देशो की व्यापार शर्ते प्रतिकूल होती गयी तथा विश्व के कुल व्यापार में उनका सापेक्ष भाग कम होता चला गया। अतः 1950 में विश्व के कुल निर्यात का 20 प्रतिशत विकाश सील देशों से प्राप्त होता था। 1975 तक यह अनुपात गिरकर 11 प्रतिशत रह गया इसके विपरीत इस अवधि में विश्व के कुल निर्यात में विकसित का अंश 61 प्रतिशत से बढकर 67 प्रतिशत हो गया। एक ओर प्रतिकूल व्यापार की शर्तें और दूसरी ओर बढता हुआ ऋण प्रभाव दोनों ने दक्षिण के विकाश सील देशो के भुगतान सन्तुलन को प्रतिकूल बना दिया। 1984 की विश्व बैक रिपोर्ट में स्पष्ट इंगित किया गया कि दक्षिण के देश ऋण के भार से अत्यधिक दवे हुये है दक्षिण राज्यों के ऋण भार का अनुमान इससे लगाया जा सकता है। कि जहॉ 1980 मे यह 69 विलियन डालर था वहॉ1982 में यह बढकर 98 विलियन डालर हो गया। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोश और अन्य वित्तीय संस्थान प्रति वर्ष विकाश

शील देशों को जितना ऋण देते है उससे कहीं अधिक व्याज और भुगतान के रूप में बसूलते है। विश्व विकाश आन्दोलन की ताजा रिपोर्ट के अनुसार विश्व बैक ने वर्ष 1992 में भारत, पाकिस्तान, और बंगलादेश को कुल तीन अरब डालर का ऋण दिया परन्तु ऋण के व्याज और भूगतान के उपरान्त इन देशों को बस्तुतः मात्र 88 करोड 50 लाख डालर ही प्राप्त हो सके। इन वित्तीय संस्थानों की इस नीति के कारण ऋण का उददेश्य ही समाप्त हो रहा है।

पर्यावरण एवं भारत अमरीका सम्बन्धः–

पर्यावरण का क्षय या हृास एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है। जनसंख्या विस्फोट नगरीकरण, जलप्रदूषण, धुँआ, शोरगुल, रासायनिक प्रवाह, विज्ञान और तकनीकि का अप्रत्याशित प्रसार वे कारण है। जिनकी वजह से पर्यावरण का हृास हो रहा है विश्व के अधिकांश भागों में पर्यावरण की समस्याऐं अब भी निर्धनता और अज्ञान से सम्बन्धित है। परम्परागत अन्तर्राष्ट्रीय कानून में प्रदूषण और पर्यावरण हृास की समस्याओं पर बहुत ज्यादा चिन्तन नहीं किया गया था फिर भी यह माना जाता था। कि किसी राज्य के कार्य कलापों की एक सीमा यह है कि उससे अन्य राज्यों के क्षेत्र पर कोई क्षति नहीं पहुँचनी चाहिए। इसका मतलब यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अर्न्तगत प्रत्येक राज्य का यह कर्तव्य है कि वह अपने राज्य क्षेत्र में ऐसा कोई कार्य न करे जिससे उस क्षेत्र के बाहर पर्यावरण सम्बन्धी क्षति पहुँचे।

वर्ष 1980 का दशक पर्यावरणीय विषयों पर यू0 एन0 ओ0 सदस्य राज्यों के मध्य उल्लेखनीय वार्ताओं का साक्षी रहा। इनमें ओज़ोन परत को सुरक्षित रखने एवं विशैले उत्सर्जन की गति को नियंत्रित करने वाली सन्धियों का समावेश था। 1983 में महासभा द्वारा स्थापित पर्यावरण एवं विकास पर विश्व आयोग ने एक नये प्रकार की समझ बूझ और एक नये प्रकार के विकाश की जरूरत के प्रति तात्कालिता की भावना पैदा की। ऐसा विकाश जो वर्तमान एवं भावी पीढियों के आर्थिक कल्याण को सुनिश्चित करने के साथ–2 पर्यावरणीय संसाधनों को जिन पर सारा विकास अवलम्बित हैं को संरक्षित रखेगा। महासभा को प्रस्तुत आयोग की 1987 की रिपोर्ट में टिकाऊ विकाश की अवधारणा सामने रखी गयी। ऐसा टिकाऊ विकास अनियंन्त्रित आर्थिक वृद्धि पर आधारित विकाश का एक वैकल्पिक तरीका होता।

आयोग के शब्दों मे एक विकाश "जो वर्तमान की जरूरतों को भावी पीढियों द्वारा अपनी जरूरतों को पूरा करने की क्षमता पर समझौता किये बिना पूरा करता है।

यू0एन0ई0पी0 महासागरों तथा सागरों के बचाव के लिये कार्य करता है। तथा 140 देशो को अपने प्रादेशिक सागर कार्यक्रम के अर्न्तगत समुन्द्री साधनों के पर्यावरणीय दृष्टि से ठोस उपयोग को प्रोत्साहन देता है। यह कार्यक्रम 13 कन्वेंन्सी या कार्य योजनाओ के जरिये सहभागिता वाले समुन्द्री एवं जल संसाधनो के वचाव के लिये कार्य करता है। तथा यह यू0एन0ई0पी0 को बडी सफलताओं में से एक है।

इसके पर्याप्त प्रमाण है। कि मानव गतिविधियों वायुमण्डल में "ग्रीन हाउस गैसों की रचना में योगदान करती है। जिसके फलस्वरूप वैश्विक तापमान में धीरे–2 बृद्धि होती हैं खासतौर पर जब ऊर्जा पैदा करने के लिये जीवाश्म (फॉसिल) ईधन जलाया जाता या बनों को काटा और आग के हवाले किया जाता है तो कार्वन डाई आक्साइड पैदा होती है अतः सरकारी मौसम परिवर्तन पैनल के अनुसार मौसम मॉडल ये भविष्य वाणी कर रहे है कि 2100 तक वैश्विक तापमान 1–3.5 अंश सेन्टी ग्रेड तक बढ जाएगा। यह अनुमानित परिवर्तन गत 10,000 वर्शो में अनुभव किये गये किसी भी मौसम परिवर्तन से बडा है और इसमें वैश्विक पर्यावरण को उल्लेखनीय रूप से प्रभावित करने की सम्भावना निहित है।

ओजोन क्षयः–

ओजोन परत ऊपरी बायुमण्डल में (धरती से 22–45 किमी0 ऊपर) गैस की एक पतली परत है जो पृथ्वी की सतह को सूर्य के नुकसान देह अल्ट्रावायलेट रेडियेशन(पराबैगनी विकिरण) से बचाती है बढे हुये पराबैगनी विकिरण से सम्पर्क त्वचा कैसर को जन्म देने वाला माना गया है यह पौधो, शैवाल और खाद्य श्रंखला एवं वैश्विक परिस्थति प्रणाली को भी असाधारण क्षति पहुॅचाता है। वर्ष 1998 में समूचे विश्व के दो सौ से अधिक वैज्ञानिको द्वारा तैयार किये गये यू0एन0ई0पी0–डब्लू0एम0ओ0 के ओजोन क्षय सम्बन्धी आकलन के अनुसार वायुमण्डल के निचले भाग में ओजोन को क्षय पहुॅचाने वाले कम्पाउण्डों की संयुक्त कुल प्रचुरता, जो 1994 के शिखर पर थी, अब धीरे–2 घट रही है। यदि प्राटोकाल के अनुसार उपाय नहीं शुरू किये गये होते तो ओजोन क्षय और ज्यादा गम्भीर होता तथा आने वाले अनेक दशकों तक जारी रहता। लेकिन यद्यपि प्रोटोकाल ओजोन में क्षय पहुॅचाने वाले तत्वों के उपयोग और प्रवाह को घटाने के लिये भली भॉति कार्य कर रहा है। यद्यपि वायुमण्डल में

पहले से छोडे गये रसायनो की जिन्दगी का यह मतलब है कि यह क्षय आने वाले वर्शो तक जारी रहेगा।

वैज्ञानिकों ने भविष्यवाणी की है कि पृथ्वी का सुरक्षात्मक ओजोन आवरण निकट भविष्य में फिर से ठीक होना शुरू हो जायेगा। तथा 2050 तक वह पूरी तरह ठीक हो जायेगा। वशर्तें प्रोटोकाल को प्रभावपूर्ण तरीके से लागू करना जारी रखा गया। भारत और अमरीका ने यू0एन0ई0पी0 में पूर्ण सहयोग किया है।

वनों के लिये एक केन्द्रीय फोरम की सतत मौजूद जरूरत का उत्तर देते हुये पृथ्वी शिखर सम्मेलन+5 मे भाग लेने वाली सरकारी ने वनों के निमिन्त अन्तः सरकारी फोरम का गठन किया। जिसका उददेश्य इन प्रस्तावों को बढावा देना तथा उसके अमल पर निगरानी रखना था। एवं यह भी विचार था कि बनों के विकाश को टिकाऊ विकाश को सुनिश्चित करने के लिये, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कानूनी रूप से बन्धन कारी समझौते सहित जरूरी कौन से अतिरिक्त उपाय किये जाने चाहिये?

यू0एन0ई0पी0 के अनुमानों के अनुसार धरती की एक चौथाई भूमि पर मरूस्थलीकरण का खतरा हैं 25 करोड लोग इससे प्रत्यक्षतः प्रभावित है। तथा 100 देशों में एक अरब से अधिक लोगों की आजीवका खतरे में है। क्यों कि कृषि एवं चरागाह भूमि कम उत्पादक हो गयी है। सूखे में मरूस्थलीकरण को बढावा मिल सकता हैं लेकिन मानव गतिविधियों जैसे जरूरत से ज्यादा खेती, अधिक चराई, निर्वानीकरण, कम सिंचाई सामान्यता मुख्य कारण है।

<u>जैव विविधता, प्रदूषण एवं जरूरत से ज्यादा मछुवाही:-</u>

जैव विविधिता अर्थात वनस्पति एवं पषुप्रजातियों की विविधता मानव के अस्तित्व के लिये आवश्यक है। जैव विविधिता पर संयुक्त राष्ट्र कन्वेशन(1992)जिसमें 180 राज्य शामिल है का उददेश्य विविध प्रकार की प्रजातियों के पशुओं तथा वनस्पति जीवन एवं उसके पर्यावास की सुरक्षा और संरक्षण है। यह कन्वेशंन राज्यों पर यह दायित्व सौपता है कि वे जैव विविधिता संरक्षित रखें, इसके टिकाऊ विकाश को सुनिश्चित करें और जैनेटिक शोध के उपयोग के लाभों में उचित एवं समान सहभागिता प्रदान करें। जेनेटिक पद्धति से परिश्कृत जीवों के सुरक्षित उपयोग को सुनिश्चित करने के लिये सन्2000 में एक प्रोटोकाल स्वीकार किया गया।

जल संसाधनः–

आज विश्व की 20 प्रतिशत आवादी जलाभाव को अनुभव कर रही है। जो 2025 तक बढकर 30 प्रतिशत हो जायेगी और जो 50 देशों को प्रभावित करेगी। जलाभाव के अनेक कारण है। जिनमें अकुशल, उपयोग प्रदूषण द्वारा जल का क्षय और भू–जल संग्रहों का जरूरत से ज्यादा दोहन ताजे जल के दुर्लभ संसाधनो के बेहतर प्रबन्धन को विशेशकर जलापूर्ति एवं मात्रा एवं गुणवत्ता के प्रबन्धन को पाने के लिये कार्यवाही की जरूरत है।

रियो सम्मेलन उत्तर दक्षिण मतभेद(3जून1992):–

पर्यावरण असन्तुलन को नियंन्त्रण में लाने के मुद्दे पर विचार–विमर्श के दौरान विश्व विरादरी प्रमुख रूप से उत्तरी एवं दक्षिणी गुटों में बंटी हुई नजर आयी। इस बटवारे का आधार हैं उत्तर की सम्पन्नता और दक्षिण की विपन्नता। रिओ में दक्षिण गुट का कहना था कि उत्तर ने अपने विकाश एवं समृद्धि के लिये पर्यावरण का असन्तुलित शोशण किया है। तथा दुनियॉ को प्रदूशित किया है। इसलिये पर्यावरण पुनः सन्तुलित करने तथा प्रदूषण दूर करने के उपायो पर आने वाले खर्चो को भी उसे ही उठाना चाहिए। बात किसी हद तक ठीक भी हैं यदि सिर्फ अमरीका और भारत का तुलनात्मक अध्ययन किया जाये तो पता चलता है कि उत्तरी खेमे का महाशक्ति शाली देश अमरीका दक्षिणी खेमे के भारत के मुकाबले कही बडे अनुमान में पर्यावरण असन्तुलन के लिये जिम्मेदार है। मसलन भारत के दुनिया की सोलह प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। तथा इसकी ऊर्जा खपत विश्व की कुल खपत का मात्र तीन प्रतिशत ही है। यही नही वायुमण्डल में उत्सर्जित कार्वन डाई आक्साइड के मात्र तीन प्रतिशत के लिये ही भारत जिम्मेदार है। जब कि अमरीका में कुल विश्व की मात्र 5 प्रतिशत जनता रही है किन्तु यह देश विश्व की एक चौथाई ऊर्जा का उपभोग करके वातावरण में वाइस प्रतिशत कार्वन डाई आक्साइड की उपस्थिति के लिये जिम्मेदार है। यह तो रहा उत्तर तथा दक्षिण के मात्र एक–2 देश का उदाहरण। यदि इसी तरह ऑकडे एकत्र किये जायें। तो यह बात स्पष्ट हो जाती है। कि विश्व पर्यावरण असन्तुलन के लिये जितने सम्पन्न देश जिम्मेदार है। उतने गरीब अविकसित अथवा विकाश शील देश नहीं इस तथ्य को जानते हुये भी रिओ में एकत्र सम्पन्न देशों ने प्रदूषण के मुददे पर चिन्ताऐ तो व्यक्त की। घडियाली, ऑसू

तो बहाऐं किन्तु किसी भी हाल में विभिन्न सन्धियों में उल्लिखित ऐसे प्रस्तावों पर सहमति व्यक्त करने को तैयार नही हुये जिससे खतरा था।

जोहान्सबर्ग में सतत विकास से सम्बग्द्ध विश्व शिखर सम्मेलन(अगस्त–सितम्बर 2002):–

26 अगस्त से 6 सितम्बर 2002 तक दक्षिण अफ्रीकी के नगर जोहान्सबर्ग में संयुक्त राष्ट्र द्वारा आयोजित पृथ्वी सम्मेलन सम्पन्न हुआ। विश्व के लगभग 104 देशों के शासनाध्यक्षों के अतिरिक्त 21000 लोगों ने जिसमें 9101 सरकारी प्रतिनिधियों 8227 गैर सरकारी प्रतिनिधियों तथा 4012 संचार माध्यमों के प्रतिनिधियो ने इस सम्मेलन मे भाग लिया, लेकिन अमरीकी राष्ट्रपति जार्ज बुश सम्मेलन में अनुपस्थिति रहे। सम्मेलन का मुख्य विषय रहा टिकाऊ विकाश दक्षिण अफ्रीकी के राष्ट्रपति थाबोम्बेकी ने पाष्चात्य प्रायोजित विकाश की अवधारणा पर प्रहार करते हुये कहा कि यह विकास गरीबी की एक लम्बी छाया का श्रजक है। यह शिखर सम्मेलन जो प्रथ्वी से सम्बद्ध शिखर सम्मेलन के दस वर्ष बाद हुआ, से अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय को इस बात का मूल्यांकन करने का अवसर मिला कि क्या कार्यसूची 21 में उल्लिखित लक्ष्यों को प्राप्त कर लिया गया है।

पर्यावरण सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय कानून के विकास की आवश्यकता आज सबसे अधिक महसूस की जा रही हैं। स्टाक होम सम्मेलन ने पर्यावरण सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय विधि के विकास की नीव डाली और रियो प्रथ्वी सम्मेलन के निर्णयों के आधार पर पर्यावरण और विकाश के साथ सामान्य जीवन भी प्रभावित होने की सम्भावना है।

ग्रीन हाउस का संकट:–

पृथ्वी के वायुमण्डल में कार्बन डाई आक्साइड की मात्रा निरन्तर बढने से ग्लोबल बार्मिग का संकट भी गहराता जा रहा है। जिस मात्रा में कार्वन डाई आक्साइड(CO_2) का उत्सर्जन हो रहा है। उसी अनुपात में पृथ्वी के तापमान में भी बढोत्तरी हो रही है। आषंका प्रकट की जा रही हैं कि इस गैस के अंन्धाधुॅन्ध उत्सर्जन से वायुमण्डल में इसकी मात्रा 3भान से 7 भान हो जायेगी।इसका दुश्परिणाम यह होगा कि पृथ्वी का तापमान 21वीं सदी के अन्त तक 3.5 तक बढ जायेगा। वैज्ञानिकों ने यह भी संकेत दिया है कि धरती के गरमाने पर सन् 2025 तक समुन्द्री जल स्तर में 200 सेमी0 तक बृद्धि हो जायेगी। सम्भव है कि बाग्लादेश और मालद्वीप जैसे राज्यों का समूचा अस्तित्व ही सिमट जाये।

निष्कर्ष जहाँ तक पर्यावरण संकट से उभरने का प्रश्न है अमीर देश विशेशतया अमेरिका औद्योगीकरण से भी अधिक गरीबी को पर्यावरण की तवाही के लिये जिम्मेदार ठहराते है। जब कि गरीब विकाश शील देश जैसे भारत का अभिमत है कि पर्यावरण तवाही के लिये विकसित देश ही जिम्मेदार रहे है।

रियो पृथ्वी सम्मेलन से ही यह बात स्पष्ट हो गयी कि निर्धन देशों में अपने भविष्य के प्रति चेतना स्पष्ट हुई हैं अमरीका पर यह आरोप था कि वह सर्वाधिक कार्वन वातावरण में उगलता है अतः उसे अपना कदम पीछे ले जाना चाहिए। इसी तरह एक मुदद्ा यह उठाया गया कि जंगलों को सार्वभौम सम्पदा न मानकर स्थाई सम्पदा माना जाये। इस मुद्दे को सबसे ज्यादा उग्र रूप में भारत के मंत्री कमलनाथ ने उठाया। उनका कहना था कि यदि जंगलों को सार्वभौम सम्पदा माना जाये तो कुड आयल को भी सार्वभौम सम्पदा माना जाये। क्यों कि इसका उपयोग सम्पूर्ण मानव जाति के लिये होता है।

तीसरा मुद्दा यह था कि पर्यावरण को शुद्ध करने के लिये अनुमानित व्यय लगभग सवा लाख करोड डालर कौन उठावे। अमीर देशों के नेता पर्यावरण शुद्ध करने के मुददें पर तो सहमत थे परन्तु खर्च उठाने के नाम पर कंजूसी दिखा रहे थें। सर्वाधिक कठोर रवैया अमरीकी राष्ट्रपति जार्ज बुश का था।

यदि पर्यावरण सकंट पर गम्भीरता से विचार नही किया गया। पर्यावरण में गैसों का रिसाव तथा वायुमण्डल, जलमण्डल, तथा स्थल मण्डल, को दूशित करने का प्रयास यदि इसी गति से जारी रहा तो मानव भी पक्षियो तथा पौधों की अनेक प्रजातियों के समान विलुप्त होने के कगार पर होगा। इसमें कोई अतिशयोक्ति नही है। यह अत्यन्त दुखःद है कि रियो, क्योटो, तथा जोहान्सबर्ग सम्मेलन 2002 के परिणाम पर्यावरण शुद्धीकरण को लेकर आषा जनक नहीं रहे हैं। पर्यावरण अनुकूलन प्रौद्योगिकी के वित्तीयन, विशैली गैसों के उत्सर्जन तथा वन संरक्षक, आदि मुद्दों पर व्यापक बहस के बावजूद इन सम्मेलनो में विविध देश किसी ठोस सार्थक समझौते पर आम सहमति नही बना सके है। यह अत्यन्त चिन्तनीय है।

<u>ग्लोबलाइजेशनः–</u>

भूमण्डली करण शब्द आज अन्तर्राष्ट्रीय बाजार मे गुंजायमान है यह शब्द व्यापार अवसरों की जीवन्तता एवं उनके विस्तार का द्योतक है। भूमण्डलीकरण वस्तुतः व्यापारिक क्रिया कलापों विशेशकर विपणन सम्बन्धी क्रियाओं का अन्तर्राष्ट्रीय करण करना हैं। जिसमें

सम्पूर्ण विश्व बाजार को एक ही क्षेत्र के रूप में देखा जाता है। दूसरे शब्दों में भूमण्डलीकरण वह प्रक्रिया है जिसमे विश्व बाजारों के मध्य पारस्परिक निर्भरता उत्पन्न होती है और व्यापार देश की सीमाओं में प्रतिवन्धित न रहकर विश्व व्यापार मे निहित तुलनात्मक लागत लाभ दशाओं का विदोहन करने की दिशा में अग्रसर होता है।

20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था में आमूल चूल परिर्वतन का दौर प्रारम्भ हुआ। शीत युद्ध के अन्त सोवियत संघ के विघटन के एकीकरण और उद्दीयमान एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्था ने दुनिया को नई विश्व व्यवस्था की ओर धकेला। नई विश्व व्यवस्था अवधारणा को संवल प्रदान किया। विश्व अर्थ व्यवस्था में दृश्य अदृश्य आने वाले बदलावों ने। नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की मॉग की जाने लगी। भूमण्डली करण, आर्थिक उदारीकरण निजीकरण बाजारोंन्मुख अर्थ व्यवस्था निगमीकरण , प्रतिस्पर्धात्मक और खुली अर्थ व्यवस्था जैसे नारे गूॅजने लगे। अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप की वित्तीय और व्यापारिक संस्थाओं का महत्व बढने लगा। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोश और विश्व व्यापार संगठन जैसे निकाय अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के निर्धारण में प्रभावी भूमिका का निर्वाह करने लगे।डा0 विमल जालान के अनुसार'' भूमण्डली करण शब्द का प्रयोग कई तरह से हुआ है। एक अर्थ तो शाब्दिक है कि अब राष्ट्रों के बीच भौगोलिक दूरी वेमानी हो चुकी हैं दुनिया काफी छोटी हो चुकी है और कोई भी देश अपना नुकसान करके ही शेश विश्व से खुद को अलग–थलग रख सकता हैं भूमण्डली करण का दूसरा अर्थ ठीक उल्टा निकाला जा रहा हैं इसके अनुसार यह देशी हितों की जगह दूसरे देशो और बहुराष्ट्रीय निगमों को हितों को ऊपर रखने वाले नीति गत बदलाव का नाम है।

भूमण्डलीकरण एक रूपता एवं समरूपता की वह प्रक्रिया है जिसमें सम्पूर्ण विश्व सिमट कर एक हो जाता है एक देश की सीमा से बाहर अन्य देशो में बस्तुऐं और सेवाओं का लेनदेन करने वाले अन्तर्राष्ट्रीय निगमो अथवा बहु राष्ट्रीय निगमो के साथ देश के उद्योगों की सम्बद्धता भूमण्डलीकरण है। कतिपय विद्वानो के अनुसार पूरी दुनिया को एक भूमण्डलीकरण गॉव के रूप में मानने की अवधारणा ही वैश्वीकरण अथवा भूमण्डलीकरण है। सामान्यतयः इसमें निम्नॉकित तत्व सम्मिलित होते है।

1– संसार के विभिन्न देशो में बिना किसी अबरोध के विभिन्न वस्तुओं का आदान–प्रदान सम्भव बनाने के लिये व्यापार अवरोधों को कम करना।

2– आधुनिक प्रौद्योगिकी का निवीध प्रवाह सम्भव बनाने हेतु उपयुक्त वातावरण बनानां।

3– विभिन्न राष्ट्रों में पूँजी का स्वतंत्र प्रवाह सम्भव बनाने हेतु आवश्यक परिस्थितियॉ पैदा करना।

4– संसार के विभिन्न देशों में श्रम का निर्वाध प्रवाह सम्भव बनाना।

यू0एन0डी0पी0 की'' ह्यूमौन डबलपमेंट रिपोर्ट'' में भूमण्डलीकरण के तीन कर्ताओं का उल्लेख किया गया है।

प्रथम– विश्व व्यापार संगठन जो सदस्य राष्ट्रों की राष्ट्रीय सरकारों के ऊपर अपना वर्चस्व एवं प्रभुता रखता है

द्वितीय– कर्ता है बहुराष्ट्रीय कम्पनियॉ जिनकी आर्थिक क्षमता अनेक राष्ट्र राज्यों की कुल सम्पत्ति से ज्यादा है। तथा।

तृतीय– कर्ता अन्तर्राष्ट्रीय गैर सरकारी संगठन जिनका ताना बाना सम्पूर्ण विश्व में फैला हुआ है। ये तीनों मिलकर भूमण्डलीकरण को अपनी इच्छित दिशा देते है।

भूमण्डलीकरण की यह प्रक्रिया अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक लेन देने पर लगी रोक के हटने से शुरू हुई। विश्व अर्थ व्यवस्था में कई तरह की रूकावटें दूर होने से भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया के लिये रास्ता साफ हुआ है। व्यापार के क्षेत्र में खुलापन आया है। और विदेशी निवेश के प्रति उदारता बढी है। साथ ही वित्तीय क्षेत्र में भी उदार नीतियॉ अपनाई जा रही है।

जेट विमान, कम्प्यूटर, उपग्रह, इण्टरनेट सूचना तकनीकी की बजह से देश काल की सीमाऐं खत्म हो गयी है। औद्योगिक संगठनों ने नई प्रबन्ध व्यवस्थाओं के विकाश ने भी भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया को गति प्रदान की है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव कोफी अन्नान ने संयुक्त राष्ट्र सहस्त्रावदी रिपोर्ट(सितम्बर 2000) में स्पष्ट कहा है कि वैश्वीकरण के प्रतिकूल प्रतिक्रियाऐं शुरू हो गयी है। क्यों कि वैश्विक बाजार को अभी तक सहभागी सामाजिक लक्ष्यों पर आधारित नियमों के अधीन नही किया गया है।

यह सर्व विदित है कि जहॉ पिछले 25 साल में भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया तेज हुई है। वहीं अन्तर्राष्ट्रीय श्रम प्रवास में स्पष्ट कमी आयी है। भूमण्डलीकरण का संस्थागत ढॉचा भेदभाव से भरा है। एक तरफ तो यह प्रावधान है कि राष्ट्रों की सीमा व्यापार या पूँजीप्रवाह में बाधक न बने, दूसरी ओर तकनीकी या श्रमप्रवाह की राह में अडचनें डाली जा रही है। यह

उम्मीद की जाती है कि विकाश सील देश अपने बाजार अमीर देशों के लिये खोल दें तथा पूँजी का निवेश अपने यहाँ होने दें लेकिन बदले में विकसित देशों से तकनीक तथा निर्विघ्न श्रम प्रवाह की माँग न करें।

आज भी विकसित देशो में प्रवासियों के प्रति नकारात्मक रवैया वहाँ की राजनीतिक और सामाजिक सोच में गहरे बैठा है। ऐसा माना जाता है कि प्रवासी वहाँ के मूल निवासियों के राजनीतिक वर्चस्व में सेंध लगा देंगे या फिर सामाजिक और सांस्कृतिक एकता पर हमला कर देंगें। कुछ ऐसी मान्यताऐं भी है। जिनका ठोस आधार नहीं है। लेकिन नस्लवाद की राजनीति करने वालों को वे एक हथियार पकडा देती है। जैसे कि प्रवासी मूल निवासियों से रोजगार के अवसर छीन लेगें या फिर कल्याण योजनाओं में उनको भी हिस्सेदारी देनी पडेगी आदि इसके अलावा प्रवास सम्बन्धी कानून भी प्रतिबन्धों से भरे पडे है। दूतावास भी प्रवास पर कई तरह की रोक लगाते है। भूमण्डलीकरण की व्यवस्था में स्वतंत्र व्यापारिक उद्यमों का तो गला घोंटा जा रहा है। विकाश सील देशों की तो बात छोडे स्वयं विकसित देशों में स्थानीय व्यापारिक हितों के समक्ष भी जबर्दस्त संकट पैदा हो गया है और उसके पास बहु राष्ट्रीय निगमों के महत्वहीन पिछलग्गू के रूप में काम करने के सिवाय कोई विकल्प नही नही बचा है।

रिजर्व वैक के गर्वनर विमल जालान ने अपनी पुस्तक 'इडिययाज इकोनोमी इन द न्यू मिलेनियम' मे जोर दिया है। वे कहते है कि विश्व के पूँजी बाजार के एकीकरण से बाजार में कुशलता आई है। परन्तु साथ–2 इससे विकाशसील देशों के समक्ष अधिक खतरा एवं अरक्षा भी उत्पन्न हो गई है। वे बताते है कि पूर्वी ऐशिया की बैकिंग व्यवस्था लगभग विश्व स्तर की ही थी परन्तु फिर भी वे संकट ग्रस्त हो गये। चूँकि वे विश्व अर्थ व्यवस्था से गहराई से जुडे हुये थे। उन्होंने इस जुडाव के खतरे से वचाव की पर्याप्त सावधानी नही बरती थी। विश्व पूँजी बाजार में हल्की सी उथल पुथल से उनकी अर्थ व्यवस्थाऐं हिल गयी। पूर्वी ऐशिया की तुलना में भारत ऐशिया संकट से बहुत कम प्रभावित हुआ। क्यों कि हमारा अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था से जुडाव कम था इसी क्रम में वे कहते है। कि देश के बैकों का पूर्ण निजीकरण नही होना चाहिए। इससे सरकार का बैकों पर नियंत्रण कम होगा। संकट के समय उनके व्यवहार पर नियंत्रण रखना कठिन हो जायेगा। जालान की दृष्टि में बेंकों के निजीकरण से लाभ कम और खतरा ज्यादा होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और अन्तर्राष्ट्रीय वित्त व्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में भूमण्डलीकरण के निम्नांकित प्रभावों की चर्चा की जा सकती है:–

1– संयुक्त राष्ट्र संघ और उससे सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय और व्यापारिक संस्थाओं की भूमिका और महत्व में बृद्धि हुई है।

2– विश्व व्यापार संगठन जैसे अन्तर्राष्ट्रीय संगठन की स्थापना हुई जो विश्व व्यापार के क्षेत्र में पुलिस मैन की भूमिका का निर्वाहन करने लगा है। कहने के लिये तो विश्व व्यापार संगठन की स्थापना बहुपक्षीय सिद्धान्त के आधार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहित करने के लिये की गई है लेकिन हकीकत यह हैं कि यह संगठन सामूहिक और अलग–2 तौर पर विकाश सील देशों के अर्थ तन्त्र समाज और राजनीति पर प्रभुत्व जमाने का माध्यम है।

3– भूमण्डलीकरण से बहु राष्ट्रीय निगमों को खुली छूट मिल गई है और बहु राष्ट्रीय निगम निर्धन राष्ट्रों पर धनी राष्ट्रों के नव उपनिवेशीय नियंत्रण के वाहक है।

4– अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और अन्तर्राष्ट्रीय पूँजी निवेश के लिये देश के दरवाजे खोलने का मतलब गरीब देशो और अमीर देशो को बकरी और बाघ की तरह एक ही घाट का पानी पीने की व्यवस्था करना है। और ऐसी दोस्ती में अमीर देश गरीब देशों से मुनाफा लेगे ही राजनीतिक अर्थ में विश्व व्यापार में भागीदारी बढाने का मतलब निर्भरता और सामाजिक राजनीतिक कीमत चुकाने तक जाता है।

5– अर्थ व्यवस्था का तो भूमण्डलीकरण हो गया हैं किन्तु हमारी राजनीतिक व्यवस्था अभी भी राज्यों की सम्प्रभुता पर आधारित है।

Reference:

1. ओशापा शील के राजस्थान पत्रिका 8 जुलाई1999, पाकिस्तानी आतंकवाद
2. राजस्थान की पत्रिका, आव्हान, जुलााई 1999
3. महेश, तालिवान के सन्दर्भ में अमरीकी आपातकाल, राजस्थान पत्रिका19 जुलाई 1999
4. दैनिक भास्कर, 11 जुलाई 1999 मानवता के लिए खतरा, ओसामा विनलादेन रस रंग जयपुर
5. बिन लादेन के खिलाफ फतवा जारी, पंजाब केसरी, 29 जून स1999
6. हिन्दुस्तान, भारत–अमरीका आतंकवाद के मुकाबले पर राजी, 5 सितम्बर 1999 दिल्ली
7. अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद और विश्व सुरक्षा (सं0 डेविड कार्लटन और कारलोशार्फ) में ब्रिया एम. जैकिस का लेख, अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद :– संघर्ष का एक नया ढंग, क्रोम हेलम, लन्दन 1975 पृ0 13
8. हान्स जे0 मार्डोन्लाऊ राज्यों के मध्य राजनीति पृ0 291–92
9. राजस्थान पत्रिका 20–3–1998 पृ0 8
10. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार वार्षिक रिपोर्ट 1998–99 पृ0 74
11. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार वार्षिक रिपोर्ट 1998–99 पृ0 74
12. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार वार्षिक रिपोर्ट 1996–97 पृ0 82–83
13. फेरिक डेविड, अन्तर्राष्ट्रीय कानून में आतंकवाद की परिभाषा व उसके निरोध पर अनुचिन्तन, त्रूसेलस वि0 वि0 के संस्करण 1974, पृ0 125

अध्याय षष्ठ

भारत – अमेरिका सम्बन्धों की समीक्षा

भारत – अमेरिका सम्बन्धों की समीक्षा

भारत का उदय महत्वपूर्ण है क्यों कि इसका सीधा प्रभाव भविष्य के संसार पर पड़ेगा। हाल में ही अमेरिकन गुप्तचार संस्था सी.आई.ए. ने अपनी समीक्षा रिपोर्ट में कहा है। कि 'भारत और चीन की बढती शक्ति एशिया के शक्ति सन्तुलन पर महत्वपूर्ण परिवर्तन लायेगी।1

आजादी के लगभग छह दशकों के बाद विश्व समुदाय के सामने भारत की छवि निखर रही है। दुनियाँ की प्रतिष्ठत अग्रणी पत्रिकाओं ने न केवल अपना काफी ध्यान और सीन इस देश को दिया, बल्कि एक उभरती हुई आर्थिक शक्ति के रूप में उसकी बढ चढ तारीफ की। वे दिन अब लद गये, जब भारत का मतलब महज जादूगरों की कलाबाजी या स्त्रियों को जबरदस्ती सती बनाने से लगाया जाता था। सड़कों पर भूखों तथा प्राकृतिक आपदाओं व इन्सानी कृत्यों के शिकार लोगों की मदद की गुहार भारत की पहचान पर चिपकी हुई थी।

निसन्देह, भारत नई करवटें ले रहा है लेकिन इससे भी खास बात यह है कि दुनिया की निगाह, महाशक्तियों की नजर में भारत को लेकर जो अवधारणाऐं अब तक थीं, वे तेजी से बदल रहीं हैं। भारत तेजी से आर्थिक महाशक्ति के रूप में उभर रहा है, जिसके पास विज्ञान और प्रौधोगिकी के क्षेत्र में दुनिया में सबसे प्रशिक्षित श्रमशक्ति है। भारतीय काल सेन्टरों की कामयावी तो अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज बुश के चुनाव में एक महत्वपूर्ण मुद्दे के रूप में उभरकर सामने आई थी। अमेरिका में रह रहे बीस लाख भारतीयों के जिनमें बडी संख्या समृद्ध और अपने क्षेत्र में अग्रणी लोगों में है, प्रभाव और रसूख की एक बडी बजह यह है कि वे एक उभरती हुई आर्थिक महाशक्ति देश से सम्बन्धित है।2

1. महाशक्तियों के सन्दर्भ में :–

प्रतिष्ठत पत्रिका टाइम ने गत्माह (जून 2006) के एक अंक में भारत के ऊपर एक आवरण कथा प्रकाशित की, जिसका शीर्षक था, 'इडिया एक विश्व का सबसे बडा लोकतंत्र क्यों आगामी आर्थिक महाशक्ति है और अमेरिका, रूस तथा चीन के लिए उसका क्या महत्व है।

एक अन्य प्रसिद्ध पत्रिका फारेन अफेयर्स ने अपनी टिप्पणी में लिखा है कि आर्थिक विकास और राजनीतिक आत्मविश्वास ने मिलकर भारत का पुर्ननिर्माण किया है। एक समय समाजवादी और गुटनिरपेक्ष देश भारत आज अपनी अर्थव्यवस्था में तेजी से सुधार कर रहा है। और विश्व की महाशक्तियों के साथ राजनीतिक साझेदारी में जुटा है। जापान, दक्षिण कोरिया

और अब चीन जैसे पूर्वी एशियाई देशों ने कम लागत, सघनश्रम और निर्यातोन्मुख निर्माण उद्योग के सहारे अपनी समृद्धि पाई, जबकि इनके विपरीत भारत सेवा और घरेलू माँग के क्षेत्रों पर अपना ध्यान केन्द्रित करके विश्व की सफल अर्थव्यवस्थाओं में शामिल हुआ है।

इसी जनरल फॉरेन अफेयर्स के जून 2006 के अंक में सी. राजामोहन ने अपने लेख में कहा है कि,''एक गलत शुरूआत के लगभग आधी सदी के बाद भारत विश्वशक्ति सन्तुलन के मामले में अब निर्णायक देश के रूप में उभर रहा है। आने वाले वर्षो में इसे इक्कीसवीं सदी के अत्यंत जटिल मसलों की नियति तय करने का अवसर हासिंल होगा। जैसे एशियाई स्थायित्व के निर्माण मध्य पूर्व में राजनीतिक सुधार और भूमण्डलीयकरण के प्रबन्धन में उसे महती भूमिका मिल सकती है।................पश्चिम के भूगोल के बाहर विश्व मानचित्र पर भारत पहला विशाल, आर्थिक रूप से सक्षम, सांस्कृतिक समृद्धि वाले बहुजातीय लोकतंत्र के रूप में उभर रहा है।

जिस गति से भारत आगे बढ रहा है उसमें यह क्षमता है कि वह पश्चिम के साथ मिलकर अगले दशक की विश्व राजनीति में अग्रणी भूमिका निभाए। यह किस तरह और कितनी जल्दी होगा, यह पूरी तरह पश्चिमी शक्तियों के इस रूप पर निर्भर करता है कि वे भारत को उसकी शर्तो पर अपने साथ लेने को कब तक सहमत होती है।

जवाहर लाल नेहरू की गुटनिरपेक्ष नीति से इंदिरा गान्धी की आत्मनिर्भरता की नीति तक श्री मती गान्धी के बांग्लादेश युद्ध से राजीव गान्धी के नई सदी के दर्शन तक, नरसिंहराव के घरेलू एवं विदेशनीति में आम सहमति के विचार से अटल बिहारी वाजपेयी के समक्ष भारत के स्वप्न तक भारत ने एक लम्बा सफर तय किया है और अब मनमोहन सिंह एक उभरती आर्थिक महाशक्ति के रूप में उसका नेत्रत्व कर रहे है। इसलिए महाशक्तियों का ध्यान भारत की आर्थिक एवं सामरिक ताकत की ओर जाने लगा है। महाशक्तियाँ भारत का संज्ञान इसीलिए ले रहीं हैं, क्यों कि वे जानती हैं कि भारत का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन अभी आना बाकी है।

2–भारत–अमेरिका सम्बन्धों की समीक्षा

यूरोपीय संगठन के सन्दर्भ में:–

यूरोप में सोवियत संघ का अवसान जितनी बडी घटना है, यूरोपीय संघ का उद्‌भव भी उतनी ही बडी करामात है। 1992 से प्रारंम्भ होकर 1999 तक यूरोप के एकीकरण की इस प्रक्रिया को संपन्न होना है। अभी लगता है कि सोवियत संघ के पतन के कारण विश्व एक धुव्रीय हो गया है। लेकिन 9 व 10 दिसम्बर 1991 को मेस्ट्रिप् में यूरोपीय समुदाय की जो सफल बैठक हुई, उसने द्वितीय ध्रुव का सांगोपांग गर्भाधान कर दिया है जिसके अनुसार 1 जनवरी 1994 को स्वतंत्र यूरोपीय मुद्रा का चलन प्रारंम्भ होगा तथा यूरोपीय राष्ट्रों की पृथक–पृथक मुद्राऐं समाप्त कर दी जाएगीं। मेस्ट्रिच घोषणा में राजनीतिक संघ, सांझी विदेश नीति, सांझी प्रतिरक्षा व संयुक्त यूरोपीय संसद को भी प्रारूपित किया गया है। यह यूरोप के नैसर्गिक राष्ट्रवाद का उन्नयन है। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात आरोपित कृत्रिम राष्ट्रवाद को निर्णायक चोट पहुँचने वाली है। निश्चय ही 21वीं सदी का विश्व मानचित्र एकदम बदला–बदला व नया होगा।

यूरोपीय समुदाय के 12 देशों का आर्थिक संघठन शेष पश्चिमी व पूर्वी यूरोपीय देशों को भी अपनी तरफ आकर्षित कर रहा है यह दुनिया का सबसे समृद्ध बाजार होगा, विश्व का 10 प्रतिशत व्यापार यही अभिकेन्द्रित होगा। 1992 में इसकी प्रक्रिया प्रारंभ हुई। यह पूंजी व टेकोलॉजी का सबसे बडा श्रोत होगा। नया यूरोप अमेरिका के लिए सबसे बडी चुनौती होगा। क्यों कि सैनिक क्षमता को छोडकर बाकी सभी दृष्टियों से अमरीका को दरकिनार करने की ताकत इस यूरोपीय संघ में होगी। ब्रिटेन की सब बाधाओं क बावजूद अब यूरोपीय संघ बनना अटल है। जर्मनी के नृवंशीय पुनरीदय को रोकने का एक ही तरीका है संयुक्त यूरोप का निर्माण।

2. भारत–यूरोपीय संघ ने आतंकवाद के खिलाफ कंधे जोड़ेः–

आतंकी हमलों का दंश झेल रहा यूरोपीय संघ अब भारत के साथ मिलकर आतंकवाद सेक जंग लडेगा। भारत के नजरिये से सहमति जताते हुए वह आतंकवादी संगठनों को मिलने वाली आर्थिक मदद पर नकेल कसने को भी तैयार हो गया है। गौरतलब है कि कई सक्रिय आतंकवादी का संचालन कर रहे हैं। इधर यूरोपीय संघ भारत के साथ सक्रिय सामरिक साझेदारी व क्षेत्रीय और वैश्विक सुरक्षा के मसले पर वार्ता भी शुरू करेगा। भारत ने यूरोपीय संघ के साथ रिश्ते प्रगाढ करते हुये यूरोप की गैलीलियों संचार उपग्रह परियोजना में अपनी साझेदारी का ऐलान भी कर दिया है।

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह और यूरोपीय संघ के अध्यक्ष ब्रिटिश प्रधानमंत्री टोनी ब्लेयर की अगुवाई में बुधवार को भारत–यूरोपीय संघ की छठी शिखर वार्ता ने दोनों पक्षों के भावी रिश्तों की दिशा तय हुई। लंदन और मैड्रिड के आतंकवादी विस्फोटों से बुरी तरह हिल चुके यूरोपीय संघ ने शिखर बैठक के बाद जारी साझा घोषणा में आतंकवाद के खात्मे के लिए भारत के साथ मिलकर लडने की प्रतिबद्धता जताई। बैठक के बाद मनमोहन सिंह और ब्लेयर ने संयुक्त पत्रकार वार्ता में भी सभी तरह के आतंकवाद की कठोर भर्त्सना की।

आतंकवादियो को मिलने वाली आर्थिक मदद और काले धन के लेन–देन पर लगाम करने के लिए भी सहयोग करने पर सहमति बनी। साथ ही बिना लाग लपेट कहा गया कि आतंकवाद की चाहे कोई भी वजह हो उसे अब बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। टोनी ब्लेयर ने सवालों के जवाब मे कहा कि आतंकवाद से निपटने में भारत के अनुभवों से यूरोपीय देशों को मदद मिलेगी। ब्लेयर ने भारत के इस रूख का समर्थन किया कि आतंकवाद की सभ्य समाज में कोई जगह नहीं है। दोनों पक्षों ने परमाणु निरस्त्रीकरण और अप्रसार के लिए सुरक्षा वार्ता शुरू करने का ऐलान किया। इसक तहत वरिष्ठ अधिकारी स्तर पर क्षेत्रीय तथा विश्व सुरक्षा के मुद्दों पर सहमति के लिए दोनों पक्ष नियमित बातचीत करेंगे। साथ ही राजनैतिक संवाद तथा सहयोग बढाने पर भी जोर दिया जाएगा। हैदराबाद हाउस में हुई। शिखर बैठक में दोनों पक्षों ने वैश्विक राजनैतिक चुनौतियों से निपटने में संयुक्त परिषद में भारत की स्थाई सदस्यता के बारे में पूछे गये सवालों के जवाब में ब्लेयर और यूरोपीय आयोग के अध्यक्ष ज्यां मैनुअल बोरोसों दोनों ने कहा कि संघ के देशों की इस मसले पर अलग–अलग राय है। हांलाकि ब्लेयर ने आष्वासन दिया कि सुरक्षा परिषद के विस्तार में वे भारत की सदस्यता का समर्थन करते हैं। भारत और यूरोपीय देशों के बीच आर्थिक सहयोग तथा निवेश बढाने पर भी सहमति बनी। व्यापार और निवेश बढाने के लिए दोनों पक्षों ने उच्च स्तरीय संयुक्त व्यापार समूह बनाने का फेसला किया। यह समूह द्वितीय व्यापार में स्वच्छता मानकों के निर्धारण और तकनीकि बाधाओं को दूर करने के लिए काम करेगा। इसकी पहली बैठक साल के अंत तक होगी और समूह की रिपोर्ट 2006 के शिखर बैठक में रखी जाएगी। बैठक में सहयोग को नयी ऊँचाई देने के लिए भारत को गैलीलियो उपग्रह परियोजना का साझीदार बनाया गया। मनमोहन सिंह और ब्लेयर की मौजूदगी में इस पर दोनों पक्षों ने हस्ताक्षर किये। यूरोपीय संघ की इस महत्वाकांक्षी उपग्रह रेडियो प्रणाली के जरिए विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग की नयी ऊँचाई

मिलेगी। ब्लेयर ने इस सहयोग को भारत–यूरोपीय संघ के रिश्तों का रोडमैप करार दिया। शिखर बैठक में बोरोसों तथा साझा विदेश व सुरक्षा नीति के उच्च प्रतिनिधि जेवियर सोलाना ने भी हिस्सा लिया। शिखर बैठक वैश्विक लिहाज से इसलिए भी अहम है कि यूरोपीय संघ भारत को अपना महत्वपूर्ण रणनीतिक साझीदारी मानता है। भारत दुनिया के उन पाँच चुनिन्दा देशों में है जिन्हें संघ ने महत्वपूर्ण विषयों पर सक्रिय साझीदार का दर्जा दिया है। भारत के अलावा यूरोपीय संघ केवल रूस, चीन, जापान, और कनाडा के साथ ही शिखर बैठक करता है।

3–भारत–अमेरिका सम्बन्धों की समीक्षा:–

नाटो के सन्दर्भ में:–

नाटो एक 45 साल पुरानी सैनिक संन्धि है और यूरोप में सी.एफ.ई. में कमी होने के बाद नाटो का प्रभाव और बढ गया। शीतयुद्ध के समाप्त होने के बाद रूस की सैनिक शक्ति में भारी गिरावट आई। अब रूस नाटो के लिए कोई भारी जोखिम नहीं रहा। पूर्वी यूरोपीय देशों का सोचना है कि यदि वे देश नाटों के क्षेत्र मे आ गये तो किसी न किसी दिन यूरोपियन यूनियन में सम्मिलित हो सकेंगे। परन्तु रूस ऐसा होने देने से डरता है। उसका सोचना है कि यदि यह परमाणु शक्ति युक्त संधि उसकी सीमा तक आ गई तो कहीं उसका अस्तित्व ही खतरे में आ जाए। उधर एक बात यह भी है कि नाटो के पूर्वी यूरोपियन क्षेत्रों तक बढने के बाद अगला कदम बाल्टिक राज्यों मोल तथा यूक्रेन तक नाटो का प्रभाव क्षेत्र बढाना होगा। इसलिए रूस नाटो का प्रभाव क्षेत्र बढाने के विरूद्ध है।

इस प्रकार शीत युद्ध के समाप्त हो जाने पर भी और नाटो और रूस दोनों के (ओ.एस. सी.ई.)सदस्य हो जाने पर भी पारस्परिक अविश्वासिता बनी हुई है। अमेरिका और पूर्वी यूरोप के देश नाटो में रूस को निशेधाधिकार नही देना चाहते।

नए शक्ति संन्तुलनों के उभरने के कारणों के पीछे यूरोप के हालात ही महत्वपूर्ण है। पूर्व सोवियत राष्ट्रपति गोवाचोब जमाने में चलाये गये शान्ति अभियानों व उससे पूर्व के सोवियत राष्ट्रपति ब्रेझनेव के समय से चलाई गई। पश्चिम के साथ सहयोग और सुरक्षा की नीति ने यूरोप में परमाणु हथियारों और भारी अमेरिकी सैन्य उपस्थिति को एकदम असंगत कर दिया और ''नाटो'' संगठन का एक बहुत बडा अस्त्र बाजार अमेरिकी परमाणु अस्त्रों के लिए बन्द हो गया। उसी समय से अमेरिकी बजट में घाटा शुरू हुआ, क्यों कि अमेरिकी सैनिक

व्यवस्था का खर्च पहले की तरह ही बरकरार रहा। यूरोपीय बाजार के बन्द हो जाने के बाद अमेरिका ने पश्चिम एशिया के तेल उत्पादक देशों के बाजार तलाषे। लेकिन वे भी अमेरिका हथियार उद्योगों की भूख को पूरा करने में असमर्थ रहे। इतना ही नहीं, सऊदी अरब जैसी अमीर तेल अर्थ व्यवस्थायें भी इस प्रक्रिया और ईराक के खिलाफ अमेरिकी सामरिक अभियान में खुद भी दिवालिया हो गई। ईराक युद्ध का खर्च इन अर्थव्यवस्थाओं ने बडे स्तर पर उठाया जब कि अमेरिका ने इस युद्ध में एक पैसा भी खर्च नहीं किया।

यूरोप में नाटो,संगठन और उसमें अमेरिकी साझेदारी और प्रभुत्व का महत्व खत्म हो जाने से वहाँ से अमेरिकी सेना की वापसी की माँग भी जोर पकडती गई, खास तौर से सोवियत संघ के टूटने के बाद। और यूरोप के नाटों सदस्यों से यह मॉग भी उठी कि अब नाटों के सामरिक चरित्र को समाप्त कर उसे मात्र एक राजनैतिक संस्था हो जाना चाहिए। इस अवधारणा के उभरते ही अमेरिका के सामने यूरोप से एकदम हटने का (और इस प्रकार उस पर अपना दबदवा खत्म हो जाने का) खतरा पैदा हो गया। इस यूरोपीय चाल से बचने के लिए अमेरिका ने पूर्वी यूरोप के देशों को 'नाटो' में शामिल किये जाने का प्रस्ताव किया। इसके साथ ही रूस को भी **नाटो** में लेकर यूरोपीय देशों को 'नाटो' में अल्पमत कर देने और अपना प्रभाव बढाने की योजना बनाई।लेकिन यूरोपीय देश–फ्रान्स, जर्मनी, इटली आदि न तो रूस को 'नाटो' में लाने पर राजी हुए और न ही 'नाटो' का पूरब मे विस्तार करने पर (क्यों कि तब उन पर इस क्षेत्र संभावित रूसी दबावों में सुरक्षित करने व आर्थिक रूप से मजबूत करने की जिम्मेदारी आ पडी) उधर रूस भी इस बात पर राजी न हुआ कि नाटो में उसे एक महाशक्ति का दर्जा न मिले और वह उसके पूर्व सदस्यों के मुकाबले एक छोटे असमर्थ राष्ट्र के रूप में उसमे शामिल हो। इसलिए बात जहाँ की तहाँ अटक गई। दूसरे, रूसी सेना ने नाटो संगठन के एक सामरिक संगठन के रूप में पूरब की तरफ यानी कि उसके खुद की तरफ बढने का प्रतिवाद किया। और इस लक्ष्य में आश्चर्यजनक रूप से रूस और यूरोपीय समुदाय के लक्ष्य एक हो गये कि नाटो का न पूरब की तरफ विस्तार किया जाए और न ही एक सामरिक संगठन के रूप में रखा जाए। जब कि यूरोप में आपसी सहयोग और सुरक्षा के लिए कांन्फ्रेंस फार सिक्योरिटी एण्ड को आपरेशन इन यूरोप पहले से ही मौजूद है और जिसे मजबूत करने की मॉग भी रूस ने उठाई।

नये विश्व रक्षा परिदृश्य में नाटोः–

ईराक पर अमेरिका व सहयोगी देशों की सेनाओं के हमले ने विश्व को कई मोरचो पर नुकसान पहुॅचाया है। इससे विश्व आर्थिक राजनैतिक व वैचारिक तथा सांस्कृतिक पर तो टूटा ही है सामरिक मोरचे पर भी खासा नुकसान हुआ है। अमेरिका की हठधर्मिता के चलते जहाँ विभिन्न देशों के रक्षा खर्च बढे हैं। नाटो जैसे अन्तर्राष्ट्रीय सैन्य संगठन का अस्तित्व ही खतरे में पड गया है। ईराक पर हमले को लेकर देशों में पैदा हुए राजनीतिक गतिरोध के दौरान एक बार तो स्वयं संयुक्त राष्ट्र का वजूद भी खात्मे की तरफ जाता दिख रहा था, लेकिन विश्व नेताओं की समझ बूझ तथा युद्ध विरोधी दृढ संकल्प ने उसे बचा लिया। ईराक में अनपेक्षित नाकामयाबी तथा अकेले पड जाने के डर ने भी अमेरिका को संयुक्त राष्ट्र की शरण में आने को मजबूर किया। लेकिन इस दौरान उत्तरी अटलांटिक संधि संगठन (नाटो)के सदस्य देशों में जो दरार आई वह पाटी न जा सकी।

अंध महासागर के दोनों ओर के देश दशकों पुराने इस संगठन को कमजोर करते दिख रहे हैं। नाटो के अधिकांश यूरोपीय सदस्य देश यूरोपीय संघ के भी सदस्य हैं। कुछ सदस्य चाहते हैं कि संघ आर्थिक व राजनीतिक शक्ति के साथ–साथ एक सैनिक ताकत के रूप में भी उभरे। इसके लिए ये देश नाटो की बलि देने को भी तैयार हैं। दूसरी तरफ, अमेरिका भी चाहता है कि संधि संगठन का अस्तित्व समाप्त कर यूरोप के कुछ गिने चुने देशों की सैन्य शक्ति बढाई जाए, महाशक्ति आवश्यकता पडने पर जिसका इस्तेमाल अपने राजनीतिक तथा सामरिक लाभ के लिए कर सके।

दोनों पक्षों का नाटो को नकारने का कारण अलग–अलग दिखाई दे सकता है, लेकिन संगठन को समाप्त करने के लिए अमेरिका तथा यूरोप एक ही तरीका अपनाना चाहते हैं। अमेरिका क विचार के विपरीत फ्रान्स, जर्मनी, बेल्जियम तथा लक्जमबर्ग आदि देश इस बात के पक्षधर हैं कि यूरोपीय संघ की अपनी अलग सामरिक व्यवस्था हो। कुछ हद तक यह कवायद इसी बात के लिए हो रही है कि भविष्य में जरूरत पडने पर अमेरिका तथा यूरोपीय देश फिर से एक साथ एक मोरचे पर जा सकें। एक अनुमान के अनुसार दोनों ही पक्ष शायद इस बात पर सहमत हो चुके है कि कुछ यूरोपीय देश अपनी सेनाओं को अधिक शक्तिशाली बनाएं तथा नाटो से दूर स्वतंत्र रूप से काम करें। इस दौरान देशों को अपनी सेनाओं की किसी विशेष मोरचे पर न भेजने की स्वतंत्रता रहे, जब कि किसी दूसरे मोरचे पर वेशक ये देश अमेरिका का साथ दें।

इसी वर्ष मार्च में हुए समझौते के मुताबिक यूरोपीय संघ के देश अपनी सैनिक ताकत बढाने तथा उसका इस्तेमाल करने के दौरान नाटो के हथियार आदि का प्रयोग कर सकते हैं। इस प्रकार अमेरिका को मंशा है कि नया सैन्य संगठन नाटो का प्रतिद्वन्दी न होकर उकसा एक सहयोगी बने।

इराक मसले पर अमेरिका के धुर विरोधी रहे फ्रान्स के राष्ट्रपति जैक शिराक भी एक बहुध्रुवीय विश्व में यूरोप को अमेरिका के मुकाबले खडा करके साथ ही उसे अमेरिका के मित्र के रूप में भी देखना चाहते हैं। लेकिन ब्रिटिश प्रधानमंत्री टोनी ब्लेयर का विचार थोडा भिन्न है। वह अपने आप को अमेरिकी राष्ट्रपति से दूर दिखाना चाहते हैं। उनका विचार बिल्कुल स्वतंत्र यूरोपीय सैनिक संगठन खडा करने की है। जिसका नाटो से कोई लेना देना न हो। लेकिन ब्लेयर भी यूरोप के सभी देशों के सैनिक खर्च बढाने के खिलाफ हैं।

उनका विचार है कि केवल कुछ देश सामरिक शक्ति बढाए, मगर अन्य देश उनका साथ देने को स्वतंत्र रहें। अन्य यूरोपीय नेताओं की तरह ब्लेयर नहीं चाहते कि नए सामरिक परिदृश्य में भी नाटो ही यूरोप की सुरक्षा सुनिश्चित करे या उससे कोई मदद ली जाए। इस प्रकार यह निश्चित है कि दुनिया का सैन्य संन्तुलन बदल रहा है लेकिन नाटो का भविष्य अभी भी बहुत स्पष्ट नहीं दिख रहा है।

चीन और पूर्व सोवियत संघः—

चीनी विदेश नीति की मुख्य विशेषता पूर्व सोवियत संघ के साथ उनके बढते हुये मतभेद और विवाद रहे हैं। वैसे दोनों देश साम्यवादी थे, दोनों का उददेश्य पूंजीवाद का समूलोन्मूलन करना था तथापि 1960 में दोनों देशों में विभिन्न प्रदेशों पर सैद्धान्तिक मतभेद बढने लगे। क्यूबा के संकट में अपनायी गई मास्को की नीति से पीकिंग बहुत अप्रसन्न हुआ। 14 जून 1963 को चीन के साम्यवादी दल ने सोवियत साम्यवादी दल के नाम लिखे पत्र में खुश्चेव के राजनीतिक सिद्धान्तों पर बडे कटु आक्षेप किए। दोनों देशों के मतभेदों के समाधान के लिए 5 से 20 जुलाई, 1963 तक मास्को में बातचीत भी होती रही, किन्तु इसका कोई सनतोष जनक हल न निकल सका। ये मतभेद अप्रैल 1964 में बडे उग्र रूप में प्रकट हुए। चीन को सोवियत संघ से कई शिकायतें थीं—1— सोवियत संघ ने चीन को अणु आयुध का रहस्य नहीं बताया। 2— सोवियत संघ ने जारों के शासन काल में चीन की हजारों मील जमीन दबा ली थी जिसे चीन वापस लेना चाहता है। 3— सोवियत संघ अपने साम्यवादी भाई चीन की सहायता उतनी

उदारता और तत्परता से नहीं करता था जितनी अपने मित्र निर्गुट देशों की करता था। 4– भारत चीन सीमा विवाद के समय मास्को ने चीन का साथ नहीं दिया। 5– चीन का यह भी कहना था कि मास्को पश्चिम के साथ कडी नीति नहीं अपना रहा है। उसके साथ उसने शान्तिपूर्ण सहयोग की नीति अपनाई है। 6–चीन का कहना था कि क्यूबा संकट के समय सोवियत संघ ने शुरू से ही गलत नीति अपनायी। इससे साम्यवादी जगत की बदनामी हुई।

चीन ने सोवियत संघ के साथ अपने विवाद को सैद्धान्तिक रूप दिया क्यों कि दो साम्यवादी देशों में केवल ऐसा ही संघर्ष सम्भव था। दोनों देशों में युद्ध की अनिवार्यता, आणविक युद्ध के फलस्वरूप शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व की नीति, पूँजीवाद के साथ शान्तिमय प्रतियोगिता, क्रान्ति के सिद्धान्त, निःशस्त्रीकरण की आवश्यकता व्यक्ति पूजा के दृष्टिकोण, आदि क बारे में मतभेद रहा।

चीन की विदेश नीति का मूल्यॉकनः–

आज कल चीन की विदेश नीति में सौम्यता के लक्षण परिलक्षित हो रहे हैं अमरीका, जापान, भारत, आदि देशों से चीन के सम्बन्ध मधुर होते जा रहे है। चीन तथा सोवियत संघ में अपने सम्बन्धों को सामान्य बनाने के लिए 1987 में सीमा सम्बन्धी आंशिक समझौता भी हुआ। रूसी राष्ट्रपति बोरिस येल्तसिन ने चीन की यात्रा की और दोनों देश आपसी सम्बन्धों में शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व के पॉचों सिद्धान्तों को स्वीकार करने पर भी सहमत हो गये। चीन ने रूस से 72 सुखोई एसयू–27 विमान खरीदे। रूस के पास 2.5 अरब डालर का एक सौदा हुआ। जिसके अधीन चीन में और 200 एसयू–27 विमानों का निर्माण किया जाएगा।16 जुलाई 2001 को रूस एवं चीन के मध्य एक नई 20 वर्षीय मैत्री संधि पर हस्ताक्षर हुए। सन्धि में कहा गया कि दोनों देशों के मध्य कोई सीमा विवाद नही है तथा एक दूसरे की क्षेत्रीय अखण्डता का दोनों देश सम्मान करते हैं। जुलाई 1997 से हॉगकॉग पर चीन की प्रभुसत्ता स्थापित हो गई और ताइवान से भी निकटतम सहयोग स्थापित करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

लेकिन एक बात सर्वविदित है कि पिछले 54 वर्षो में चीन ने अनुक्रमणीय प्रगति की है चीन ने 1978 से आर्थिक सुधार कार्यक्रम लागू किया, तबसे उसकी आर्थिक विकास दर औसतन 9 प्रतिशत रही है जो अमरीका की विकास दर से तीन गुना अधिक है। वह आज विश्व की महाशक्ति बन गया है। जून 1987 में चीन ने एक बहुत शक्तिवाला भूमिगत परीक्षण

किया। मई1992 में चीन ने 10 लाख टन. टी. एन. टी. क्षमता के परमाणु बम का परीक्षण किया। ऐसे समय जब कि विश्व में परमाणु अस्त्रों के विरूद्ध एक रचनात्मक वातावरण बन रहा है चीन का यह कदम अमेरिका को यह जताने के लिए है। कि वह उसकी दादागिरी स्वीकार नहीं करता। चीन अब तक 33 परमाणु परीक्षण कर चुका है। सन् 1990 के दशक से चीन ने अपने सैन्य बजट में लगातार भारी बृद्धि की है। वर्ष 1990में उसके सैन्य बजट में 12. 5 प्रतिशत, 1991में 15.3 प्रतिशत, 1992में 13.9 प्रतिशत तथा 1993 में 14.8 प्रतिशत बृद्धि का प्रस्ताव किया गया।शीत युद्धोत्तर चीन सैन्य मोर्चे पर शिखर पर पहुँचने के लिए बडी तेजी से अग्रसर है फिर चीन स्वयं शस्त्रों का व्यापारी भी है। ईराक उसका बहुत बडा ग्राहक रहा है। चीन म्यॉमार के माध्यम से हिन्द महासागर में अपनी उपस्थिति की योजना बना रहा है। आज चीन की बढती शक्ति से भारत और दक्षिण पूर्व ऐशिया के देश समान रूप से भयभीत हैं।

निष्कर्षः–

आज रूस के सामने अनेक समस्याऐं और चुनौतियॉ है उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है अमरीका और पश्चिमी देशों से उसे आर्थिक सहायता चाहिए। नियंत्रित अर्थव्यवस्था को बाजार अर्थव्यवस्था में बदलने की समस्या हैः पूर्व सोवियत गण राज्यों से नये सम्बन्ध स्थापित करने की समस्या है। परमाणु शस्त्रों पर नियंत्रण के मुदद् को लेकर उक्रेन से उसके मतभेद उभरे हैं। राजनीतिक एवं आर्थिक परेशानियॉ जितनी गम्भीर हैं। पूर्व सोवियत सैनिकों की भारी भरकस सेना तथा उसकी मानसिक स्थितियॉ उन परेशानियों से भी ज्यादा गम्भीर हैं। यह सेना आज रूस की ताकत नहीं वरन् कमजोरी बन गई है। सोवियत संघ में रूसियों का ही वर्चस्व था। सैन्याधिकारी तो सामान्यतः रूसी ही होते थे। परिणामतः अन्य गणराज्यों के हिस्से में जो सेनाऐं आयीं। वे उनकी आर्थिक व राजनैतिक हैसियत के अनुपात में हैं।रूस की सेना का आकार रूस की राजनीतिक व आर्थिक हैसियत से बहुत बडा है। अतः जो कल तक जो रूसी साम्राज्य की ताकत थी। वहीं आज उसकी बहुत बडी कमजोरी सिद्ध हो रही है। एक सैन्य अधिकारी के शब्दों में,''पूर्व सोवियत सेना अब मध्ययुगीन चंगेजखान की सेना बन गई है जिसकी चरित्र है अराजकता।

इतनी सारी कमियों के बावजूद भी रूस एक महाशक्ति है महाशक्ति की पहचान है–परमाणु क्षमता और दूर तक मार करने वाली मिसाइल का स्वामी होना। उसके पास अमरीका और यूरोप को नष्ट करने का सामान मौजूद है। महाशक्ति की दूसरी पहचान है

संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद में वीटो के अधिकार का होना। वीटो के रूप में रूस के पास राजनीतिक शक्ति है और परमाणु अस्त्र भण्डार के चलते उसमें अन्य देशों को नष्ट करने की क्षमता भी है। इस स्थिति में रूस की अनदेखी नहीं की जा सकती।

अप्रैल 1997 तथा जुलाई 2001 में सम्पन्न रूस–चीन समझौता संयुक्त राज्य अमरीका द्वारा स्थापित की जा रही एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्था के लिए चुनौती है हाषीमोतो–येल्तसिन शिखर वार्ता(नवम्बर1997)रूस–जापान सम्बन्धों की एक बडी शानदार शुरूआत है। जापान ने वचन दिया है कि वह रूस को एशिया प्रशान्त आर्थिक सहयोग फोरम का सदस्य बनने में मदद देगा।

एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्थाः–

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व दो शक्ति गुटों में विभाजित हो गया जिनमें एक गुट का नेता संयुक्त राज्य अमेरिका और दूसरे गुट का नेता सोवियत संघ था किन्तु 20 वीं शताब्दी के अन्तिम दशक में कुछ ऐसा घटित हुआ कि विश्व में एक मात्र महानतम शक्ति ही अवशेष है। अव विश्व राजनीति दो भीमकार दैत्यों के बीच का संघर्ष नही रह गयी। सोवियत संघ के विखराव के बाद और पूर्वी यूरोप से साम्यवाद की विदाई के साथ एक दूसरे भीमाकार दैत्य की अकाल मृत्यु हो गयी। दूसरी तरफ इन्ही दिनों खाडी युद्ध में अमेरिकी विजय ने उसकी शक्ति प्रभाव एवं वर्चस्व में अभूतपूर्व बृद्धि कर दी।

आज की इस उदीयमान्नयी विश्व व्यवस्था में संयुक्त राज्य अमेरिका ही विश्व की एक मात्र आर्थिक और सैनिक शक्ति है उसकी कोई बराबरी नहीं कर सकता। ''उसका कोई प्रतिद्वन्द्वी नही है उसे कोई ललकार या चुनौती नही दे सकता। उसके पास परमाणु अस्त्रों का ही भण्डार नही है। अपितु आर्थिक क्षमता भी अधिक है वह राष्ट्रों पर दवाब डालकर उन्हें अपनी नीतियॉ बदलने के लिए मजबूर करने की स्थिति में है। संयुक्त राष्ट्र संघ ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय कोश और विश्व बैंक वित्तीय संस्थाऐं भी उसकी मुटठ्ी में है।

पत्रकार सुरेन्द्र प्रताप सिंह लिखते है सोवियत संघ सहित वार्सा सन्धि के देशों के पतन तथा कुवैत ईराक युद्ध में कुवैत की ओर से निर्णायक भूमिका निभाने के बाद अमेरिका ने उस विश्व संरचना को पूरी तरह से बदल डाला है।

आज अमेरिका चाहता है कि प्रत्येक देश उसके समक्ष नतमस्तक हो इस मानसिकता का सर्वप्रथम नजारा देखा गया ईराक में। जब भारत ने पोखरण में परमाणु परीक्षण किये तो अमेरिका ने भारत पर अनेक आर्थिक प्रतिबन्ध लगा दिये थे।

भारत अमेरिका सम्बन्ध और दक्षिण एशियाः– भारत ने दक्षिण एशिया में शान्ति और समृद्धि के लिए एक और प्रयास करते हुए इस सूजी खाका पेश किया है इसमें आतंकवाद से मुकाबले में सहयोग क्षेत्र में असन्तुलन पैदा करने का प्रयास करने वाली ताकतों की हरकतों पर रोक और सभी विवादों का बातचीत से हल शामिल है। भारत और अमेरिका के बीच (गैर सैन्य) अन्तरिक्ष और उच्च प्रौद्योगिकी व्यापार समझौते को तेज गति से लागू कराने के लिए जल्द वार्ता होगी। बुडरो विवसन सभागार में बुधबार को भारत की विदेश मंत्री यसवंत सिन्हा ने दक्षिण एशिया को समृद्धि और शान्ति के लिए भारतीय योजना को पेश किया। सिन्हा अमेरिका की तीन दिवसीय यात्रा पर है। उन्होने ने उम्मीद जताई कि दक्षिणी एशियाई देश इस योजना को स्वीकार कर लेगें। उन्होने कहा कि आने वाले समय में विद्वान इस योजना को स्वीकार कर लेगें। महत्वपूर्ण करार देगें। उन्होने कहा है कि भारत इस योजना को असली जामा पहनाने के लिए हर प्रयास करने के लिए तैयार है। उन्होनें कहा कि आतंक के खिलाफ विश्व युद्ध है। उन्होने कहा कि यह विश्व योजना लोकतंत्र को बढावा देने और सुशासन के जरिए लोकतंत्र संस्थाओं की मजबूती का प्रयास भर है। इसमें आतंकवाद से मुकाबला और सीमा पार के जरिए होने वाले अन्य अपराधों मसलन मादक द्रव्यों की तसकरी हथियार और मावन तस्करी हवाला के जरिये लेन देन तथा अवैध घुसपैठ पर रोक शामिल है। सिन्हा ने कहा कि इस सिलसिले में वे भूटान का जिक्र करना मुनासिफ समझेगें। भूटान नरेश ने साहसिक फेसला लेकर आतंकियो को अपनी सीमा मे खदेड दिया। सिन्हा ने कहा कि भारत और पाकिस्तान के बीच अमेरिका ने मध्यस्थ जैसी कोई भूमिका नहीं निभाई है। इससे पहले अमेरिका विदेश मंत्री कालिंग पावेल ने कहा कि इस्लामाबाद में सार्क सम्मेलन के दौरान दोनों देशों के बीच सम्बन्धों मे गर्मजोशी 2 साल से जारी अमेरिका के प्रयासों का नतीजा है। राष्ट्रपति जार्ज0 डब्ल्यू0 बुश और पावेल से मुलाकात के बाद सिन्हा ने कहा कि मैने यहॉ जो बात की है उसमें अमेरिकी नेताओं ने ऐसा कोई इशारा नहीं किया। उन्होने कहा कि भारत पाक वार्ता में अमेरिका की भूमिका एक ऐसे दोस्त की है जो प्रगति की जानकारी लेना चाहता है।

सही राह पर दक्षिण एशियाः– भारत पाक रिश्तों में सहजता लाने के लिए प्रधानमंत्री बाजपेई और राष्ट्रपति मुशर्रफ के बीच होने वाले सम्बाद के बीच 12 सार्क शिखर सम्मेलन की उपलब्धियॉ दबकर रह गई। और उन्हें जो अहमियत मिलनी चाहिए थी वह नहीं मिली।

पिछले दिसम्बर में प्रधानमंत्री अटल विहारी बाजपेई और विपक्ष की नेता सोनियॉ गान्धी द्वारा की गई सार्वजनिक घोषणाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि देश के राजनीतिक नेत्रत्व में दक्षिण एशियाई संघ पर एक आम सहमति बन चुकी है। जहॉ बाजपेई ने दक्षिण एशियाई सन्धि के लिए एक आम मुद्रा एवं आर्थिक समूह की सम्भावनाओं पर चर्चा की। वही सोनिया गान्धी ने दक्षिण एशियाई संसद और एक एकीकृत आर्थिक व्यवस्था का खाका प्रस्तुत किया।

क्षेत्रीय व्यापारिक सहयोग का आरम्भ में बाग्लादेश ने हॉलाकि प्रतिरोध किया था लेकिन फिर साप्टा को क्रियान्वित करने और बाद में इसे साप्टा में परिवर्तित करने पर अपनी सहमति दे दी थी। इन घटना क्रमों के आधार पर कहा जा सकता है कि दक्षिण एशियाई देशों में जनमत में अपरिवर्तन आ रहा है। पहले वे द्विपक्षीय विवादों में पडना नही चाहते लेकिन अब इन देशों मे आपसी सहयोग के प्रति जागरूकता आ गई है। इस्लामाबाद सम्मेलन मे किये गये फेसलों और समझौतों से एकीकरण और व्यापार के जरिए आर्थिक विकास की वास्तविक प्रक्रिया एवं आतंकवाद विरोधी ताकतों का व्यापक आधार मिला।

दक्षिण एशियाई मुक्त व्यापार क्षेत्र साप्टा बनाने पर सभी सदस्य देशों की सहमति का होना सबसे महत्व पूर्ण घटना थी। आतंकबाद का मुकाबला करने के लिए एक अतिरिक्त जरूरी कदम उठाने की बात कही गई भारत के खिलाफ पाकिस्तान और बाग्लादेश में सक्रीय आतंकवादी गुटों को देखते हुये यह एक आश्वस्त करने वाली घटना है।

मुशर्रफ का यह बयान है कि वह अपने नियंत्रण वाले क्षेत्रों में आतंकवादियों और उनकी गतिबिधियों को पनपने नहीं देगें। बिना किसी विवाद के सभी सात सदस्य देशों ने इस प्रोटोकोल पर हस्ताक्षर किये।

वैश्वीकरण के बहाव को देखते हुये शिखर सम्मेलन के दौरान एक निश्चित अवधि के भीतर दक्षिण एशियाई आर्थिक संघ का गठन करने और एक सार्वजनिक मुद्रा चलाये जाने पर प्रारम्भिक फेसला भी लिया गया।

यदि सार्क की पिछली कार्यवाहियों पर नजर डाली जाए तो स्पष्ट होता है कि क्षेत्र के देशों की सरकारी नीतियॉ और उनके नजरिये में काफी बदलाव आ गया है।

भारत की अतिरिक्त जिम्मेदारी है कि इस्लामाबाद मे शुरू हुई सहयोग की प्रक्रिया में वह उत्प्रेरक की भूमिका अदा करे। भारत को चाहिए कि पडोसी देशों के साथ अपने रिस्तों के सन्दर्भ में अनिवार्य रूप से ऐसी नीतियॉ बनाये जिससे उनकी उलझनें और सिकायतें खत्म हो सकें

सार्क के सभी सदस्य देशों की धारण है कि दक्षिण एशियाई के मामलों में भारत का व्यवहार बडे भाई जैसा है आर्थिक मामलों में उसका उदार रूक नहीं है।

यह महत्वपूर्ण नहीं है कि ये धारणाऐं कितनी सच है या नही है। बल्कि उन देशों की जनता और सरकारों की हमारे बारे मे सोच ज्यादा महत्वपूर्ण है क्यों कि इससे भारत और सार्क के प्रति इनकी नीतियॉ सीधे–2 प्रभावित होती है इस सन्दर्भ में उन्होने तीन नीतिगत फेसलों की घोषणा की थी।

पहला भारत सार्क के अस्तित्व और उसके उददे्श्यों के प्रति द्रणता से प्रतिबद्ध है क्यों कि क्षेत्र में शान्ति और सुरक्षा सुनिश्चित करने में सार्क एक मूलभूत घटक है।

दूसरा भारत पडोसियों के साथ द्विपक्षीय मुदद्ों पर अपने मतभेदों का प्रभाव सार्क के तहत प्रयास किये जा रहे सहयोग के रास्ते में नही आने देता।

तीसरा सार्क के अर्न्तगत विभिन्न परियोजनाओं एवं पहलकदमियों पर किस प्रकार का और किस हद तक सहयोग दिया जाना है। यह सार्क के अन्य सदस्य तय करेंगे। ताकि ऐसा न लगे कि भारत किसी फेसले की हिमायत कर रहा है।

विदेश मंत्री यशवंत सिंन्हा ने सभी नीतियों का बरकरार रखा है। उन्होंने कहा कि भारत इस बात के लिए पूरा सचेत है कि उसकी नकारात्मक छवि न बनने पाए और इस दिशा में वह प्रयत्नशील भी है। उन्होने ध्यान आकर्षित करते हुए कहा कि पाकिस्तान के साथ सडक, रेल और नौवहन संपर्क, श्री लंका के साथ खुले आसमान नीति पर सहमति, नेपाल के साथ रेल और सडक परिवहन, भूटान और नेपाल में हाइड्रो इलैक्ट्रिक परियोजना आदि ऐसे फेसले है जिसके बदले में भारत ने कोई मांग नहीं की है। इन सभी के पीछे सिर्फ एक ही मकसद रहा है कि आपसी जनसंपर्क में बृद्धि हो।

बारहवें सार्क सम्मेलन के दौरान जो पहलकदमियॉ की गई है उनसे दक्षिण एशिया, पश्चिम एशिया के कुछ क्षेत्रों और दक्षिण पूर्वी एशिया के लोगों को निश्चित रूप से फायदा होगा। लेकिन इस आधार सिला पर इमारत खडी करना भी नहीं है। द्विपक्षीय विवादों और

तनावों को नजरअंदाज नही किया जा सकता। इन प्रयासों के समानांतर प्रत्येक सदस्य देश को अपने स्तर पर भी प्रयत्न सदस्य देश को अपने स्तर पर भी प्रयत्न करने होंगे। ताकि कहीं कोई कसर न रहने पाए।

भारत एवं उसके पडोसी:– भारत के लिए आज सबसे बडी चुनौती पडोसियों के बिगडे तेवर सुधारने की है चीन से सम्बन्धों के सामान्यीकरण का दारोमदार सीमा–विवाद के हल पर अधिक निर्भर है। पाकिस्तानी परमाणविक कार्यक्रम चिन्ता का मामला है। इसे बिडम्बना ही समझा जा सकता है। कि आज पाकिस्तान और बंगलादेश के पारस्परिक सम्बन्ध भारत–बंगलादेश सम्बन्धों की अपेक्षा मधुर हैं। भारत बंगला देश सीमा पर छोटी–मोटी झडपें पिछले वीस साल से भी अधिक समय से होती रही है। श्री लंका के तेवर चढे हुए हैं और हर बार रियायतें देने के बावजूद नेपाल की ओर से भारत को आक्रामक राजनय बर्दाश्त करनी पडती है।

भारत–पाकिस्तान संबंध:– भारत और पाकिस्तान के बीच हाल में हुए बदलाव दोनों देशों के रिश्तों में सुधार के संकेत देते हैं अंततः दोनों देशों ने उन 13 प्रस्तावों को मान लिया है जिनमें परम्परागत एवं परमाणु विश्वास बहाली के उपाय भी शामिल हैं। ये मिश्रित वार्ता प्रकिया का हिस्सा होंगे।

किसी भी संचार में गैर–मौखिक तत्व हमेशा मौखिक तत्व से अधिक स्पष्ट एवं अनूठा होता है। यहॉ पर जो प्रासंगिक है वहा है परस्पर मनोदशा का लक्षण जो कि अब तक के लगभग सभी प्रयासों में गलत ढंग से उभरकर सामने आया। किन्तु वर्तमान में दोनों ओर से संबंन्धों को मधुर बनाने की चेष्टा सुस्पष्ट है। नयी दिल्ली एवं इस्लामाबाद ने सियाचीन में सेना की टुकडी हटाने एवं उनकी पुनः तैनाती पर विचार विमर्श के लिए मंत्रणा की है। जम्मू एवं कश्मीर मे विश्वास बहाली के उपाय, जैसे कि लोगों के बीच संपर्क बढाने के लिए पर्यअन वीसा का प्रदान किया जाना एवं दोनों देशों के तीर्थो पर लोगों की आवाजाही बढाना शामिल है पर दोनों देश बातचीत को आगे बढने पर राजी हो गये।

जहॉ तक अतीत का सवाल है, भारत पाक संघर्ष की प्रकृति को सही रूप से समझने के लिए भारत विभाजन में निहित तथ्यों का वस्तुनिष्ठ अध्ययन अपरिहार्य है। विभाजन की घटना ने दो समुदायों के बीच घृणा और अविश्वास और वैमनस्य को क्रूरतम ढंग से उजागर किया है। विभाजन के बाद सभी समस्याओं के स्वतः ही सुलज जाने का सपना देखने वालों ने

जब वास्तविकता पर नजर दौडाई तो उन्हें घोर निराशा हुई। **कुलदीप नैय्यर** के शब्दों में,'' विभाजन के लिए आप किसी को भी दोषी ठहरायें वास्तविकता यह है कि इस पागलपन ने दो समुदायों और दो देशों के बीच दो पीढियों से भी अधिक समय तक के लिए सम्बन्धों में कडवाहट उत्पन्न कर दी। माईकल ब्रेशर ने ठीक ही लिखा है,'' भारत और पाकिस्तान हमेशा अघोषित युद्ध की स्थिति में ही रहे है।

पाकिस्तान से सम्बन्ध सुधारने की दृष्टि से विविध भारतीय प्रधानमंत्रियों की ओर से सकारात्मक घोषणाऐं और दोस्ती का पैगाम दिया गया। लेकिन पाकिस्तान ने उनका सकारात्मक उत्तर नहीं दिया। पुनः सम्बन्धों में मधुरता के लिए बयार बह रही है। देखते है। कि किस निषकर्श पर पहुँचते है।

भारत और श्री लंका संम्बन्ध।:– भारत और श्री लंका एक दूसरे के पडोसी देश हैं किन्तु इनके सम्बन्ध पडोसियों के सम्बन्धों से भी अधिक गहरे हैं। श्री लंका भारतीय उपमहाद्वीप का ही एक अंग है, अतः इसका राजनीतिक महत्व ही नहीं बल्कि औद्योगिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक महत्व भी है।

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में श्री लंका का विशेष महत्व है। हिन्द महासागर में से गुजरने वाले सभी जल मार्गों का यह केन्द्र है। भारत एवं अमरीका यहॉ तक कि सभी राष्ट्रों के लिए इसकी सामरिक स्थिति महत्वपूर्ण है। भारत की भॉति श्री लंका की नीति अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में शान्तिवाद गुट निरपेक्षता सह अस्तित्व और दूसरे देशों से मित्रता पूर्ण सम्बन्ध भी रहे हैं। भारत और श्री लंका में मैत्री पूर्ण संम्बन्ध होने पर भी समय–2 पर कुछ घटनाऐं घटित होती रही हैं। जिससे दोनों देशों के बीच मतभेद उभरकर सामने आये।

श्री लंका में विगत 15 वर्ष से चल रहे ग्रह युद्ध में 35 हजार से अधिक लोग मारे जा चुके हैं। गृह युद्ध के दौरान हो रही मुठभेडों मे सैनिकों के साथ बडी संख्या में तमिल विद्रोही भी मारे जा रहे हैं। अतः भारत ने श्री लंका के समक्ष अपने इस विश्वास को दोहराया है। श्री लंका की एकता और अखंण्डता बरकरार रखते हुये भी जातीय समस्या का बातचीत द्वारा स्थायी राजनीतिक समाधान किया जा सकता है।

भारत–बंगलादेश संम्बन्धः– 1971 में बंगलादेश के निर्माण में भारत की महत्वपूर्ण भूमिका रही। इसीलिए **शेख मुजीद** ने कहा,''भारत बंगलादेश एक असीम भाईचारे में बंध गये है। उनका कृतज्ञ राष्ट्र भारत की सहायता भुला नहीं सकेगा।

भारत बंगलादेश सम्बन्ध इस बात का जीता जागता सबूत है कि भारत पडोसियों को हर सम्भव यहॉ तक कि अपनी कीमत पर भी मदद करना चाहता है। इसके कारण दोनों देशों की सीमाओं पर व्यापारिक गातिबिधियॉ बढी हैं।

1972 में भारत और बंगलादेश ने 25 वर्ष के लिए सहयोग मित्रता एवं शान्ति की एक सन्धि पर हस्ताक्षर किये इस सन्धि ने रंगभेद एवं उपनिवेशवाद का खुला विरोध किया था। तथा आर्थिक वैज्ञानिक तकनीकि व्यापार परिवहन एवं संचार के क्षेत्रों में सहयोग पर जोर दिया। दोनों देशों ने बाढ की रोकथाम नदी घाटी के विकास , साहित्य शिक्षा, संस्कृति खेल कूद एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी मामलों पर भी सहयोग करने के लिए समझौता किया।

बांगलादेश वर्तामान में मानव विकास सूचकांक में पाकिस्तान से ऊपर पहुॅच चुका है और दक्षिण एशिया में दूसरी सबसे बडी आर्थिक शक्ति के रूप में उभरने के लिए तैयार है इसीलिए भारत को आर्थिक एवं राष्ट्रीय सुरक्षा की रणनीति में बांगलादेश को अधिक महत्व देना चाहिए।

भारत–नेपाल सम्बन्धः– नेपाल हिमालय की उपत्यकाओं मे बसा हुआ एक छोटा सा भारत का पडोसी देश है। यह भारत और तिब्बत के बीच स्थिति है और अब तिब्बत पर चीन के आधिपत्य के बाद भारत व चीन के बीच एक बफर स्टेट का कार्य करता है।

भारत के उत्तर–पूरब में स्थित नेपाल सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। चीन द्वारा तिब्बत को हस्तगत कर लेने के बाद भारत–चीन सम्बन्धों में नेपाल की सामरिक स्थिति को राजनीतिक महत्व बढ गया। उत्तर में भारत की सुरक्षा एक बडी सीमा तक नेपाल की सुरक्षा पर निर्भर करती हैं। पण्डित नेहरू ने 17 मार्च 1950 को कहा था।,''जहॉ तक कुछ एशियाई गतिविधियों का सम्बन्ध है, भारत तथा नेपाल के बीच किसी प्रकार का सैन्य समझौता नहीं है लेकिन नेपाल पर किये जाने वाले किसी भी आक्रमण को भारत सहन नहीं कर सकता। नेपाल पर कोई भी सम्भावित आक्रमाण निश्चित रूप से भारतीय सुरक्षा के लिए खतरा होगा।'' अक्टूबर 1956 में डा0 राजेन्द्र प्रसाद ने अपनी नेपाल यात्रा के दौरान कहा था कि नेपाल की शान्ति और सुरक्षा के लिए कोई भी खतरा भारतीय शान्ति और सुरक्षा के लिए खतरा है। नेपाल के मित्र हमारे मित्र हैं और नेपाल के शत्रु हमारे शत्रु हैं।

भारत–भूटान सम्बन्धः– भूटान पूर्वी हिमालय में स्थित एक छोटा सा स्वतंत्र राज्य है। इसके पश्चिम में भारत का सिक्किम प्रान्त तथा बंगाल का दार्जिलिंग जिला इसे नेपाल से अलग

करता है। इसकी उत्तरी तथा उत्तर पूर्वी सीमा पर तिब्बत और इसके पूरब तथा दक्षिण में भारत का असम प्रान्त है। भूटान की सामरिक अवस्थिति का लाभ उठाने के लिए चीन ही नहीं, अमेरिका, पूर्व सोवियत संघ तथा अन्य यूरोपीय राष्ट्र भी लालायित रहे हैं। यदि भूटान को एकदम खोल दिया जाए तो वह भारतीय सुरक्षा के लिए भी खतरनाक सिद्ध हो सकता है, लेकिन एक सार्वभौम राष्ट्र को, जो कि संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य है, भारत एक सन्धि के आधार पर कितना नियंत्रित कर सकता हैं, यह प्रश्न भी विचारणीय है।

निश्कर्षतः–पडोसी देशों के साथ भारत के सम्बन्धों के विवेचन से यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि भारतीय विदेश नीति इस क्षेत्र में बुरी तरह असफल रही है। पाकिस्तान हो या श्री लंका, चीन हो या बांगलादेश, नेपाल हो या भूटान, सभी पडोसी देशों के साथ भारत के कटु विवाद उभरते रहे हैं। चीन, पाकिस्तान, और श्री लंका के सन्दर्भ में बल प्रयोग तक की आवश्यकता भी पड चुकी है।

प्रखर राजनयिक डा0 शिशिर गुप्ता के अनुसार इन छोटे पडोसी देशों के लिए यह एक मनो वैज्ञानिक विवशता है। कि वे अपनी स्वतंत्र राष्ट्रीय पहिचान प्रमाणित करने के लिए भारत विरोध का स्वर निरन्तर मुखर करते रहें। इनमें से अनेक पडोसी देशों ने समय–2 पर बाहरी शक्तियों को हस्तक्षेप का आमंत्रण देकर भारत को कृत्रिम रूप से सन्तुलित करने का प्रयत्न किया है। इसमें पाकिस्तान का अमरीका के साथ सैनिक गठबन्धन, नेपाल का चीन के प्रति झुकाव और श्री लंका की हिन्द महासागरीय नीति उल्लेखनीय है। यदि भारत अपनी सामर्थ का प्रदर्शन भर करता है। तो उस पर भयादोहन का आक्षेप लगाया जाता है। और यदि भारत अपनी सदाषयता प्रमाणित करने के लिए रियायतें देता है तो पडोसी देश अपनी दुर्वलता का लाभ उठाने की कोशिश करते हैं। विद्वानों को आषा है कि 'सार्क' जैसे संगठन से भारत को पडोसियों के साथ घनिष्ठ और गतिशील सम्बन्ध स्थापित करने में मदद मिलेगी।[12]

Reference:-

1. डा. पुष्पेशपन्त, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, पेज612–13

2. न्ये विश्व रक्षा परिदृश्य में नाटो, 13 नबम्बर 2003 अमर उजाला।

3. टाइम, जून 2006, इण्डिया विश्व का सबसे बडा लोकतंत्र ? पेज 83–84

4. फारेन अफेयर्स जून 2006 पेज 100–101

5- Inter national studies, Journal Jan. 2005 page 102-3

6- European Journal of 9-R- Aug 2003

7- Internatiom all affairs feb 2007

8- Orbis A journal of world affairs jan 2004

9- Foreign Affairs, U.S.A , feb 2006

10-Dialogue, Newdelhi, feb 2005

11-राजदूत, भारत–श्री लंका सम्बन्ध, 20 जून 2001 पेज. 18

12-K.P. Mishra(ed.) Studies in Indian foreign Policy, Page 107

अध्याय सप्तम

भारत अमेरिका सम्बन्ध का भविष्य और सम्भावनाओं

भारत अमरीका सम्बन्ध भविष्य और सम्भावनाऐं

1. नव शीतयुद्ध के सन्दर्भ में:—

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद विश्व वातावरण में आये परिवर्तनों ने भारत—अमरीका देशों को अपने दिपक्षीय सम्बन्धों को पुनः मूल्यांकन करने का अवसर दिया है। अमरीका ने भारत द्वारा किये गये आर्थिक उदारीकरण उपायों का गर्मजोशी से स्वागत किया है। क्यों कि इससे अमरीका बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को एक तरफा बहुप्रतीक्षित लाभ होगा। इस विशाल बाजार का व देश के प्राकृतिक संसाधनों का खुला दोहन कर सकेगी। इसीलिए भारत में सबसे पहले व सबसे अधिक पूंजीनिवेश अमेरिकी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने किया है भारत अमरीकी सम्बन्धों की उल्लेखनीय विशेषता वर्तमान एकतरफा व्यापार और पूँजीनिवेश की खुली छूट है।[1]

मई 1998 में भारत ने सुरक्षात्मक कारणों से परमाणु परीक्षण किये। अमरीका ने भारतीय आवश्यकता को नजरअन्दाज करते हुये आर्थिक प्रतिबन्धों की घोषणा कर दी। भारतीय वैज्ञानिक अनुसंधान सहायता पर रोक तथा भारतीय वैज्ञानिकों के अमेरिका गमन पर रोक लगा दी। अमेरिकी सत्ता प्रतिष्ठान ने हमारी परमाणु परीक्षण की कार्यवाही को विश्वासघात की संज्ञा दी। जो देश एक ध्रुवीय विश्व तथा एकल चौधराहट का सपना बुन रहा हो किसी अन्य राष्ट्र भले वह लोकतान्त्रिक देश हो को परमाणु शक्ति बनते कैसे देख सकता था ?[2]

राजनीतिक और सामरिक दृष्टि से भी उपरोक्त निष्कर्ष खरा उतरता हैं। इस तथ्य को रेखांकित करने की आवश्यकता नहीं कि अब अमेरिका एक मात्र वैश्विक महाशक्ति है और इसलिए उसके साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखने में भारत की दिलचस्पी है। दूसरी ओर यह बात भी निर्विवाद रूप से कही जा सकती है। कि अमेरिका भारत की उपेक्षा नहीं कर सकता। क्यों कि उसकी जनसंख्या विश्व में चीन के बाद सबसे अधिक है। उसके प्राकृतिक संसाधन विशाल हैं। उसने औद्योगिक, प्रौद्योगिकी और प्रतिरक्षा के क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति की है। और तीसरी दुनिया के राष्ट्रों में उसका महत्वपूर्ण स्थान है। और अन्त में भारत विश्व का सबसे बडा जनतान्त्रिक देश है।[3]

भविष्य में भारत–अमरीका सम्बन्धों की प्रकृति क्या हो सकती है, प्रस्तुत है अध्ययन के अनुसार तीन परिद्रश्यों की परिकल्पना की जा सकती है। वे परिदृश्य हैं।–1. तनाव पूर्ण अथवा शत्रुवत सम्बन्ध,

2. तनाव मुक्त अथवा मित्रवत सम्बन्ध 3. तनाव–सहयोग मिश्रित सम्बन्ध। इन परिदृश्यों में से कौन से परिदृश्य की उत्तर–बुश काल में बनने की सम्भावना दिखाई देती हैं इस विषय में हम यहाॅ विचार करेंगें।

जब हम भारत–अमेरिका सम्बन्धों के विगत पर दृष्टि डालते हैं तो हम देखते हैं कि निक्सन काल में सम्बन्धों की प्रकृति मोटे तौर पर प्रथम परिदृश्य की थी। कैनेडी काल में सम्बन्धों को मौटे तौर पर दूसरा परिदृश्य उभरा। रीगन और बुश कार्या में सम्बन्धो में जो परिदृश्य बना वह मोटे तौर पर तीसरा परिदृश्य था। उपरोक्त परिदृश्यों के निर्माण में कई कारक सक्रीय रहे, एवं कई प्रकार के मुदद्– द्विपक्षीय, क्षेत्रीय और वैश्विक–उभरे जिनका विवेचन प्रस्तुत अध्ययन में किया जा चुका है। जो मुदद् जो इन सम्बन्धों को गहनता से प्रभावित कर सकते हैं उन्हें गहराने, तिरोहित होने अथवा उनकी यथास्थिति के बने रहने की सम्भावनाओं का हम विश्लेषण करेंगे। ताकि यह दर्शाया जाए कि सम्बन्धों की उभरती प्रवृत्ति किस परिदृश्य को इंगित करती है।[4]

2. पाक–चीन गठबन्धन के सन्दर्भ में:–

मेरे मित्र का मित्र मेरा मित्र हो सकता है, तो मेरे शत्रु का शत्रु भी मेरा मित्र होगा। सधी हुई इन्ही लाइनों के दायरे में भारत,चीन और पाकिस्तान आपस में तथा शेष पडोसी देशों के साथ व्यापारिक, राजनीतिक, सामरिक, सहयोग और साझेदारी तय कर रहे है। इसी के सूत्र पर कभी सीधे, तो कभी राष्ट्र हित के बहाने परोक्ष रूप से नॉक पकडने की कोशिश हो रही हैं भारतीय समुन्द्री क्षेत्र में उसकी साफ आहट का सुनाई देना इसी नीति का हिस्सा है।

चीन भारतीय समुन्द्र में अपना दबदवा बढा रहा है जब कि दोनों देशों के बीच में तकरीबन 24 बिलियन डालर का द्विपक्षीय व्यापार है आर्थिक, व्यापारिक और फिर राजनीतिक ताकत की ओर केन्द्रित रहने वाला चीन अब सामरिक ताकत बढाने के लिए तैयार हो रहा हैं।ऐसे में, भारत का चिन्तित होना स्वाभाविक है।[5]

हॉलाकि 1962 के बाद से चीन ने सीधे तौर पर भारत की ऑख नही दिखाई। लेकिन कभी चैन से बैठने भी नही दिया। वह पाकिस्तान समेत पडोसी देशों की सैन्य और संसाधन

के स्तर पर मदद करके भारत की ऑख में किरकिरी बना रहता है। खात तौर पर पाकिस्तान का सरोगेट बनकर।

कूटनीति के जानकार मानते हैं कि चीन की कोशिश भारत को लगातार दवाने की रहती है। इसके लिए वह पाकिस्तान का सहारा लेता हैं। इसी का साफ संकेत उसका भारतीय समुन्द्री क्षेत्र में आना भी है।

वह पाकिस्तान, बांगलादेश, म्यॉमार, को संसाधन, समर्थन उपलब्ध कराता हैं। म्यॉमार ने चीन के लिए अपना पोर्ट इस्तेमाल करने का दरवाजा खोल दिया हैं। इसके अक्याव, मरगुई, और हैगीं बन्दरगाह का जब चाहे इस्तेमाल कर सकता हैं। मालद्वीव के साथ सम्पर्क बढाने की कोशिश रही है। श्री लंका के हैबनटोटा में भी वह सीपोर्ट विकसित करना चाहता हैं। श्री लंका की सरकार को इसका प्रस्ताव भी दिया जा चुका है।

चीन अभी भी पाकिस्तान को परमाणु हथियार और वैलिस्टिक मिसाइलें मुहैया करा रहा है। जब कि उसने अमेरिका को आश्वासन दिया था कि वह ऐसा नही करेगा। अमेरिकी खुफिया संस्था सेंटर इन्टेलीजेन्स ऐजेन्सी ने ये जानकारी दी है। अमेरिकी कांग्रेस को दी गई एजेन्सी की ताजा छमाई रिपोर्ट में कहा गया है कि हम इस तथ्य से इन्कार नहीं कर सकते। चीन और पाकिस्तान के परमाणु हथियार कार्यक्रम से जुडी कई हस्थियों के बीच सम्पर्क लगातार बना हुआ है।

3. भारत–रूस–चीन गठबन्धन के सन्दर्भ में :–

भूतपूर्व प्रधानमंत्री अटल विहारी बाजपेई रूस के दौरे पर गये थे। यात्रा अत्यधिक रूचिकर और चर्चा का विषय बनीं। पर इससे कोई ठोस एवं वास्तविक उपलब्धि पूर्णतः प्राप्त नहीं हो सकी। इस यात्रा के दौरान दोनों पक्ष ''पॉचवी पीढी का युद्धक विमान'' संयुक्त रूप से विकसित करने पर सहमत हुये। रूस से भारतीय रक्षा सौदों के एक पैकेज पर दोनों देश बातचीत कर रहे हैं।

अटलविहारी बाजपेई के मॉस्को दौरे के बाद रूस के रक्षा मंत्री सर्गेई इवानोव रक्षा सौदों पर बातचीत करने भारत आये। रूस का भारत के साथ सक्रीय रक्षा सहयोग है।

गैर रक्षा व्यापार कभी भी भारत–रूस सम्बन्धों का मुख्य बिन्दु नहीं रहा भारत–रूस सम्बन्धों के सुनहरे दौर में भारत का लगभग एक चौथाई विदेशी व्यापार रूस से होता था, अतः ये गिरावट नाटकीय है इन्डोरसियन ब्रह्मोस एयरोस्पेस लिमिटेड मे रूस के प्रमुख शस्त्र

निर्यातक रोसोबोरो एक्सपोर्ट के साथ समझौता किया। जिससे ब्रह्मोस प्रक्षेपास्त्र प्रणाली के युद्धपोत और विमान संस्करणों को विश्व बाजार में बेचा जा सके। और इनका संयुक्त रूप से विपणन किया जा सके। पहली बार भारत ने किसी दूसरे देश के साथ मिलकर एक अत्याधुनिक युद्ध प्रणाली का विकास, निर्माण एवं विपणन किया है।[6]

चीन के साथ भारत को भविष्य की आर्थिक महाशक्तियॉ बताये जाने से हम फूले नहीं समां रहे। पर तल्ख हकीकत यह भी है कि चीन बीते कुछ समय से भारत की घेरे बन्दी कर रहा हैं। क्या वह हमारे पडोसी देशों से महज बेहतर रिश्ते कायम करना चाहता है ? या हमारे पडोसियों के साथ मिलकर वह हमें अलग–थलग करना चाहता है ? ऐसे में क्या होनी चाहिए हमारी रणनीति?

हॉलाकि यह मानने का सवाल नहीं है कि चीन भारत के साथ इस तरह का सुलूक कर सकता है, जैसा उसने वर्ष 1962 में किया था। समय बदल गया है और भारत मजबूत स्थिति में है। इसने अर्थ व्यवस्था के साथ–2 तकनीकी में भी बहुत प्रगति की है। इस दौरान भू राजनीति स्थिति भी तेजी से बदली है। भारत न सिर्फ परमाणु शक्ति है, बल्कि बेसुमार सम्पत्ति भी दाव पर लगी है। चीन जो आयात करता है, उसका 50फीसदी खाडी क्षेत्रों में आता है, इसलिए बीजिंग हिन्द महासागर में अपनी सम्पत्ति की रक्षा करना हर हाल में चाहेगा।यानी अगर भारत कुछ खो सकता है, तो चीन भी खो सकता है।

ये सारे तथ्य इसी ओर इशारा करते है कि चीन के अभियानों को भारत अनदेखा नहीं कर सकता। उसे चीन की काट के लिए तैयार रहना होगा, उस अनुसार अपनी रणनीति बनानी होगी।इस मामले में वह चीन की सक्रीयता और आर्थिक क्षेत्र में ताकत बनने की बीजिंग की उपलब्धि से सीख सकता है।

सैन्य सन्तुलन ऑकडे बताते हैं कि रक्षा मामले में चीन हमसे बहुत आगे है। भारत चीन	भारत चीन
	वायुसैनिक(लाख)1 4
	लडाकू विमान852 2,643
	टैंकर एयरक्राफ्ट 4 10
बजट(अरबडालर) 20 40	नौसैनिक(लाख) 0.55 2.5
कुलसैनिक(लाख) 13 24	पनडुब्बी 16 58
थलसैनिक(लाख) 11 16	फ्रिगेट 17 71
टैंक 2,115 8,580	एमफिबियस क्राफ्ट 16 234
तोप 5,625 17,700	नेवल एयर क्राफ्ट 32 792
आर्म्ड पर्सनल कैरियर 300 1,000	डेस्ट्रायर व अन्य 54 –

श्रोत– सूचना प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार की 2007 की वार्षिक रिपोर्ट।[7]

4. ईराक युद्ध के सन्दर्भ में:–

ईराके के विरूद्ध सैनिक कार्यवाही और देश पर कब्जे के कारण पूरे पश्चिम एशिया का माहौल खराब हैं। ऐसी परिस्थिति में कटट्र पंथी और अराजक तत्वों की ही बन सकती है। अतः इस पूरे भू–भाग में अस्थिरता का वातावरण व्याप्त है। सउदी अरब में कटट्र पंथी वेहाबी पंथियों के विरूद्ध शासन ने कार्यवाही शुरू की है। इस पूरे भू भाग पर शनैः–शनैः ऐसी स्थिति उत्पन्न हो रही है, जो कभी भी विस्फोटक हो सकी है। ऐसा होना न केवल इस क्षेत्र बल्कि सारी दुनियॉ के लिए भी बडी परेशान का कारण बन सकता है। क्यों कि दुनिया का दो तिहाई ऊर्जा का श्रोत या खनिज तेल इसी क्षेत्र में है। विश्व समुदाय के लिए यह विशेष चिन्ता का कारण होना चाहिए, लेकिन मदांध अमेरिकी प्रसाशन को कौन समझाये ? ईराक पर अमरीकी हमले की भारत ने खुली भर्त्सना की क्यों कि ईराक हमारा गुट निरपेक्ष आन्दोलन का साथी रहा है। भारत के प्राचीन काल से मैसोपोटामियॉ(ईराक) घनिष्ठ सम्बन्ध

रहे है। इसीलिए 8 अप्रैल, 2003 को लोकसभा ने ईराक पर अमरीकी हमले के खिलाफ निन्दा प्रस्ताव पारित किया। प्रस्ताव में कहा गया है कि सत्ता को जबरदस्ती बदलने के लिए संयुक्त राष्ट्र की सहमति के बगैर की गई सैनिक कार्यवाही को स्वीकार नहीं किया जा सकता। इसमें ईराक के लोगों के लिए गम्भीर सन्ताप और गहन सहानुभूति व्यक्त करते हुये उनकी सहायता के लिए भारत की ओर से 100 करोड रूपये की सहायता देने का भी फेसला किया गया। जिसमें विश्व खाद्य कार्यक्रम के तहत 50 हजार टन गेहूँ भी शामिल है।

आलोचकों के अनुसार बगदाद पतन के एक दिन पूर्व भारत की संसद द्वारा आंग्ल अमरीकी गठबन्धन के हमले की निन्दा का प्रस्ताव सर्व सम्मति से पारित करने विदेश नीति की दृष्टि से एक हल्का व्यवहार था: यह प्रस्ताव अन्तर्राष्ट्रीय राजनय का कम तथा घरेलू बोट बैंक के राजनीति की नियामक ज्यादा था।

ईराक में शान्ति स्थापना के उददेश्य से अन्य देशों से सेना मगाने का अमेरिकी प्रयास भी अभी अधर में ही लटका दिखता है। तुर्की ने 10 हजार सैनिकों की फौज भेजने की पेशकस अवश्य की है, लेकिन इसका तीब्र विरोध अमेरिका द्वारा गठित शासकीय परिषद द्वारा ही हो रहा है। इस मुदद् पर एक तरह से अमेरिकी प्रसाशक ब्रेनर और परिषद के बीच गम्भीर टकराव की स्थिति उत्पन्न हो गई है।

ईराक में जंग थमने का नाम नहीं ले रही है। संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन और उनके समर्थक देशों की सेनाओं को नित नये प्रतिरोध का सामना करना पड रहा है। भिन्नता के बावजूद ईराक अमेरिका के लिए एक वियतनाम सावित हो रहा है। उसकी सेनाऐं यहाँ इस कदर फस गई हैं कि उसके लिए कोई सम्मान जनकसमाधान नजर नहीं आ रहा है। यहाँ साम्राज्यवाद विरोधी प्रतिरोध युद्ध के दायरे का विस्तार होता जा रहा है। और वह नई बुलन्दियों का स्पर्श करता लग रहा है।

5. अफगान युद्ध के सन्दर्भ में :–

अमरीका के वर्ल्ड ट्रेड टावर पेन्टागन तथा अन्य सत्ता प्रतिष्ठानों पर आतंकवादी हमलों के लिए अफगानिस्तान में सत्तारूढ तालिवानी सरकार एवं अलकायदा को जिम्मेदार ठहराया गया। अमरीका ने अलकायदा के सरगना ओसामाबिन लादेन को गिरफ्तार करने के लिए अफगानिस्तान पर हमला किया क्यों कि सन्देह था कि ओसामा बिन लादेन अफगानिस्तान में छिपा हुआ है।अफगानिस्तान की सत्ता पर काविज तालिवान सक्रिय रूप से वैश्विक आतंकवाद

का समर्थन दे रहे थे। अमेरिका के नेत्रत्व मे की गई सैन्य कार्यवाही में अफगानिस्तान में तालिवान को सत्ता से उखाड फेका। अफगानिस्तान में अशान्ति के इस दौर के बाद हामिद करजई को अफगानिस्तान का पहला राष्ट्रपति नियुक्त किया गया। और वह बाद में भी इस पद पर निर्वाचित हुये।

हाल में ही भारतीय प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने अफगानिस्तान की ऐसे समय में यात्रा की है जब अफगानिस्तान की आन्तरिक सुरक्षा काफी कमजोर है।

अफगानिस्तान की अर्थव्यवस्था पूरी तरह अन्तर्राष्ट्रीय सहायता पर निर्भर है। और 5 अरब अमेरिकी डालर का अफीम का कारोबार इस देश की सामान्य विकास दर में सबसे बडा घटक है। अफगानिस्तान के पास न तो अपनी आन्तरिक व वाहय सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए संसाधन ही है और न ही आर्थिक रूप से आत्म निर्भर बनने के संसाधन ही है।

निश्चित रूप से यह एक निराशाजनक स्थिति है जो यह बताती है कि सिकन्दर महान के दिनों से लेकर आज तक इस पहाडी देश में विश्व के बडे देशों के स्वार्थी खेलों के चलते कितने उतार चढाव देखे हैं। पूर्व में अफगानिस्तान सोवियत संघ और विश्व की दूसरी बडी ताकत अमरीका के स्वार्थी खेल का मोहरा रहा है।

निष्कर्षतः—

भारत ने यह संकेत दिया है कि अफगानिस्तान में पुराने तालिवानी नेताओं का पुनरोउद्भव अस्वीकार होगा। भारत काबुल को परिवहन तथा बिजली जैसे आधारभूत संरचना के साधनों में सहायता प्रदान कर रहा है भारत काबुल को जिस क्षेत्र में वेश कीमती सहयोग उपलब्ध करा सकता है। वह अफगान सुरक्षा बलों को प्रशिक्षण और उपकरणों से लैस करने के रूप में सैन्य सहयोग। मौजूदा संकेत है कि अमरीका और नाटो के नेतृत्व वाले अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा बल में शामिल अन्य राष्ट्र जितनी जल्दी सम्भव हो अफगानिस्तान से अपनी सेनाऐं वापस बुला लेगें। भारत के लिए यह दीर्घ कालिक हित में होगा। कि वह 3 से 5 वर्षो की अवधि तक अफगान सेना और पुलिस बलों को प्रशिक्षत करने में मदद करे।

6. भारत के विकसित बाजार के सन्दर्भ में:—

शीत युद्ध कालीन विश्व व्यवस्था के निर्धारक तत्व सैनिक कारक के किन्तु शीत युद्धोत्तर विश्व व्यवस्था में इनका स्थान आर्थिक कारकों ने ले लिया है। आज दुनिया में अमरीकी एवं रूसी हथियारों के टकराव के बजाय डालर, पाउण्ड और येन आपस में टकरा

रहे हैं। आज शक्ति को सैन्य सन्दर्भ में नही बल्कि आर्थिक सुदृढता के सन्दर्भ में आंका जा रहा है।

ऐसे में जब कि भारत विश्व की चौथी प्रमुख आर्थिक शक्ति बन गया है भारत विश्व का दूसरा सबसे बडा देश तथा मध्यम वर्ग को अवधारिकता करने वाला सबसे बडा देश है। इसीलिए विश्व की तमाम बहुराष्ट्रीय कम्पनियॉ भारत में अपने व्यापारिक हितों को देख रहीं हैं। सबसे अधिक पूँजी निवेश करने वाले देशों में अमरीकी बहुराष्ट्रीय प्रथम है।अमरीका एवं भारत के बीच मुक्त व्यापार समझौते के अनेक दौर चल चुके हैं। भारत एवं अमरीका सैन्य जैव तकनीकि कृषि आदि के क्षेत्र में समझौता कर चुके हैं। जहॉ अमरीका का हित भारतीय बाजारों के दोहन का है। वहीं भारत का हित अमरीका से सैन्य सम्बन्धी बस्तुओं तथा सैन्य तकनीकी हॉसिल करना।

आज भारतीय बाजार अमेरिकन उत्पादों से भरे पडे हैं। अंकल चिप्स कॉलगेट क्लोजप, लक्स, पेप्सी, एवं कोकाकोला ने भारतीय जनजीवन को पूर्णतया विजित कर लिया है। आर्थिक उपनिवेश वाद अपने चरम विन्दु पर हैं। हमें हमारे ही बाजारों में क्लीन बोल्ड कर दिया गया है। यह चिन्ता का विषय है।

वर्तमान में भारत के संसाधनों का भारी मात्रा में उपयोग अमेरिकी लोग कर रहे हैं।मार्केट वारफेयर (बाजार के युद्ध) में अमरीका जीत रहा है। अमेरिका अपने स्टार चैनल व अन्य सूचना माध्यमों के जरिये भारतीय जनता में अपने उत्पादों के लिए उपभोक्ता वर्ग तैयार कर रहा है। ऐसे में भारत को सचेत रहते हुये अमेरिका से द्विपक्षीय समानता पर आधारित, आर्थिक एवं व्यापारिक सम्बन्धों पर बल देने की आवश्यकता है।[8]

7. अमेरिकन पेन्टागन के बाथरूम की चाबी भारत को दी जाये या नहीः—

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद विश्व वातावरण में आये परिवर्तनों ने अमेरिकन रक्षा मंत्रालय पेन्टागन ने इस एक ध्रुवीय विश्व में समग्र विश्व के अधिकांश महाद्वीपों के लिए रणनीति का प्रतिपादन किया है। वर्तमान में अमरीका सबसे ज्यादा एशिया के प्रति आकर्षित है क्यों कि आगामी विश्व का निर्धारण यूरोप नहीं बल्कि एशिया करेगा। पश्चिम एशिया में अमेरिका का हित पेट्रोलियम के विशाल प्राकृतिक भण्डारों पर कब्जा करना है। वहीं दक्षिण एशिया में अवस्थित भारत एवं चीन जो वर्तमान में बडी शक्तियों के रूप में उदित हो रहे हैं के साथ अपने सत्ता समीकरणों को सन्तुलित करना। इसीलिए शीत युद्ध के पराभव के बाद

अमरीका ने भारत द्वारा किये गये आर्थिक उदारीकरण के उपायों का तथा अन्य मामलों में सहयोग का आश्वासन दिया।

जब कि समस्त विश्व आतंकवाद जैसी ज्वलन्त समस्या से प्रभावित है अमरीका का भारत के नजदीक आना उसके हित में है। रूस,चीन तथा भारत की तिकडी को तोडते हुये भारत को अपनी ओर आकर्षित करना एवं उससे आर्थिक ,सामरिक, एवं तकनीकी सम्बन्ध बनाने की ओर अग्रसर होना न केवल भारत बल्कि अमेरिका के भी हित में है।

अमरीका ने भारत के साथ निम्न समझौतों में पहल की है– 1. उच्च तकनीकी आयुधों के संयुक्त विकास में सहयोग 2. उच्च तकनीकी सहयोग ग्रुप की स्थापना 3. मुक्त आकाश समझौते की संम्भावना 4. कृषि जैंव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में शोध और विकास को बढावा। 5. भारत एवं अमरीकी सैन्य अभ्यासों पर बल।

वैश्विक शान्ति रक्षक क्षमता के विस्तार करने के लिए अमरीकी प्रशासन ने भारत से आठ विकसित देशों के प्रयासों में सम्मिलित होने का आग्रह किया।

निष्कर्षतः पेन्टागन ने इस तथ्य को स्वीकार कर लिया है। कि अब अनुकूल समय आ गया है कि आपसी विवादास्पद मामलों जैसे द्वि–अर्थी पदार्थो, तकनीकी सामरिक एवं व्यापार संम्बन्धी सारी रूकावटों का दूर कर लिया जाऐ, इसमें दोनों देशों का हित सुरक्षित है

अब विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या भारत और अमेरिका स्वाभाविक मित्र हैं ? भारत में अमेरिका के राजदूत रावर्ट ब्लैक बिल ने पूर्व में कहा था कि भारत एवं अमेरिका प्राकृतिक सहयोगी हैं दोनों देशों को मिलकर विश्व में राजनीतिक स्थिरता स्थापित करनी चाहिए जिससे सभी देश स्वतंत्रता पूर्वक समृद्धि हॉसिल कर सकें। स्वतंत्रता एवं समृद्धि को वे प्रमुख उददेश्य बताते हैं। वे मानते हैं कि स्वतंत्रता एवं शान्ति से सर्वाहित स्वयं हॉसिल हो जाएगा। हमारा मानना है कि इस मुदद् पर पुनर्रविचार की सम्भावना है। स्वतंत्रता का अर्थ होता है ताकतवर का बोलवाला यदि कालेज के मैस में बच्चे रोटी खाने के लिए स्वतंत्र हों तो ताकतबर बच्चा अधिक रोटी ले लेगा और कमजोर को कम मिलेगी। मनुस्मृति में राजा को हिदायत दी गई है कि वह कमजोर की रक्षा करें अन्यथा ताकतबर उन्हें इस प्रकार उत्पीडित करेंगे जैसे आग पर मछली को भूँना जाता है। जाहिर है कि स्वतंत्रता एवं समृद्धि समाज का अन्तिम मानदण्ड नहीं हो सकते इनके ऊपर भी कुछ और है जनहित अथवा धर्म। ब्लैकबिल कहते हैं,''अमेरिका की योजना है कि वह अपनी सैन्य ताकत एवं प्रभाव का उपयोग करके एशिया में ऐसी राजनीतिक

व्यवस्था बनाये जिसमें अमरीका एवं उसके सहयोगी स्वतंत्रता पूर्वक समृद्धि हॉसिंल कर सकें यानि सैन्य ताकत से बलशाली समृद्धि हॉसिल करेंगे। इस प्रकार पेन्टागन का प्रमुख उददेश्य एशिया में अपने राष्ट्रीय हितों को पूरा करने के लिए किसी न किसी मित्र राष्ट्र की आवश्यकता है। भारत जो कि विश्व की भावी महाशक्ति है उससे जुडना पूर्णतया अमेरिकन राष्ट्रीय हित का पूरक है।

8. सामरिक मित्रता की संभावनाऐं:—

भारत को प्रचुर मात्रा में रक्षा सामग्रियों की खोज में जिसमें मुख्य हैं विशेष सैन्य दस्तों के लिए हल्के शस्त्र, जलयान, ग्राउण्ड सेन्सर्स, और कैमिकल सूट्स भारत को आधुनिक राडारो की आवश्यकता हैं। इजराइल द्वारा भारत को ऐरो–2 एन्टीमिसाइल प्रणाली की बिक्री के मामले में अमेरिका अनुउत्सुक रहा हैं यह ऐन्टीमिसाइल प्रणाली अमेरिका और इजराइल दोनों के सहायोग से विकसित की गई है परमाणु सक्षमता के बावजूद भारत ने अमरीका को इस बात से आश्वत करने का प्रयास किया है कि वह उसके यहॉ से आयातित उच्च तकनीकी को किसी दूसरे मद में नही लगायेगा। इस उददेश्य से दोनो देशों के बीच एक उच्च तकनीकी सहयोग समूह का गठन किया गया। अमेरिका भारत को विशेष किट्स की आपूर्ति करने का इच्छुक है और सुरक्षा सम्बन्धी मंत्रिपरिषद् कमेटी (सी. सी. एम.) ने ऐसे यन्त्रो के अधिग्रहण को हरी झन्डी दे दी है जो खुले वैयिश्वक टेंडर्स द्वारा होगा।

दो वर्षो के सतर्क विचार–विमर्श के बाद पहलां गहन स्वरुप भारत अमेरिकी युद्वाभ्यास भारत के उत्तर पूर्व के जंगलो में सम्पन्न हुआ जिसमें दोनो सेनाओ ने आतंकवाद का सामना करने सम्बन्धी उच्चाभ्यास किया। अमरीका ने मिसाइल सुरक्षा कवच सहित उच्च तकनीकी आयुध प्रणाली के संयुक्त विकास के लिये भारत के सामने पुनः प्रस्ताव रखा है। भारत–अमेरिकी संयुक्त सुरक्षा नीति ग्रुप (डी. पी. जी.) की बैठक में अमेरिकी राज्य के अवर सचिव डॅगलस जे. फीथ द्वारा यह प्रस्ताव भारत के सामने प्रस्तुत किया गया। पदाधिकारी सूत्रों के अनुसार दोनों देशों ने सुरक्षा व्यापार और उच्च तकनीकी आयुध प्रणाली में सार्थक प्रगति की है। पेन्टागन ने विमानों की प्रक्षेपाग्न्य चेतावनी और जवाबी प्रणाली को अनुमति दे दी है। [9]

अमरीका भारत की नागरिक, नाभिकीय और अंतरिक्ष सुविधाओं के उपकरणों से निर्यात नियंत्रण समाप्त करेगा। यह अमेरिका द्वारा विस्तार की चिन्ताओं पर भारत द्वारा ध्यान दिये जाने की प्रतिबद्धता के बाद सम्भव हुआ है।

इसी परिप्रेक्ष में भारत अमरीका के बीच आणविक समझौता सम्पादित होने जा रहा है। जिसके अर्न्तगत अमेरिका भारत को शान्तिप्रद कार्यो के लिए आणविक सामग्री प्रदान करेगा। लेकिन बिडम्बना यह है कि आणविक तकनीक के प्रश्न पर अमेरिका, पाकिस्तान और भारत को एक ही नजरिये से देख रहा है अमेरिका को इस बात का एहसास नहीं है कि भारत और चीन के बीच सम्बन्ध कैसे हैं ? अमेरिका लगातार भारत की सुरक्षा चिन्ताओं को अनदेखा करता रहा है लेकिन वर्तमान में स्थिति में बदलाव आ रहा है जो उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है। भारत को इस बात का सन्तोष है कि विश्व समुदाय ने अन्ततः पाकिस्तान की ओर से आणविक प्रसार के खतरों की ओर ध्यान देना आरम्भ कर दिया है।

भारत को यह आशंका अवश्य रही है कि निशस्त्रीकरण की उसकी कोशिशों में शायद सबसे पहले उसे ही निशाना न बना दिया जाए। ऐसे में वह अपनी आणविक शक्ति को एक कवच के रूप में बनाये रखना चाहता है। अपने सुरक्षा हितों के साथ कोई भी समझौता किये बिना आणविक निशस्त्रीकरण के लिए नये रास्ते और उपाय ढूँढकर भारत शान्ति के लिए अपनी प्रतिबद्धता की पुरानी पहिचान को फिर से स्थापित करना चाहता है।[10]

9. क्षेत्रीय शक्ति , लोकतन्त्र, स्वतन्त्रता, मुक्त व्यापारः–

भारत विश्व की उभरती हुई विश्व शक्ति है। भारत ने आर्थिक, कूटनीतिक, राजनैतिक, औद्योगिक, तथा तकनीकी क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति की है पिछले कुछ वर्षो में भारतीय शिखर नेतृत्व द्वारा अथवा इनके समकक्ष विश्व के लगभग सभी महत्वपूर्ण राष्ट्रों के नेताओं द्वारा भारत की यात्राओं से कूटनीतिक एवं राजनीतिक स्तर पर नई दिल्ली के कद में आशातीत बढोत्तरी हुई है। भारत के आसियान के साथ सहयोग में जबरदस्त बढोत्तरी हुई है। सरकार के घोर आलोचक भी वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में इससे बेहतर परिणाम प्राप्त कर पाने की कल्पना नहीं कर सकते।

भारतीय विदेश नीति के क्षेत्र में पिछले कुछ वर्षो में वैचारिक और कार्यान्वयन के स्तर पर महत्वपूर्ण परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। पहले तीसरी दुनिया के देशों के प्रति सहयोग को हद की सीमा तक प्राथमिकता दी जाती थी। अमेरिका के प्रति शंका का भाव रहता था। गत

तथा वर्तमान सरकार ने विदेश नीति के आयामों को विकासित करते हुये विश्व के शक्तिशाली राष्ट्रों के साथ बराबरी के आधार पर सम्बन्धों को विकसित करने पर विशेष ध्यान दिया। इन सभी कदमों को उठाते समय देश की प्रतिरक्षा जरूरतों को सबसे अधिक महत्व दिया गया है। भारत को परमाणु शस्त्र क्षमता सम्पन्न राष्ट्र घोषित करने के बाद शत्रु एवं धूर्त राष्ट्रों के मिसाइल हमलो से बचने तथा पूर्व सूचना प्राप्त करने के उददेश्य से नई दिल्ली ने अमेरिका के विवास्पद **'नेशनल मिसाइल डिफेन्स कार्यक्रम'** को अपना समर्थन दिया। [11]

इस तरह पिछले कुछ दसकों से चले आ रहे विदेश नीति के सैद्धान्तिक पहलुओं से आगे जाकर व्यवहारिक पूर्ण को विकसित करने का प्रयास किया गया।

भारतीय लोकतंत्र स्वतंत्रता के छः दशकों से निरन्तर लोकतान्त्रिक परम्पराओं तथा व्यवस्था का अनुपालन करना है सरकार के शीर्ष पर विराजमान व्यक्तियों के चेहरे बदले है। लेकिन भारत राष्ट्रीय हितों के अनुसार निरन्तर चलायमान है भारत के सभी प्रधानमंत्रियों ने देश को आगे बढाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

विश्व व्यवस्था में आये क्रान्तिकारी परिवर्तनों के फलस्वरूप भारतीय विदेश नीति में भी व्यवहारिक बदलाव आ रहा है भारतीय विदेश नीति में परिवर्तन के पीछे महत्व पूर्ण कारक हैं– 1.सोवियत संघ का एक राष्ट्र के रूप में अवसान और उससे उत्पन्न परिस्थितियॉ, 2. पंजाब एवं कश्मीर में पाकिस्तान द्वारा प्रायोजित आतंकवाद से निपटने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता, 3. कश्मीर मुदद् को संयुक्त राष्ट्र संघ की सूची से कश्मीर मुदद् को बाहर रखने के लिए आवश्यक सहयोग 4. संयुक्त राष्ट्र परिषद में स्थाई सदस्यता प्राप्त करने का प्रयास।[12]

गत 8 वर्षो में भारतीय शीर्ष नेतृत्व द्वारा जो उपक्रम हुये हैं वे इस बात के लिए हमें आश्वस्त करते हैं कि चाहे अमेरिका हो, चाहे रूस या दुनिया का अन्य कोई छोटा बडा देश भारत समस्तरीय आधार पर राजनय करने में सक्षम देश है।

अन्ततः यह स्वयं सिद्ध है कि भारत विश्व में एक विस्तृत भू भाग और प्रचुर प्राकृतिक संसाधन, कुशल, मानव संसाधन, और विशाल जनसंख्या वाला देश है। भारत सूचना प्रौद्योगिकी तथा संचार तथा आधुनिक विकास के सभी प्रतिमानों के क्षेत्र में प्रगति कर रहा है। विश्व मामलों में भारत की सुदीर्घ परम्परा रही है इसका सांस्कृतिक अतीत अत्यन्त गौरव मय

रहा है। इसका भविष्य अत्यन्त उज्जवल है और 2020 तक भारत विश्व की प्रमुख शक्ति होगा। इसका क्षेत्रीय शक्ति से उभरती हुई विश्व शक्ति के रूप में प्रयास जारी हैं।

10. विश्व शान्ति व व्यवस्थाः–

राष्ट्रपति कैनेडी ने सन् 1961 में ठीक ही कहा था कि ''इन हथियारों को नष्ट करना ही होगा वरना वे हमें नष्ट कर देंगे एवं यह धरती किसी के जीवित रहने योग्य ही नहीं रह सकेगी।'' यदि परमाणु युद्ध हुआ तो ये बम इस पृथ्वी से मानवता का समूल नाश कर देंगे। यदि युद्ध केवल उत्तरी गोलार्ध में होता है तब भी इसके परिणाम सम्पूर्ण विश्व को भुगतने होंगे। परमाणु युद्ध के बाद धरती का तापमान $30^{0}C$ से $40^{0}C$ तक परिवर्तित हो जायेगा। पृथ्वी के सभी जीव जन्तु काल के गाल मे समाने के लिए बाद्य हो जाएगें।

मानव जाति के सम्मुख पहले भी ये संकट आये थे परन्तु आज समस्या शान्ति स्थापित करने की नहीं है वरन् मानव मात्र के अस्तित्व की है। टॉयनवी के शब्दों में, '' स्थिति की विकटता अकल्पनीय है। परमाणु अस्त्रों के कारण युद्ध का अर्थ ही महाविनाश हो गया है।'' चर्चिल ने उचित ही कहा था ,''क्या विडम्बना है कि मानव मात्र चरम विकास की उस स्थिति में पहुँच गया है जहॉ हमारी सुरक्षा आणविक शक्ति की भयंकरता के कारण ही सुरक्षित रहेगी और मानव जाति का अस्तित्व महाविनाश की सम्भावना के भय पर ही टिका रहेगा।'' इससे पहले कई संकटों को मानव जाति ने पार किया है पर इतिहास इसका साक्षी है कि मानव जाति को जीवित और स्वतंत्र रहने के लिए अधिकाधिक मूल्य चुकाना पडा है। आज केवल शोषण और रक्तपात से मुक्त, दुख दारिद्र से मुक्त आत्मा और विश्वास की मुक्ति ही नहीं प्राप्त करनी है वरन् अस्तित्व और विनाश के निरन्तर भय से मुक्ति प्राप्त करनी है। लिपिमैन ने इसी को इस प्रकार व्यक्त किया है कि विश्व शान्ति की असफलता मानव जाति के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह सावित होगी।

जे0 डब्ल्यू0 बर्टन अपनी पुस्तक इन्टर नेशनल रिलेसन्स पृष्ट 97–98 में लिखते है न हम युद्ध को समाप्त कर सकते हैं, न आज युद्धों को संचालित करने की पूरी क्षमता हममें है और विजयी होकर पुर्ननिर्माण का तो प्रश्न ही नही है।

ऐसे निराशमय माहौल में जब विश्व शान्ति को लेकर राजनीतिज्ञ विचारक, अन्तर्राष्ट्रीय विचारों के विवेचक सभी इस संकट के आभाष से भयभीत हैं तथा नियति मानो सारी मानव जाति को उस ओर ले जा रही है जहॉ वह जाना नहीं चाहती। अणु शक्ति पर नियंत्रण पाने

के लिए भारत और अमरीका सार्थक कूटनीतिक प्रयास कर सकते हैं। जैसे हाल में भारत ने आणविक शक्ति के शान्तिप्रद उपयोग को लेकर अपनी प्रतिबद्धता भारत अमरीका भावी आणविक समझौते में दिखलाई है।

भारत की विदेश नीति सदैव ही विश्व शान्ति की समर्थक रही है। भारत ने प्रारम्भ से ही यह महसूस किया है कि युद्ध और संघर्ष नवोदित भारत के आर्थिक और राजनीतिक विकास को अवरूद्ध करने वाला है। अगस्त 1954 में पणिक्कर ने कहा था, '' भारत को इस बात की बडी चिन्ता है कि उसकी प्रगति को तथा सामान्य रूप से मानव जाति की उन्नति को संकट में डालने वाला कोई युद्ध न हो।

भारत में अन्य पडोसी देशों के साथ भी विवादों का निपटारा शान्तिमय साधनों से किया है

भारत ने नबम्वर 1996 में चीन के राष्ट्रपति जियांग जैमिन की भारत यात्रा के दौरान सीमा पर तनाव कम करने की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम उठाते हुए एक दूसरे पर हमला नहीं करने या वास्तविक नियंत्रण रेखा का अतिक्रमण नहीं करने तथा सीमा पर फौजों तथा हथियारों की संख्या कम करने का संकल्प लिया।

भारत ने शुरू से ही विश्व शान्ति के लिए निशस्त्रीकरण को परम आवश्यक माना है। भारत ने 25 जनवरी 1996 को निशस्त्रीकरण सम्मेलन में सी0टी0बी0टी0 के बारे में एक वक्तवय दिया था। जिसमें कहा गया है कि 1. व्यापक परीक्षण प्रतिबन्ध सन्धि सी0टी0बी0टी0 को सार्थक बनाने के लिए यह जरूरी है कि इसे विश्व व्यापी निरस्त्रीकरण के सन्दर्भ के साथ जोडा जाए और एक समय बद्ध रूप रेखा के अन्तर्गत सभी नाभिकीय हथियारों की समाप्ति के लिए सन्धिबद्ध किया जाए।

2. व्यापक परीक्षण प्रतिबन्ध सन्धि में ऐसी किसी बात की गुंजाइस नहीं रह जानी चाहिए, जिसकी आड में नाभिकीय हथियारों के निरंन्तर विकास एवं परिष्करण के उददे्श्य से विस्फोटक अथवा गैर विस्फोटक गतिविधियॉ की जा सकें।

यद्वपि भारत में सुरक्षा कारणों की बजह से आणविक परीक्षण कर चीन के एकाधिकार को तोड दिया है। भारत दो–दो अविश्वसनीय पडोसी राष्ट्रों से घिरा है जिन्होंने भारत के शान्तिमय प्रयासों का मजाक उडाया है। इसीलिए भारत शान्ति की कूटनीति और सद्भाव के

साथ–साथ अपने को समूहिक क्षेत्र में पूर्णतया मजबूत स्थिति में रखना चाहता है। भारत का अमरीका की ओर झुकना बहुत कुछ सामरिक कारणों से भी है।

1. हॉलाकि अमरीकी जनता ने सदैव विश्व शान्ति को ही वरीयता दी है, किन्तु समय–समय पर अमरीकी राष्ट्रपति विश्व शान्ति पर अपना दबदवा स्थापित करने के चक्कर में सैनिक हस्तक्षेप करते रहते हैं। विश्व सामरिक शक्ति के विश्लेषक स्वीकार करते हैं कि अमेरिका अपने वर्तमान अस्त्रों के जखीरे से पूरे विश्व को तीन बार ध्वस्त कर सकता है। विश्व में प्रथमता जापान पर अणु बम का इस्तेमाल उसने स्वयं किया और आज भी विश्व के सर्वाधिक संहारक अणु बम उसी के पास हैं। वैलिस्टिक मिसाइल प्रतिबन्ध जिसका करार उसने रूस के साथ किया उसका स्वयं पालन नहीं किया। उल्टे पोखरन विस्फोट के बाद भारत पर प्रतिबन्ध लगा दिया। उसकी इच्छा है कि विध्वंसक तैयार करना उसका ऐकाधिकार है और शेष सभी राष्ट्र अपनी सुरक्षा उसी से हथियार खरीद कर करें। अमरीका ने सददाम पर हमला करते समय संयुक्त राष्ट्रसंघ तथा सुरक्षा परिषद और जर्मनी और फ्रान्स जैसे अपने परम्परागत मित्रों की भी अनदेखी की।

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद विश्व में शान्ति और न्याय पर आधारित व्यवस्था हो इस मंशा से राष्ट्र संघ स्थापित हुआ था। ऐसे में यदि अमेरिका जैसी महाशक्तियॉ ही इस विश्व संस्था का सम्मान नहीं करेगीं। तो विश्व शान्ति की कल्पना मृगमारिचिका सावित होगी।[13]

References:-

1- हिन्दुस्तान 20 अगस्त 1996 पृ0 19

2- इण्डिया एक्सप्रेस 18 अगस्त 1999 पृ0 16

3- Foreign Affairs (U.S.A) April 2004, Page-112

4- India and America, K.R. Narayan, NewDelhi, Page- 107-8 Pub.2005

5- Nuclear India, 27 Nov. 2001 Page-71

6- India, U.S.A and Imerging World Order Pub. By Dept-of Pol-Sc., M.S.University, Baroda.Page-205

7- डेनिस कुक्स, इण्डिया एन्ड दी यूनाईटेड स्टेट्स : स्ट्रेन्ज्ड डेमोक्रेसीज 1947–2003(वाशिंगटन डी. सी.) पेज–179 and सूचना प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार की वार्षिक रिपोर्ट।2007

8- A Common faith of U.S.A India Pub. By U.S.A Imformation Service Page- 79-80

9- The British Journal of I. R. U.K. , 2006 Page- 107-08

10-राष्ट्रदूत, भारत–अमेरिका सम्बन्ध, 20 जून 1993 जयपुर पेज– 18

11. अमेरिका, भारत, पाक के बीच मध्यस्थ, हिन्दू 10 नबम्बर 2001 पेज0–10

12. तिवारी श्यामाचरण, बढ रहा है, भारत–अमेरिका सहयोग, समाचार जगत,19 जनवरी 2006

13. India, U.S.A and the Emerging World Order, Page- 157 Pub. 10 Oct. 2003.

उपसंहार

उपसंहार

भारत और अमरीका सम्बन्ध एक शताब्दी से भी अधिक पुराना है। स्वतंत्रता से पूर्व भारत–अमरीकी सम्बन्धों की प्रकृति चरित्र और शैली ब्रिटिश साम्राज्य और अमेरिका के हितों के द्वारा निर्धारित थी। स्वतंत्र भारत में अमेरिका के साथ सम्बन्धों को एक नये अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में आरम्भ किया।

शीतयुद्ध काल में भारत का नेतृत्व तीन दीर्घ कार्यकाल वाले प्रधानमंत्रियों ने किया वे थे जवाहर लाल नेहरू, श्री मती इन्दिरा गान्धी और लाल बहादुर शास्त्री दूसरी ओर इसी समयावधि में अमेरिका में नौ राष्ट्रपति रहे।

द्विपक्षीय संम्बन्धों को दिशा और स्वरूप प्रदान करने में वैयक्तिक कारकों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई आइजन हावर के कार्यकाल के अन्तिम दो वर्षो में नेहरू जी ने आइजन हावर के साथ जो व्यक्तिगत समीकरण स्थापित किया उससे अमेरिका की दृष्टि में भारत का सामरिक महत्व बढा। कैनेडी जो आइजन हावर के बाद अमेरिका के राष्ट्रपति बने उसकी भी नेहरू जी के साथ व्यक्तिगत समीकरण मित्रता के बने। राष्ट्रपति रीगन के साथ श्री मती गान्धी सन्तोष जनक समीकरण स्थापित करने में सफल रहीं। राजीव गान्धी भी रींगन एवं बुश के साथ सन्तोष जनक समीकरण स्थापित कर पाये। जब जब भारत के प्रधान मंत्री और अमेरिका के राष्ट्रपति के मध्य में मैत्री पूर्ण अथवा सन्तोष जनक व्यक्तिगत समीकरण रहे। तब तब दोनों देशों के मध्य में सम्बन्ध सुधार और सहयोग का मार्ग प्रशस्त हुआ। यह तथ्य शीत युद्ध काल में और शीतयुद्धोत्तर काल में उभर कर आया है।

शीतयुद्ध काल में अमेरिका की विदेश नीति विचार धारा से अत्यधिक प्रभावित रही। अपनी पूँजीवादी विचारधारा के कारण अमेरिका सोवियत संघ को उसकी साम्यवादी विचार धारा के कारण अपना विरोधी प्रतिद्धन्द्धी अथवा शत्रु के विभिन्न रूपों में देखता रहा। तथा उसके सहयोगी, मित्र अथवा प्रशंसक राष्ट्रों को अपने विरोधी के रूप में देखता रहा। अमेरिकी नेतृत्व पर शीत युद्ध मानसिकता(कोल्ड वार माइन्ड सेट)हावी रहा। भारत ने गुंट निरपेक्षता को अपनी विदेश नीति का आधार बनाया है।तथा जनतान्त्रिक समाजवाद के सिद्धान्तों के आधार पर मिश्रित अर्थव्यवस्था की नींव रखी। शीतयुद्ध के उन्माद में आकर अमेरिकी नेतृत्व भारत की गुट निर्पेक्षता की नीति को लगभग एक दशक तक उपेक्षा की दृष्टि से देखता रहा और उसे अनैतिक तक कहने से न हिचका। अमेरिका की तरह से सोवियत संघ भी 3–4 वर्ष तक भारत की गुट निर्पेक्षता की नीति को सन्देह की दृष्टि से देखता रहा।

राष्ट्रपति कैनेडी ने भारत की गुट निर्पेक्षता की नीति को अमेरिका के हितों के विरूद्ध न मानकर स्वराष्ट्र हितों का समर्थक माना। एशिया में चीन के बढते प्रभाव को देखकर अमेरिका में भारत को चीन का प्रतिभार बनाये जाने की सोच आइजन हावर प्रशासन के अन्तिम दो वर्षो मे उभरने लगी थी। इस सोच के अनुसार तीसरी दुनिया के समक्ष चीन की तुलना में भारत के आर्थिक सामाजिक और राजनैतिक विकास को एक बेहतर आदर्श के रूप

में प्रस्तुत करने की आवश्यकता थी। इस उददेश्य की प्राप्ति के लिए अमेरिका भारत को अधिकाधिक आर्थिक और प्रावधिक सहायता देने लेगा।

उत्तर– कैनेडी काल में भारत अमेरिका सम्बन्धों मे धीरे–2 उष्णता और होती गयी। निक्सन काल में दोनों देशों के मध्य सम्बन्धों मे विवाद और तनाव बढा मैत्री का परीक्षण संकट के समय होता है कैनेडी काल में चीन के आक्रमण के समय अमेरिका ने भारत को सैनिक सहायता दी लेकिन 1965 में भारत पाक युद्ध के समय अमेरिका ने भारत की सैनिक सहायता रोक दी।

नेतृत्वों के व्यक्तिगत समीकरण बिगडने पर द्विपक्षीय सम्बन्धों पर नकारात्मक प्रभाव कैसे पडता है और किस प्रकार दुश्चक्र (विसियस सर्किल) के निर्णय की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है यह बात जौन्सन ,निक्सन और फोर्ड के कार्यकालों में भारत अमेरिका सम्बन्धों में देखने को मिलती हैं।

परमाणु अप्रसार सन्धि पर भारत द्वारा हस्ताक्षर किये जाने के लिए अमेरिका कई वर्षो से मॉग कर रहा था दक्षिण एशिया को परमाणु आयुद्ध विहीन क्षेत्र बनाये जाने के प्रस्ताव को भारत द्वारा स्वीकार किये जाने पर भी अमेरिका कई वर्षो से बल दे रहा था। भारत अपने राष्ट्रीय हित में इन प्रस्तावों का स्वीकार नही कर रहा था। वह नाभिकीय अस्त्रों के निशस्त्रीकरण की मॉग कई वर्षो से उठा रहा था जिसके लिए अमेरिका राजी नहीं था।

भारत अमेरिका का सम्बन्धों के अध्ययन से एक अनूठा तथ्य उभर कर आता है दोनों देशों के मध्य मे कई प्रकार की समानताऐं है। जैसे उनकी राजनीतिक मूल्यों और व्यवस्थाओं में उनके द्वारा घोषित विश्व शान्ति स्थिरता, सम्पन्नता के लक्ष्यों में और बहुल समाजों में किन्तु उनके सम्बन्धों मे धर्मणशीलता (फ्रिकशन) और तनाव उन्मुक्ता देखने को मिलती है। दोनों देशों के मध्य मे कई प्रकार की विपरीतताऐं हैं जैसे उनके इतिहासों में परम्पराओं,धर्मो और लोगों में उनके राष्ट्रीय राजनीतिक एवं आर्थिक विकास के चरणों में उनकी विदेश नीतियों में और वैश्विक स्तर पर उनके शक्ति सम्मत स्तर की स्थितियों में, किन्तु फिर भी उनके मध्य में सहयोग देखने को मिलता है।

एक अन्य महत्व पूर्ण तथ्य जो इन सम्बन्धों से परिलक्षित होता है वह यह है कि भारत–अमेरिका सम्बन्धो की प्रकृति असमान सम्बन्धो की है। सम्बन्धों के इस समीकरण में अमेरिका एक वैश्विक अथवा महाशक्ति है और भारत एक क्षेत्रीय शक्ति अथवा मध्यम श्रेणी की शक्ति है। दोनों राष्ट्रों को अपनी स्थिति का आभास है और वे अपनी अपनी शक्ति से भली भॉति परिचित है। और उन्हें अपनी सीमाओं का भी ध्यान हैं।

सम्बन्धों की असमानता का एक पहलू यह भी है कि आर्थिक दृष्टि से अमेरिका को जितनी आवश्यकता भारत की है उससे अधिक भारत को अमेरिका की आवश्यकता है। अमेरिका भारत का सबसे बडा व्यापारिक सहयोगी है तथा वह भारत के लिए प्रौद्योगिकी और पूँजी निवेश का सबसे अधिक महत्वपूर्ण श्रोत हैं। दूसरी ओर यद्यपि भारत एक विकास शील

राष्ट्र है उसका बढता हुआ मध्यम वर्ग अमेरिकी वस्तुओं के निर्यात के लिए एक बडा बाजार हैं।

राजनीतिक और सामरिक दृष्टि से भी उपरोक्त निष्कर्ष खरा उतरता है। इस तथ्य को रेखांकित करने की आवश्यकता नही कि अब अमेरिका एक मात्र वैश्विक महाशक्ति है और इसलिए उसके साथ मैत्री पूर्ण सम्बन्ध बनाये रखने में भारत की दिलचस्पी है। दूसरी ओर यह बात भी निर्विवाद रूप से कही जा सकती है कि अमेरिका भारत की उपेक्षा नही कर सकता क्यों कि उसकी जनसंख्या विश्व में चीन के सबसे अधिक है। उसके प्राकृतिक संसाधन विशाल है तीसरी दुनिया के राष्ट्रों मे उसका महत्वपूर्ण स्थान है।

भविष्य में भारत–अमेरिका सम्बन्धों की प्रकृति क्या हो सकती है ? प्रस्तुत अध्ययन के अनुसार तीन परिदृश्यों की कल्पना की जा सकती है। वे परिदृश्य हैं 1. तनाव पूर्ण अथवा शत्रुवत सम्बन्ध, 2. तनाव मुक्त अथवा मित्रवत् सम्बन्ध 3. तनाव – सहयोग मिश्रत संम्बन्ध।

जब हम भारत अमेरिका सम्बन्धों के विगत पर दृष्टि डालते है तो हम देखते है कि निक्सन काल में सम्बन्धो की प्रकृति मोटे तौर पर प्रथम परिदृश्य की थी। कैनेडी काल में सम्बन्धो का मोटे तौर पर दूसरा परिदृश्य उभरा। रीगन और बुश काल में सम्बन्धों का जो परिदृश्य बना वह मोटे तौर पर तीसरा परिदृश्य था। विलक्लिंटन तथा जार्ज डब्ल्यू बुश के कार्यकाल मे मोटे तौर पर दूसरा परिदृश्य पुनः उभरा है।

सन्दर्भः—

1. पी0 जे0 एल्ड्रिज, दा पौलिटिक्स औफ फॉरेनहैड इन इण्डिया दिल्ली पेज 201
2. एम0 एस0 राजन, इण्डिया इन्वौल्ड ऑफेयर्स बोम्बे दा टाइम्स आफ इण्डिया, 1998 पेज 6
3. जे0 एन0 दीक्षित, भारतीय विदेश नीति प्रभात प्रकाशन दिल्ली, 1999, पेज 18
4. महेन्द्र वेद, अमर उजाला, 26 अप्रैल 2003
5. सिविल सर्विसेज टाइम्स, 2004 ,पेज 21
6. सिविल सर्विसेज टाइम्स, 2004 ,पेज 26
7. अमर उजाला, 17 जनवरी 2004,
8. टी0 वी0 कुन्हीई कृष्णन, दा अनफ्रेन्डली फ्रेन्ड इण्डिया एण्ड अमेरिका देलही पेज 203
9. जे0 विलियम इण्डिया पाकिस्तान एण्ड दा ग्रेट पावर्स, लन्दन , पेज 103
10. यू0 आर0 घई, भारत अमरीका सम्बन्ध, जालन्धर, पेज 108
11. हिन्दुस्तान, 11 मई 1999 नई दिल्ली
12. जे0 वाल्टर दा ऐज आफ टैरोरेज आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस लन्दन पेज 203
13. वी0 एन0 चक्रवर्ती, ग्रेट पावर्स इण्डिया एण्ड अमेरिका 2003 लन्दन

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

(अ) मूल स्रोत

लोकसभा डिबेट्स 2006–07

राज्यसभा डिबेट्स 2006–07

यू0एस0 कॉन्ग्रेशनल रिकार्ड 2006–07

एनुअल रिपोर्टस ऑफ दी इण्डियन मिनिस्ट्री ऑफ एक्सटर्नल अफेयर्स 1988–93 एनुअल रिपोर्टस् ऑफ दी इण्डियन मिनिस्ट्री ऑफ डिफेन्स 1988–93

एण्डो यू0 एस0 जोइन्ट स्टेटमेन्ट्स एण्ड कम्यूनिकेशन्स

एनुअल रिपोर्टस एण्ड वर्ल्ड बैंक, आई0एम0एफ0 आई0एल0ओ0, यूनेस्को अपादोराई

ए, सलेक्ट डोकूमेन्टस ऑन इण्डिया फारेन पॉलिसी एण्ड रिलेशन 1947–1972, वो 1 दिल्ली 1982

ए, डिकेड ऑफ अमेरिकन फारेन पॉलिसी, बेसिक डॉकूमैनटस 1947–49 वांशिगठन डी0सी0 1950

ए. कामन फेथ : 40 ईयर्स ऑफ इण्डो यू0 एस0 रिलेशन को–ऑपरेटिव रिलेशन्स नई दिल्ली 1988

कार्ल, पीटर वी0, डॉकूमेन्ट्। ऑन अमेरिकन फारेन रिलेंशन्स न्यूयार्क 1995 जैन आर0 के0 (सं0) यू0एस0 साउथ एशियन रिलेशन 1947–1982 वोल.2 (नई दिल्ली 1983)

इण्डिया — मिनिस्ट्री ऑफ एक्सटर्नल अफेयर्स एनुअल रिपार्ट 1961–1963

— फारेन अफेयर्स रैकार्ड 1961–1963

— प्राइम मिनिस्टर ऑन सिना–इण्डियन रिलेशन्स प्रेस कान्फ्रेसेज जून 30,1961 से अक्टूबर 15,1962

इण्डिया — मिनिस्ट्री ऑफ इनफारमेशन एण्ड ब्राडकास्टिंग सलैक्टैड स्पीचेज आफ प्राइम मिनिस्टर जवाहर लाल नेहरू फ्राम सितम्बर 1946 अप्रैल 1961

— इण्डो–चाइना बार्डर प्रोब्लम 1962

— कश्मीर एण्ड द यूनाइटेड नेशंस न्यू दिल्ली 1962

— स्पीचेज ऑफ प्राइम मिनिस्टर जवाहर लाल नेहरू, फोर वाल्यूम

इण्डिया मिनिस्ट्री ऑफ फाइनेंस, डिपार्टमेंट ऑफ इकोनोमिक अफेयर्स – रिपोर्ट ऑफ कमेटी आन यूटिनाइजेशन आफ एक्सटर्नल असिस्टेंस, 1964

इण्डिया पार्लियामेंटरी सैक्रेटेरिएट, लोकसभा डिवेट्स 1961–63

— राज्यसभा डिवेट्स 1961–63

इण्डिया प्लानिंग कमीशन फाइव ईयर प्लान्स

यूनाइटेड स्टेट्स ऐजेन्सी फार इंटरनेशनल डबलपमैट, यू.एस. फारेन एसिस्टेंस, वाशिंगटन, 21 मार्च 1962

यूनाइटेड स्टेट्स कमीशन आन फारेन इकोनोमिक पालिसी–रिपार्ट टू द प्रेजीडैट एण्ड द कांग्रेस वाशिटन, 23 जनवरी 1954

यूनाइटेड स्टेट्स फारेन रिलेशंस आफ दी यूनाइटेड स्टेट्स वाल्यूम 4 और 5 1976, 1977

यूनाइटेड स्टेट्स द रोल आफ फारेन एड उन इकानामिक डबलपमैंट, 1957

यूनाइटेड स्टेट्स एम्बैसी इन इण्डिया इण्डियास डबलपमैंट एण्ड इकोनोमिक एड न्यू दिल्ली 1950

(सहायक स्रोत)

(1) पुस्तकें :–

अप्पोदोराइ, ए., इंडिया इन वर्ल्ड अफेयर्स 1957–58, न्यू दिल्ली 1975

ऐप्टर, डेविड, (सं.) ईडियोलीजी एण्ड डिसकटैंट, न्यूयार्क 1964

अरोड़ा, आर.एस. ऐम्बेसेडर्स एक्सचेन्जड आफ्टर थर्टी यीअर्स, न्यू दिल्ली, 1980

अरोड़ा, एस. के. अमेरिकन फारेन पालिसी टुवर्डस, इण्डिया न्यू दिल्ली 1954

अरोड़ा बी.के. इण्डिया इन वर्ल्ड अफेयर्स, 1957–58 न्यू दिल्ली 1975

बत्रा जी.एस. (सं) गैट इमप्लीकेशन्स ऑफ डंकेल प्रॉपोजल, अनमोल पब्लिकेशन एलटीडी 1994 नई दिल्ली –1100002

बैवज, रॉस एण्ड इण्डियास स्ट्रैटेजिक फ्यूचरः रीजनल स्टेट और

बैरियार, रिजाल्ड. एन. इण्डिया एण्ड अमेरिका– अमेरिकन बब्लिशिंग ऑन इण्डिया 1930–1985 न्यू दिल्ली अमेरिकन इन्सटीट्यूट आफ इण्डियन स्टडीज, 1986

ब्राउन, नॉरमन डब्लू दि यूनाइटेड स्टेट्स एण्ड इण्डिया एण्ड पाकिस्तान हार्वड यूनि प्रेस 1963

भोला पी.एल. पाकिस्तान–चाइना रिलेशन्सः सर्च फार पोलिटिको–स्टैटेजिक रिनेशशिप (जयपुर 1986)

– पाकिस्तान न्यूक्लीयर पॉलिसी (नई दिल्ली 1993)

– बेनजीर भुट्टोः आपॉरचुनिटीज एण्ड चेलेन्जेज (नई दिल्ली) 1989

ब्राउन, सेयोम न्यु फोर्सेज इन वर्ल्ड पालिटिक्स वांशिगटन, 1974

ब्रण्ड्स एच. डब्ल्यू इण्डिया एण्ड दी यूनाइटेड स्टेटसः द कोल्ड पीस बोस्टनः एम.ए. ट्वेन 1990

वाजेपयी, कांती पीत्र एण्ड कॉहन, स्टीफन साउथ एशिया आफ्टर द कोल्ड वारः इण्टनेशनल पर्सपैक्टिवस इलीनायसः यूनीवर्सिटी ऑफ इलीनायस, पीत्र 1993

बंदोपाध्याय जे. द मेकिंग ऑफ इण्डियास फारेन पालिसी बाम्बे 1970

वारन्डस डब्लू जे. इण्डिया पाकिस्तान एण्ड द ग्रेट पावर्स न्यूयार्क 1972

बाउल्स चैस्टर प्रामिसेस टू कीप : माय यीयर्स इन पबलिक लाइफ, 1941–69 न्यूयार्क 1971

– एम्बेसेडर्स रिर्पाट लन्दन 1954

– ए व्यू फ्राम न्यू दिल्ली : सलैक्टेड स्पीचेज एण्ड राइटिंग 1963–69 न्यू दिल्ली 1969

बर्क एस. एम. मेनास्प्रिंग्स आफ इण्डियाज एण्ड पाकिस्तान फारेन

पालिसीज मीनोसोटा 1974

चैलानी ब्रम्हा — न्यूक्लियर पोलिफरेशन : दी यू.एस. इण्डियन कान्फिलक्ट, दिल्ली ओरिण्न्ट लौगमैन 1993

कार्टर जिमी — कीपिंग फेथः मैमोयर्स ऑफ ए प्रेसीडेण्ट न्यूयार्क : कोलम्बिया यूनि प्रेस 1989

क्लीमर, कंटन जे. — क्वैस्ट फार फ्रीडम दी यूनाइटेड स्टेटस एण्ड इण्डियास इंडिपैन्डेन्स न्यूयार्क कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस 1995

कौर्डसमैन ऐंथनी एच. — यूत्र एस. स्टैटेजिक इन्टरैस्ट्स एण्ड दी इण्डिया पाकिस्तान मिलिटरी बैलेस न्यू दिल्ली हिमालयन बुक्स 1988

सिग्रानैली डेविड लुई — ईथिक्स, अमेरिकन फारेन पालिसी एण्ड दी थर्ड वर्ल्ड न्यूयार्क सेन्ट मार्टिन प्रेस 1993

कोनिन रिचर्ड पी. — साउथ एशिया यू एस इन्टरैस्ट्स एण्ड पालिसी इश्यूज यू. एस. लाइब्रेरी आफ कांग्रेस 1993

चतुर–शेरनी विदावती — इण्डिया यू.एस. रिलेशन्स, नई दिल्ली नेशनल पब्लिशिंग हाउस 1980

चोपड़ा, प्रान. — क्राइसिस ऑफ फारेन पालिसीः परस्पैक्टिवस एण्ड इश्यूज इलाहाबाद व्हीलर पब्लिकेशन्स 1993

चोपड़ा य.0 डी. — पैटागन शैडो ओवर इण्डिया नई दिल्ली प्रेट्रियट पब्लिशर 1985

कोहन एस.पी. (सं.) — दी सिक्यूरिटी ऑफ साउथ ऐशिया अरबेनाः यूनि, ऑफ इलीनीयस प्रेस 1987

चन्द्रशेखर, एस. — अमेरिकन एड एण्ड इण्डियाज इकोनामिक डबलपमैंट, न्यूयार्क 1965

चौधरी, सीत्र डब्ल्यू. — इण्डिया, पाकिस्तान, बांग्लादेश एण्ड मेजर पावर्स न्यूयार्क 1975

काक्स, रिचर्ड (स.) — इण्डियालाजी पालिटिक्स एण्ड पालिटिकल थ्योरी

बैलमॉट 1969

धंजल जी.एस. तारापुर, द पालिटिक्स ऑफ न्यूक्लियर एज, दिल्ली राजधानी बुक सर्विस 1992

दिनेश कुमार (सं.) डिफेस इन इन्डो यू.एस. रिलेशन्स नई दिल्ली इन्सटीट्यूट फॉर डिफेन्स स्टडीज एण्ड ऐनालिसिस 1997

दामोदरन ऐ.के.एण्ड वाजपेई यू.एस. (सं) इण्डियन फॉनेन पालिसी नई दिल्ली रेडियंट, 1990

दत्त सूबीमल विथ नेहरू इन द फोरन आफिस कलकत्ता 1977

एशवरी – जेण्ड जौन द स्टेट एण्ड द पुअरः पब्लिक पालिसी एण्ड पालिटीकल डबलपमैट इन इण्डिया एण्ड द यूनाइटेउ स्टेट्स वर्कले यूनिवर्सिटी ऑफ कैलाफोर्निया प्रेस 1993

एलरिज पी.जे. द पालिटिक्स ऑफ फारेन एड इन इण्डिया न्यू दिल्ली 1969

फीनवर्ज , रिचर्ड ई. इकानामिक रिफार्म इन थी जाइंट्स यू.एस. फारेन पलिसी एण्ड द यू.एस.एस.आर. चाइना एण्ड इण्डिया, एन. जे. ट्रांजेक्शन बुक्स 1990

फैरल राबर्ट एच (सं.) द आइजनहावर डायरीज न्यूयार्क डब्ल्यू डब्ल्यू नार्टन 1981

गूल्ड ए. एच. द होप एण्ड द रियेलिटी यू.एस. इण्डिया रिलेशंस फ्राम रूजवैल्ट टू रीगन नई दिल्ली ऑक्सफोर्ड एण्ड आई बी एच पब्लिशिंग 1993

ग्लेजर राघवन सुलोचना व ग्लेजर एन. (सं.) कौनफिलक्टिंग इमेमेजः इण्डियन एण्ड दी यूनाइटेड स्टेट्स मैरीलेण्ड रिवरडेल को 1990

गुप्ता आर.के. दी ग्रेट एनकाउटर ए स्टडी ऑफ इण्डो अमेरिकन

लिटरेरी एण्ड कल्चरल रिलेशन्स नई दिल्ली अभिनव प्रकाशन 1987

गांगुली, सुमित — औरिजिन आफ वार इन साउथ एशिया बूल्डरः बैस्टव्यू प्रेस 1986

गोस्वामी पी.के. — अप्स एण्ड डाउन्स आफ इन्डो.यू.एस. रिलेशन्स 1948–1983 मुखोपाध्याय इण्डिया 1993

गैलेब्रेथ जे. के. — एम्बेसेडर्स जर्नलः ए परसलन अकाउंट आफ द कैनेडी मीउर्स लंदन 1969

गार्डनर एल.सी. — अमेरिकन फारेन पालिसी प्रजैट टू पास्ट न्यूयार्क 1974

हैरीसन एण्ड के. सुब्रामन्यम (सं.) — सुपरपावर रीवालरी इन द इण्डियन ओसियनः इण्डियन एण्ड अमेरिकन प्रेसपैक्टिव, न्यूयार्क ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस 1989

हैरीसन एस.एस.एंड — इण्डिया एण्ड अमेरिका आफटर द कोल्डवार, वांशिगटन 1993

कैम्प ज्योफ्रे — वांशिगटन 1993

हैरीसन एस.एस. — इण्डिया एण्ड यूनाइटेड स्टेट्स न्यूयार्क मैक्मिलन 1961

हैरीसन एस.एस. — द वाइडनिंग गल्फः एशिसन नेशनलिस्ट एण्ड के. अमेरिकन पालिसी न्यूयार्क 1978

हैरी एन. अब्राहम्स — फैस्टीवल ऑफ इण्डिया इन द यूनाइटेड स्टेटस 1985 86 न्यूयार्क 1985

हिल्समैन रोजर एण्ड राबर्ट सी (सं.) — फारेन पालिसी इन द सिक्टीज द इश्यूज एण्ड दी इंस्टूमैन्टस मेरीलेंड 1965

हिल्स कारला — प्रेस कान्फेन्सः एम्बेसेडर कारला हिल्स यू.एस.टी. आर. नई दिल्ली यू.एस.आई.एस. 1991

हक महमुदूल — द रोल ऑफ दी यूनाइटेड स्टेट्स इन द इण्डिया

	पाकिस्तान कन्पिलक्ट 1947–1971 : क्वैक्ट फार स्टेबिलिटी ढाकाः अकादमिक पब्लिशरस 1992
	अमेरिकन एनकाउन्टर्स इण्डिया 1971–47 बाल्टीमोर जॉन हापकिंन्स, यूनि प्रेस 1971
हिडल डैन	पालिसी इन द इण्डो पाकिस्तान वार आफ 1971 कोलोरेडो 1977
हाल कालविन एस.	थ्योरीज ऑफ पर्सनैलिटी न्यूयार्क 1957
हैग्स बैल्स	आफ्टर नेहरू लन्दन, 1963
आयसक्स, हैरोल्ड आर.	स्कैचस ऑन अवर माइंडसः अमेरिका व्यूज ऑफ चाइना एण्ड इण्डिया, 1980
इमाम, जफर,	वर्ल्ड पावर्स इन साउथ एण्ड ईस्ट एशिया, नई दिल्ली, 1972
जैन. वी. एम. (सं.)	रिफ्लेशन्स ऑन इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी (जयपुर 89)
—	''साउथ एशिया इन दी न्यू वर्ल्ड आर्डर'' (जयपुर 1994)
—	''ट्रानजीशन एण्ड चेन्ज इश्यूज एण्ड प्रॉब्लम्स इन दी न्यू वर्ल्ड आर्डर'' (जयपुर, 1995)
जैनसन, जीन एम.	पैसेज फ्राम इण्डियाः एशियन इमिग्रेन्टस इनल नार्थ अमेरिका, न्यू हैवनः येल यूनिवर्सिटी प्रेस, 1988
जॉर्ज. एस.	एक्जीम डायमामिक्स ऑफ सर्विस एण्ड डब्लू टी ओ एन गारडेन प्रॉस्पैक्टिव, कॉमन वैल्थ पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 1996
जैन. आर. के. (सं.)	यू.एस. साउथ एशियन रिलेशन्स 1947–1982, नई दिल्लीः रेडियेण्ट पब्लिशरस, 1983
जैन. बी.एम.	एण्डिया एण्ड दी यूनाइटेड स्टेट्स 1961–1963, नई दिल्लीः रेडियेण्ट पब्लिशर, 1987
—	साउथ एशिया, इण्डिया, एण्ड यूनाइटेड स्टेट्स, जयपुर आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स 1987

–	जौहरी, आर.सी. अमेरिकन डिप्लोमेसी एण्ड इंडिपैन्डस फार इण्डिया, बाम्बे: वोरा, 1970
जगजीत सिंह (सं.)	रोड अहैड : इन्डो यू.एस. सट्रैटेजिक डायलोग, नई दिल्ली लांसर इंटरनेशनल, 1994
जैकबसन, एच. के.	द शेपिग ऑफ फॉरेन पॉलिसी, न्यूयार्क 1969
जोन्स, राय ई.	एनेजायसिंग फारेन पॉलिसी, लन्दन 1970
कक्स, डैनिस	एस्ट्रेन्जड डिमोक्रेसीज इंडिया एण्ड द यूनाईटेड स्टेट्स, 1941–1991, नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशन्स, 1993
कामथ. एम.बी.	दी यूनाइटेड स्टेट्स एण्ड इण्डिया, वांशिगटन: एम्बैसी आफ इण्डिया, 1976
कामथ पी.एम.	इन्डो–यू.एस. रिलेशन्स डायनैमिक्स ऑफ चेन्ज, नई दिल्ली साउथ एशिया पब्लिकेशन्स 1988
कपूर, हरीश	इण्डियास फारेन पॉलिसी 1942–1992 शैडोज एण्ड सब्सटेंस, नई दिल्ली सेज 1994
क्रिस कृष्णनन टी.वी. कुन्ही	द अनफ्रैन्डली फ्रैन्डस: इण्डिया एण्ड अमेरिका, नई दिल्ली इण्डियन बुक कं. 1974
कुरूपदानम, वी.जे.	फूड डिप्लोमेसी ए केस स्टडी आफ इन्डो यू.एस. रिनेशंस नई दिल्ली लांसर 1985
कौल रवि	इण्डियास, स्ट्रैटेजिक स्पैक्ट्रम, इलाहाबाद 1969
	डिप्लोमैसी इन पीस एण्ड वार: रिकलैक्शंस एण्ड रिफ्लैक्शंस, नई दिल्ली 1978
कैवी, लार्न जे.	इण्डियास क्वैस्ट फार सिक्योरिटी डिफैस पालिसीज, 1954
–	अमेरिकन डिप्लोमेसी 1900–1950 शिकागों 1951
–	मैमोपर्य 1925–1950 बोस्टन 1967
कैनेडी डी.ई.	दी सिक्योरिटी आफ सदर्न एशिया न्यूयार्क 1965
किसीजर हेनरी ए.	अमेरिकन फॉरेन पालिसी थ्री ऐसज इलाहावाद 1969

	व्हाइट हाउस यीअर्स बोस्टन 1979
कोठारी, रजनी	फुटस्टैप्स इनटू द फ्यूचर, नई दिल्ली 1974
कोठारी, शांतीलाल	इण्डियाज एमाजिर्ग फॉरेन पालिसीजः बाम्बे 1951
केन्सनर, स्टीफन, डी.	डिफैडिंग द नेशनल इन्टरेस्ट न्यू जरसी 1978
ला पीअर, बारवारा लीच	इण्डिया यू.एस. रिलेशन्स वांशिगटन डी.सी. कांगेसनल रिसर्च सर्विस 1996
लैक्सपो '93'	लीगल एण्ड फिलान्सियल आस्पैक्ट्स ऑफ डूईगं बिजनैस इन इण्डिया एण्ड यू.एस. न्यू दिल्ली आईवीएच 1994
लिमे, सातु पी.	यू.एस. इण्डियन रिलेशन्सः द परस्यूट ऑफ अकोमोडेशन, वूल्डर वैस्ट प्रेस 1993
लीविस जॉन पी. एण्ड बैलेरीना के.(सं.)	यू.एस. फोरन पॉलिसी एण्ड द थर्ड वर्ल्ड अजेंडा न्यूयार्कः प्रीजर 1983
—	कैस्ट काइसिस इन इण्डिया इकानामिक डबलपमेंट एण्ड अमेरिकन पालिसी बाम्बे 1970
लवैल, जॉन पी.	फारेन पालिसी इन पसविक्टिव न्यूयार्क 1970
मुकर्जी	गैट उरूग्वे राऊन्ड डवलॉपिंग कन्ट्रीज एण्ड ट्रेड इन सर्विजेज विकास पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली 1995
मैकमोहन रावर्ट जे.	द कोल्डवार ऑन द पैरीफेरीः दी यूनाइटेड स्टेट्स, इण्डिया एण्ड पाकिस्तान, न्यूयार्क, कोलंबिया यूनिवर्सिटी 1993
मैरिल डैनिस	ब्रैड एण्ड द बैलट दी यूनाइटेड स्टेट्स एण्ड इण्डियाज इकोनोमिक डवलपमेंट 1947–1963 चैपल हिल यूनिवर्सिटी आफ नार्थ कैरोलीना, प्रेस 1990
मलिक, इफ्तिकार एच.	यू.एस. साउथ रिलेशन्स 1940–1947 अमेरिकन

	एटीट्यूडस टुवार्डस द पाकिस्तान भूवमैन्ट्स हाउन्डमिल्सः मैकमिलन 1991
मानसिंह सुरजीत	इण्डियाज सर्च फॉर पावर इंदिरा गांधीज फोरेन पालिसी 1966–1982 नई दिल्ली सेग, 1984
मैलर जॉन डब्ल्यू (सं.)	इण्डिया ए राइजिंग मिडिल पावर क्लोरैडो बूल्डर 1979
मोशेवर जीवा	न्यूक्लीयर वैपन्स प्रोलीफ्रेशन इन दी इण्डियन सबकॉन्टीनैन्ट न्यूयार्क सेन्ट मार्टिन्स प्रेस 1991
मोयनिहन डेनियल पी.	एथिनिसिटी इन्टनेशनल पालिटिक्स आक्सफोर्ड ओयूपी 1993
मुदुम्बई श्रीनिवास	यूनाइटेड स्टेट्स फारेन पालिसी टुवार्डस इण्डिया 1947–1954
मैकमिलन हैरोएड	टाइम्स ऑफ फ्यूचर, लंदन 1969
	एट द एण्ड ऑफ द डे 1961–1963 लंदन 1973
मेलनबेन्स विल्फ्रेड	ईस्ट एण्ड वैस्ट इन इण्डियाज डवलपमैंट, यू.एस. 1959
मैकनमारा, राबर्ड एस.	द एसैस ऑफ सिक्योरिटी रिफ्लैक्शंस इन ऑफिस न्यूयार्क 1966
मिकसैल रेमंड एफ.	यूनाइटेड स्टेट्स प्राइवेट एण्ड गर्वनमेंट इन्वैस्टमेंट एब्रड, ओरेगन 1962
मिलिकन मैक्स एफ व रोस्ल्टो डब्ल्यू डब्ल्यू	ए प्रोपासल की टू एन इफैक्टिव फारेन पालिसी न्यूयार्क 1957
मोडलएकी ज्यौर्ज	ए थ्योरी आफ फारेन पालिसी लंदन 1962
मोयनीहन डेनियल पी.	एडेन्जरस प्लेस नई दिल्ली 1979
मिरडल गुनार	द चैलेन्ज आफ वर्ल्ड पावर्टी ए बर्ल्ड पावर्टी प्रोग्राम इन आउटलाइन लंदन 1970
नागर मुरारी लाल	इण्डो अमेरिकन लायब्रेरी कोआपरेशन कोलबिया इन्टर

नेशनल लायब्रेरी सेंटर 1991

नायर वल्देवराज — अमेरिकन ज्यो पालिटिक्स एण्ड इण्डिया न्यू दिल्ली मनोहर बुक सर्विस 1976

नंदा बी.आर. (सं.) — इडियन फारेन पालिसी द नेहरू पीअर्स न्यू दिल्ली 1976

नारायण धरम एव. वी. के. — फारेन एड एण्ड इण्डियाज इकानामिक डवलमैंट बाम्बे 1963

नसेकों युरी — जवाहर लाल नेहरू एण्ड इण्डियाज फारेन पालिसी नई दिल्ली 1977

नटराज एल. — अमेरिकन शैडो एण्ड फारेन पालिसी न्यूयार्क 1968

नेल्सन जोन एम. — इड इन्फ्युएंस फारेन पालिसी बाम्बे 1956

ओहाजुन्वा इमको — इण्डिया यू.एस. सिक्योरिटी रिलशंस 1947–1990 दिल्ली चाणक्य बब्लिकेशंस 1992

पर्लबर्ग राबर्ट एल. — फूड ट्रेड एण्ड फारेन पालिसी इण्डिया द सोवियत यूनियन एण्ड द यूनाइटेड स्टेट्स इथेका कारनैल यूनिवर्सिटी प्रेस 1985

पामर नार्मन डनवर — द यूनाइटेड स्टेट्स एण्ड इण्डिया द डायमेंसस आफ इन्फ्लूएंस न्यूयार्क प्रेजर 1984

पंण्डित वी.एल. — द स्कोप आफ हैपीनैसः ए पर्सनल मैमोयर न्यू देहली 1979

प्रसाद विश्वेश्वर — अवर फारेन पालिसी लैगेसी न्यू दिल्ली 1965

रोज बाब्बेज व सेडी गोर्डोन — इण्डियाज स्ट्रैटेजिक फ्यूचर रीजनल स्टेट ओर ग्लोबल पावर? ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस दिल्ली 1992

राना ए.पी. (सं.) — फोर डैकेड्स आफ इण्डो यू.एस. रिलेशन्स ए कम्मेमोरेटव रिट्रोस्पैक्टिव न्यू देहली यूसफै इन इण्डिया 1994

राजन, एम.एस. — वर्ल्ड अफेयर्स 1954,56 बाम्बे 1964

राजन, एम.एस. व गेदम, रत्नाकर — ग्रेट पावर रिलेशंस वर्ल्ड आर्डर एण्ड दी थर्ड इन्टनेशनल ट्रेड फाइनेन्स एण्ड स्ट्रैटेजिक प्लानिंग दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स नई दिल्ली 1995

गांगुली, एस. — वर्ल्ड गांगुली एस. न्यू दिल्ली 1981

राजकुमार एन.वी. (सं.) — बैकग्राउण्ड आफ इण्डियाज फारेन पालिसी दिल्ली 1952

रोज लिया ई एण्ड गोलसालविस — टुवर्ड ए न्यू वर्ल्ड आर्डर एडजस्टिंग इण्डिया यू एस. रिलेशंस कैलीफोर्निया यूनिवर्सिटी आफ कैनीफोर्निया 1992

रास्ट्रो वॉल्ट डब्ल्यू — आइजनहावर कैनेडी एण्ड फारेन एड आस्टिन यूनिवर्सिटी आफ टैक्सास प्रेस 1985

सान्याल मीना (सं.) — इंडोयूएस काआपरेशन इन एजुकेशन एण्ड कल्चर नई दिल्ली द अम्बेसी आफ द यूनाइटेड स्टेट्स 1988

साहा संतोष सी. — इण्डो यू. एस. रिलेशंस 1947 –1989 ए गाइट टू इन्फारमेशन सोसैंज न्यूयार्क पी लैग 1990

सैफर होवार्ड बी. — चैस्टर बाउल्सः न्यू डीलर इन रद कोल्डवार नई दिल्ली प्रेन्टिस हाल आफ इण्डिया 1993

श्री निवास सी.एस. — दी ईगल एण्ड द पीकॉक यूएस फारेन पालिसी टूवर्ड इण्डिया सिन्स इन्डिपैडेस कान ग्रीनवुड प्रेस 1995

शमुगन अरूनाचलम — इण्डियन पार्लियामेट एण्ड द यूनाइटेड स्टेटस अन्नमालाई नगर, अन्नमलाई यूनिवर्सिटी 1989

सिंह राजवीर — यू.एस. पाकिस्तान एण्ड स्ट्रैटेजिक रिलेशंस इलाहावाद चुग पब्लिकेशन्स 1986

सिंह जगजीत (सं.) — रोड अहैड इन्डो यूएस स्ट्रेटेजिक डायलोग चुग पब्लिकेशन 1986

शनहन टेरीसा एल. — थीसिस "यूनाइटेड स्टेट्स एण्ड इण्डिया स्ट्रैटेजी फार

	1990 कैलिफोर्निया नेवल पोस्टग्रेज्युएट स्कूल 1989
सिन्हा, अजय	इण्डो यू.एस. रिलेशंस फ्राम दी एमरजैस आफ द बांग्लादेश टू द असैसीनेशन ऑफ इन्द्रिरागांधी (1971 1987) पटना 1994
शर्मा एस.	फॉरेन इनवैस्टमेंट्स इन इण्डिया कलकत्ता 1951
शुरमन फैज	द लौजिक आफ वर्ल्डपावर न्यूयार्क 1968
सुलीवन माइकल पी.	इंटरनेशनल रिलेंशस थ्योरीज एण्ड एवीडैस न्यू जरसी 1976
श्रीवास्तव वी.के.	इण्डोक अमेरिकन रिलेशंस इन दी नाइनटीज इन एम.एस. रसगोत्रा आदि (सं.) इण्डियास फोरेन पालिसी
—	इन द नाइनटीज नई दिल्ली प्रेट्रियट पब्लिशर्स 1990 प्रौस्पैक्ट फार इण्डो–यूएस रिलेशन्स इन सतीश कुमार (सं.) यीअरपुर आफ इण्डियाज फारेन पालिसी नई दिल्ली टाटा मैक्ग्राहिल 1991
सैगल जे. आर.	द अनफॉट वार आफ 1962 नई दिल्ली 1979 एड टू कौलेबोरेशन ए स्टडी इन इन्डो यू. एस. इकोनामिक रिलेशंस बाम्बे 1978
थारूर शशि	रीजन्स आफ स्टेट नई दिल्ली विकास 1982 इण्डिया एण्ड अमेरिका ए स्टडी ऑफ रेयर रिलेशंस पोप्लाय एस.एल. न्यूयार्क 1958
टैवीडायर एलर्वट	पावर्टी वैल्थ आफ मैनराइंड न्यूयार्क 1978
तीवारी एस.सी.	इण्डो यू.एस. रिलेशंस 1947–1976 न्यू दिल्ली 1977
विनोद एम. जे.	युनाइटेड स्टेट्स फारेन पालिसी टुवर्ड इंडिया ए डायग्नोसिस आफ द अमेरिकन अप्रोच न्यू दिल्ली लांसर्स बुक्स 1991
वैकट रामानी एम.एस. एण्ड श्रीवास्तव वी.के.	क्विट इण्डिया दी अमेरिकन रिस्पॉस टू द 1942 स्ट्रगल न्यू दिल्ली 1979

वाल पर्ट स्टेनली — रूट्स आफ कन्फ्रंटेशन इन साउथ एशिया अफगानिस्तार, पाकिस्तान, इण्डिया एण्ड सुपर पावर्स न्यकयार्क ओ.यू.पी.1982

वौरेन सिडनी — द प्रैजीडैन्ट एज वर्ल्ड लीडर न्यूयार्क 1964

वैस्टवुड ए.एफ. — फारेन एंड इन फारेन पालिसी फ्रेमवर्क, वासिंगटन 1964

विल्कासन वेन ए. — इण्डिया पाकिस्तान एण्ड द राइज आफ चाइना न्यूयार्क 1964

वोल्फ, चार्ल्स जूनियर — फारेन एडः थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस इन सदर्न एशिया न्यू जर्सी 1960

वुडमार डराथी — हिमालयन फ्रॅंटियर्स लंदन 1964

जिविगं लारैस (सं.) — द सब कांटीनैट इन वर्ल्ड पालिटिक्स इट्स नेवर्स एण्ड ग्रेट पावर्स न्यूयार्क प्रेजर 1982

(लेख)

अययर मनीशंकर — "इंडियास फारेन आब्जैक्टिवस" वर्ल्ड फोकस 13 (11–12) नव दिस 1992

एलीसन ग्राहम टी. व — "व्यूरोक्रेटिक इम्पीकेशन्स" थ्योरी एण्ड पालिसी इन इन्टनेशनल रिलेशंस न्यूजरसी 1974, 47

अयूब मोहम्मद — "यू.एस. आसिसटेस टू पाकिस्तान 1954–65 ए केस स्टडी इन दी पालिटिक्स आफ फारेन एड, इण्डिया क्वाटरली नई दिल्ली VI,XX,III NO 2 अप्रैल–जून 1963,135,36

"इंडो–यूएस रिलेशंस आफ्टर द कोल्डवार इण्डियन जर्नल आफ अमेरिकन स्टडीज 21 (1) विन्टर 1991

बाबू वी. रमेश — "म्यूचुअज कार्पिग टू रैसीप्रोकल रैस्ट्रन्ट एण्ड वियोड

स्पेक्यूलेशंस आन द फ्यूचर आफ इन्डो यूएस रिलेशन्स'' इण्डियन जर्नल आफ अमेरिकन स्टडीज 13 (1) जनवरी 1983

बाजपेयी जी0एस0 — ''एथीकल स्टैड आन वर्ल्ड इश्यूज कार्नर स्टोन्स ऑफ इडियाज फारेन पालिसी फारेन पालिसी आफ इण्डिया ए बुक आफ रीडिंग्स नई दिल्ली 1977–91–96

बाजपेयी के शंकर — ''इडो यूएस एनिग्मा कैन रिलेशन्स कास्ट आफ दी लीगेसी आफ निगेटिविस्म ? मेनस्ट्रीम 32 (21) अप्रैल 1994

बारल जे.के. — ''दी यूएस–इंडिया न्यूक्लियर डिप्लोमेसी'' इंडियन जर्नल आफ अमेरिकन स्टडीज 14 (2) जुलाई 1984

बारन्डस डब्लू. जे. — इण्डिया और अमेरिका एट आडस इंटरनेशनल अफेयर्स (49) जुलाई 1973

भोला पी.एल. — ''इण्डो पाक कन्ट्रोल मार्च ओवर सियाचिन ग्लेशियर'' इण्डियन जर्नल ऑफ एशिसन अफेयर्स वर्ष 1 अंक 1 1988 पु 26–48 ''पाक न्यक्लीयर मोटीवेशन्स स्टेट्स एण्ड देयर इम्प्लीकेशन्स फार इण्डिया देखिये क्लीम बहादुर एण्ड उमासिंह सम्पादक पाकिस्तान ट्रांजीशन टू डेकोक्रेसी (नई दिल्ली 1989) यू 95–103

– — ''इण्डियाज परसेप्शन एण्ड रस्पीन्स टू पाकिस्तानज न्यूक्लीयर प्रोग्राम देखिए सुरेन्द्रनाथ कोशिक इत्यादि। सम्पादक इण्डिया एण्ड साउथ ऐशिया (दिल्ली 1991)

– — ''मिसाइल प्रॉलीफ्रेशन इन साउथ एशिया प्रॉब्लम्स एण्ड पोर्टेन्ट्स'', साउथ एशियन स्टडीज वर्ष 30 अंक 2 जुलाई – दिसम्बर 1945 पृ. 182–201

भास्करन आर. — ''दी फिलासाफीकल वेसिस आफ इण्डियन फारेन

पालिसी'' इंण्डियन यीअर बुक आफ इंटरनेशनल अफेयर्स (मद्रास) 1963–446–51

बवेजा हरिन्दर — ''इन्डो यूएस रिलेशन्स क्लीअरिंग द एअर इंडिया टूडे 19 (7) अप्रैल 1994

भामरी सी.पी. — ''युनाइटेड स्टेटस एण्ड इण्डिया'' वर्ल्ड फोकस 12 (3) मार्च 1991

– — ''पर्सपैक्टिव ऑन इंडो यूएस रिलेशन्स मेन स्ट्रीम 24 (20) 18 जनवरी 1986

बिदवाई प्रफुल — ''नॉन एलाइंड नो मोर इंडियाज पैसेज टू वाशिंगटन'' दी नेशन 254 (2) 1992

भूषण भारत — ''इंडिया फाइटिंग ए लोनली वैटल इन द यू.एस'' इंडियन एक्सप्रेस 2 अगस्त 1993

बॉव दिलीप — ''टर्निग द स्कूज इंडिया टुडे दिसम्बर 1993

बाउल्स चैस्टर — ''द रॉशनेल आफ यू एस असिस्टेश इन वडीलाल डागसी (सं.) टू डैकेड्स ऑफ इन्डो यूएस रिलेशन्स बाम्बे 1969

– — ''यू एस. आर्म्स टू पाकिस्तान ए ट्रैजडी ऑफ एरर्स दी वाशिंगटन पोस्ट 15 अगस्त 1971

भट्टार्चा पिनाकी — ''इंडो यूएस रिलेशंस स्ट्रेटेजिक एनालिसिस 17 (1) अप्रैल 1971

बोजमन ए.बी. — ''इंडियाज फारेन पालिसी टूडे रिफ्लैवशंस आपॉन इटस सोरसैज वर्ल्ड पालिटिक्स (प्रिसटन) जनवरी 1958, 25673

ब्रैचर माइकल — ''नौन एलाइनमैट अंडर स्ट्रैस द वैस्ट एण्ड द इण्डो चाइनावार पैसिफिक अफेयर्स विन्टर 1979–80

चद्ढा माया — ''इंडिया एण्ड द यूनाइटेड स्टेटस व्हाई डिटैटेवौट हैपन'' एशियन सर्वे 26 (10) अक्टूबर 1984

चक्रवर्ती निखिल — ''इंडो–यूएस पर्सपैक्टिवस ए हिस्टोरीकल ओवरव्यू मैन

एण्ड डवलपमेंट 7 (3) सितम्बर 1985

— "डीलिंग विथ दी यूनाइटेड स्टेट्स मेनस्ट्रीम 30 (22) 21 मार्च 1992

चक्रवर्ती पी.सी. इडियन नॉन इलाइमैन्ट एण्ड यूएल पालिसी करैट हिस्टरी (फिलाडल्फिया) मार्च 1963, 129, 341

चोपड़ा प्रान "फारेन पालिसी फार द न्यू वर्ल्ड आर्डर रैडिकल हयूमनिस्ट 57 (7) अक्टूबर 1992

— न्यू पालिटिक्स एण्ड यू. एस. मन्थली कमैट्री 31 (11), जून 1990

क्लार्क विलियम "अमेरिकन नीड्स टू अवेक टू ए न्यूली एमर्जिग इंडिया" इन्टरनेशनल हैराल्ड ट्रिव्यून 23 मार्च 1994

कोहन स्टीफन पी. (सं.) "सिम्पोजियम इण्डिया एण्ड अमेरिका टुवर्ड ए रियालेस्टिक रिलेशनशिप एशियन अफेंयर्स (15) विन्टर 1988–89

नायर बल्देवराज "यूनाइटेड स्टेटस इंडिया न्यू डाइरैक्शंस एण्ड देअर कांटैक्टस" इकोनोमिक एण्ड पालिटीकल वीकली 12 (45–46) 5–12 नवम्बर 1977

पिकरिंग टी आर " इंडिया दी यू.एस. एण्ड दी न्यू वर्ल्ड दीपायनीअर 19 दिसम्बर 1992

पुरी योगेश "इंडिया इंटैलीजोशिया ऑन इक्विटी एण्ड पैक्स अमेरिकाना" मेनस्ट्रीम 19 (24) 6 अप्रैल 1991

पुरी के.के. "एन.पी.टी. एण्ड इण्डो यूनाइटेड स्टेट्स रिलेशंस कौम्बेट जर्मन 19 (2) अगस्त 1992

राव नरसिन्हा "कन्टूर्स ऑफ एमर्जिर्ग वर्ल्ड (लैक्चर एट हारवोर्ड) मेनस्ट्रीम 32 (28) मार्च 1994

राव अरवी आरसी सर्चिगं फार ए मैच्योर रिलेशनशिप दी यूनाइटेड स्टेट्स एण्ड इंडिया राउंड टेबल (263) जुलाई 1976

शर्मा रितु इंडियास एनाटमी एण्ड अमेरिकन असिस्टेंस पालिटीक्स

आफ अनईवन इक्लेशन स्ट्रैटेजिक एनालिसिस 14 (7) अक्टूबर 1991

श्रीवास्तव वी.के. — इण्डो अमेरिकन रिलेशंस सर्च फार ए न्यू इक्वेशन'' इन्टनेशनल स्टडीज 30 (2) अप्रैल – जून 1993

सिंह के. आर. — ''पावर विदाउट ग्रेटनैस'' सेमीनार (381) मई 1991

सिंह जसवंत — ''कैपिंग एण्ड आल दैट नॉन प्रोलीफरेशन मिलाइन्स एण्ड इन्डो यू.एस रिलेशन्स फ्रंट लाइन 11(11) मई–जून 1994

सिंह एस. निहाल — ''कैन द यू एस. एण्ड इंडिया वी रीअल फ्रेण्डस एशियन सर्वे (23) सितम्बर 1993

थोमस राजु जी.सी. — ''प्रास्पैक्टस फा इंडो यू.एस. सिक्योरिटी टाईज औरविस (27) समर 1983

– ''स्ट्रैटैजिक रिलेशनशिप इन सदर्न एशिया डिफरैसेज इन इंडियन एण्ड अमेरिकन पर्सपैक्टिव्ज एशियन सर्वे (21) जुलाई 1981

– ''यू एस. ट्रासफर ऑफ डयूअल यूज टैक्नालॉजी टू इडिया एशिसन सर्वे (30) सितम्बर 1990

वैकटेश्वरन ए.पी. — ''न्यू पैराडिग्मस इन इन्डो –यू एस. रिलेशन्स वर्ल्ड फोकस 12 (11–12) नवम्बर – दिसम्बर 1991

विनोद एम. जे. — ''एटीट्यूड टूवर्ड इंडिया कन्ट्रास्टिंग एप्रोचेज ऑफ दी चूनाइटेड स्टेट्स एण्ड दी सोवियत यूनियन इंडिया कवार्टरली 46 (1) जनवरी–मार्च 1990

''क्लिंटन एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड इन्डो यू.एस. टाईस'' मेनस्ट्रीम 31 (11) जनवरी 1993

जुत्शी अमर — ''इंडो यू.एस. मिलिटरी टाय–अप मेनस्ट्रीम 30 (7) दिसम्बर 1991

(3) शोधपत्रिकाओं और समाचार पत्रों की सूची

एशियन सर्वे

एशियन प्रोफाइल

अमेरिकन पालिटीकल सांइस रिब्यू

पैसाफिक हिस्टोरीकल रिब्यू

करैट हिस्टरी

कैपीटल

को –एक्जिस्टेंस

कामर्स

इन्टनेशनल स्टडीज

इन्टनेशनल अफेयर्स मास्को

फोरेन अफेयर्स न्यूयार्क

आउट लुक

ईर्स्टन इकोनोमिस्ट

इकोनोमिक वीकली

इकोनोमिक टाइम्स

न्यू आउटलुक

फॉरेन अफेयर्स

इण्डिया क्वार्टरली

फाइनेन्स एक्सप्रेस

जर्नल आफ अमेरिकन हिस्टरी

जर्नल आफ अमेरिकन स्टेडीज

इण्डिया इन्टनेशनल सेन्टर क्वार्टरली

इन्टनेशनल सिक्योरिटी

इण्डियन जर्नल आफ पालिटीकल सायंस

इन्टनेशनल रिलेशंस

न्यू टाइम्स

पैसीफिक अफेयर्स

पॉलिटिक्स

राउंड टेबल

मेनस्ट्रीम

पालिटीकल चेन्ज

स्ट्रैटेजिक एनालिसिस

फारेन अफेयर्स

सेमीनार

स्ट्रैटेजिक डाइजैस्ट

टोरबिस

द वाशिंगटन पोस्ट

द क्वार्टरली रिब्यू

द पब्लिक ओनीनियन क्वार्टरली

इण्डिया टुडे

द टाइम्स ऑफ इण्डिया

द रिव्यू आफ पालिटिक्स

द आस्ट्रेलियल क्वार्टरली

द इण्डियन एक्सप्रेस

द इकोनोमिक वीकली

साउथ एशियन पॉलिटिक्स

वर्ल्ड फोकस

योजना

जापान सास्यालिसट रिब्यू

सन्डे

फ्रन्टलाइन

बिजनिस इण्डिया

स्पोर्ट स्टार

क्रोनिकल

प्रतियोगिता दर्पण

हिन्दुस्तान टाइम्स

इण्डियन एक्सप्रेस

द न्यूयोर्क टाइम्स

द पाइनिअर

स्टेट्समैन

नेशलन हैराल्ड

राष्ट्रीय सहारा

पंजाबकेसरी

जनसत्ता

अमर उजाला

दैनिक जागरण